हंसनी

डॉ. डी.एस. शुक्ला

मैत्री पब्लिकेशन्स, लखनऊ

मैत्री पब्लिकेशन्स
17, अशोक मार्ग, लखनऊ
दूरभाष : 0522-2288381, 09415102821

प्रथम संस्करण : 2017

ISBN : 978-93-84849-07-8

मूल्य : ₹ 250.00

मुद्रक
बालाजी ऑफसेट, नई दिल्ली

Hansani
by **Dr. D.S. Shukla**

समर्पण

सो उमेस मोहि पर अनुकूला। करहिं कथा मुद मंगल मूला॥

मेरे पिता स्व. उमेश दत्त जी शुक्ल-पूर्व अतिरिक्त सेशन एवं जिला जज
(1924-1988)

डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित
सभापति
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
12, सम्मेलन मार्ग, इलाहाबाद-3

'साहित्यिकी'
डी० 54, निरालानगर
लखनऊ- 226020
फोनः 0522-2788452
मो.: 945422525

शुभाशंसा

मैंने डॉ. डी.एस. शुक्ला द्वारा विरचित इस कृति का अन्त-पर्यन्त अवलोकन किया। 'हंसनी' सुन्दरता की प्रतीक है, साथ ही सात्विकता की भी। हंस का जोड़ा निष्ठा का पुण्य प्रतीक माना जाता है। यदि उसके किसी एक साथी की मृत्यु हो जाती है तो दूसरा कोई नया जोड़ा नहीं बनाता। इसीलिए युग-युग से यह युग्म दाम्पत्य का आदर्श बना हुआ है। लेखक का भी यही अभिप्रेत है।

इस संग्रह में अट्ठारह रचनाएँ हैं। प्रायः संस्मरण अत्यंत प्रबोधपरक। लेखक ने सम-विषम चरित्रों और परिस्थितियों को बड़ी बारीकी के साथ पकड़ा है, जैसे-'गुलमोहर' में वे लिखते हैं कि जब वह पैदा हुयी, तब रोयी नहीं। यह देखकर लोग रुआसे हो गये। दाई की कोशिशों से जब वह रोई तो लोग हँसने लग गये। तब से जब-जब वह रोती है तो सबको हँसाती है और हँसती है तो भी हँसाती है। सचमुच, यही सुखी जीवन का ध्येय धर्म है।

एक रचना में समता का संदेश देता हुआ लेखक कहता है कि 'अमीर और गरीब, दोनों का अन्तिम रास्ता एक ही होता है। दोनों के श्मशान भी एक जैसे ही होते हैं। भेद तो जीवन-काल में ही बरता जाता है। मृत्यु परम समानधर्मा होती है।'

इस संग्रह की विशिष्ट रचना है-''जग रोया मैं हँसा''। संत कबीर ने कहा था कि अच्छी करनी करके संसार से हँसते-हँसते विदा होना। हाँ, दूसरे तुम्हें खोकर और बिसूर करके रोयें। यही जीवन की सार्थकता है। मरणोपरान्त व्यक्ति 'देही' हो जाता है। उसकी पत्नी शव से लिपटी हुयी होती है, पर उसे देह-स्पर्श का भान नहीं होता, न ही उसके स्पर्श को पत्नी महसूस कर पाती है। कितना बड़ा क्रूर-कठोर यथार्थ है यह।

डॉ. शुक्ला ने कुछ उदारमना पात्रों के उज्ज्वल चरित्र अंकित किये हैं। इनमें एक हैं-डॉ. मुबारक प्रसाद। वे ब्राह्मणी की अर्थी में कंधा इसलिए नहीं लगाते कि कहीं एक तुर्क के स्पर्श से उसकी सद्गति बाधित न हो जाये।

इस संग्रह के कुछ कैरीकेचर्स में उच्चकोटि की व्यंग्य-व्यंजना है। 'नेतागिरी' नामक रचना में एक गुरू-घंटाल है। उनका अपना एक विराट-विलक्षण जीवन-दर्शन है। घूस को वे 'इन्वेस्टमेंट' मानते हैं। बड़े दावे के साथ समझाते हैं कि अपने कैरियर के प्रारम्भ में पुलिस को पैसा देने में जरा भी कोताही मत बरतना। यह एक 'इन्वेस्टमेंट' होगा। तुम जब शीर्ष पर पहुँचोगे तो यही पुलिस वाले तुम्हारे द्वार पर ब्रीफकेस लिये खड़े मिलेंगे। इस संग्रह की एक रचना में आयुष मनोविज्ञान चित्रित किया गया है। यह एक सच्चाई है कि लोग प्राय: अपनी करेंट फोटो न लगाकर सब जगह जवानी के चित्र प्रदर्शित करते हैं। दर्पण को भरसक नकारते हैं। सामने जाते डरते हैं। समवयस्क महिलाओं को ''माता जी'', ''बहन जी'' कहते हैं। कुछ शक्ल-सूरत से उम्रचोर दिखते हैं। स्त्रियाँ ''अल्पवयसा'' वाली मनोग्रन्थि से प्राय: पीड़ित प्रतीत होती हैं। इस विडम्बना पर डॉ. साहब ने बेधड़क और बेलाग विवेचन किया है।

कुल मिलाकर जीवन के विभिन्न अनुभव-खंडों को इनमें रूपायित किया गया है। चिकित्सक जीवन के अनुभव तो प्राय: सर्वत्र मुखर हुये हैं। ये अनुभव जुड़े हुये हैं विभिन्न संवेदनाओं से, विसंगतियों से और अन्तर्विरोधी मन: परिस्थितियों से।

प्रस्तुत आलेखों में कहानीपन, रेखाचित्र, संस्मरण, कैरीकेचर और सैटायर के मिले-जुले तत्व दिखाई देते हैं। मध्यवर्गीय मूल्यों के टूटने का दर्द इनके भीतर अनुगुंजित है। इसकी भाषा में सजीव, सुललित एवं परिमार्जित हिन्दी गद्य के चुनिंदा नमूने हैं। लेखक ने मुद्राओं के वर्णन में बड़ी सावधानी बरती है। हर रचना में कोई न कोई संदेश निहित है। समग्र रूप से यह कहा जा सकता है कि यह समूची कृति रचनाधर्मिता तथा चिंतनधर्मिता की जुगलबंदी से ओत-प्रोत है। अस्तु इस रम्य रचना के लिये मैं डॉ. शुक्ला को बधाई देता हूँ और इस 'हंसनी' का हार्दिक स्वागत करता हूँ।

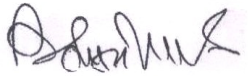

- सूर्यप्रसाद दीक्षित

पूर्ण कर दे वह कहानी, जो शुरू की थी सुनानी

डॉ. डी.एस. शुक्ला न तो मेरे लिए अपरिचित व्यक्ति हैं, और न ही अपरिचित लेखक। विगत आठवें दशक के आरंभ में जब मैं जिलाधिकारी, रायबरेली के पद पर कार्यरत था, डॉ. शुक्ला की भी वहीं तैनाती थी। अत: चिकित्सक की क्षमता से उनकी प्रतिभा एवं ख्याति से मैं लम्बे समय से सुपरिचित रहा। इधर कुछ वर्षों से मुझे डॉ. शुक्ला की कई रचनाओं को पढ़ने का सौभाग्य मिला। मैं उनकी रचनात्मक क्षमता को जानकर स्तम्भित रह गया। एक उत्कृष्ट लेखक के रूप में उन्होंने अपने को अनेक विलक्षण रचनाओं के माध्यम से सिद्ध एवं स्थापित किया है।

कहानीकार के रूप में वह एक सिद्धहस्त रचनाकार हैं। वह जीवन के आस-पास बिखरी घटनाओं और बिखरे पात्रों में अपने कथा-सूत्र को सुगमता से ढूँढ़ लेते हैं और फिर ऐसी विलक्षण कहानी रचते हैं जो हमें बहुत देर तक और दूर तक प्रभावित किये बिना नहीं रहती। कई बार तो उनकी कहानी उनके जीवन में घटित सत्य घटना पर ही आधारित होती है। जिनके संबंध में उनके सुपरिचित अनुमान लगा लेते हैं कि सिर्फ पात्रों और स्थानों के नाम बदले हुए हैं। अनुभव की प्रमाणिकता को अपने कथा-लोक के अभिन्न अंग बनाने के कारण उनकी कहानियाँ अत्यंत विश्वसनीय एवं स्वाभाविक हो उठती हैं और उनकी उत्तप्त जीवन्तता हमारे मर्म को गहराई तक छू जाती है।

कहते हैं कि हर जीवन शेष होता है तो बचती है-एक कहानी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने लिखा है कि एक दिन सभी साश्रु नयन स्मरण करेंगे और (उनके) प्रिय हरिश्चन्द्र की कहानी ही शेष रह गई है:-

''कहेंगे नैनन नीर भरि-भरि सबै,
प्यारे हरिश्चन्द्र की कहानी रह जायेगी।''

कई व्यक्तियों के जीवन में इतनी घटनाएँ एवं इतने पात्र गुँथे होते हैं कि उनके जीवन में औपन्यासिक विस्तार में कई कहानियाँ समा जाती हैं। बस दिन ढलते ही एक कहानी शुरू होती है, जो रात की गहराइयों में खो जाती है और जिसका अंत 'अज्ञात' ही रह जाता है। सुकवि 'बच्चन' की निम्न पंक्तियों पर दृष्टि डालें:-

पूर्ण कर दे वह कहानी
जो शुरू की थी सुनानी
आदि जिसका हर निशा में,
अंत चिर अज्ञात।
साथी सो न, कर कुछ बात।

कथात्मकता, संवाद, घटना-संयोजन, भाषा-शैली सभी में उत्कृष्टता के साथ कथ्य एवं शिल्प की श्रेष्ठता लिए डॉ. शुक्ला की कहानियों की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है-उनमें व्याप्त सम्मोहन। उनकी कहानियाँ हमें आरंभ से अंत तक सम्मोहन की स्थिति में बांधे रहती हैं। दृष्टान्त के तौर पर एक छोटी सी कहानी 'जग रोये मैं हँसा' को लें। इसका शीर्षक हमें कबीर के एक सुप्रसिद्ध दोहे 'कबिरा हम पैदा हुए' की स्मरण दिलाता है। कबीर का सुप्रसिद्ध कथन है, 'ऐसी करनी कर चलो हम हँसे, जग रोय'। जीवन की इससे बढ़कर पूर्णता क्या हो सकती है कि जीवनधारक हँसते हुए विदा ले और उस जीवन की इससे बड़ी सार्थकता क्या हो सकती है कि उस व्यक्ति के विदा लेने पर रिक्तता का अनुभव करते हुए सारा जग रो पड़े। अपने शीर्षक से ही एक अपूर्व जीवन-दृष्टि के प्रति हमें विमुग्ध कर लेने वाली कहानी की शुरुआत एक 'रोमान्टिक' 'शेर' के साथ होती है:

'बहुत नाज़ों से चूमा उसने लबों को मेरे बिछड़ते वक़्त,

कहने लगे कि मंजिल आखिरी है रास्ते में कहीं प्यास न लग जाये।'

मरण-प्रकरण का ऐसा अर्चभित कर देने वाला सम्मोहक कथा-विस्तार और अन्त में शव-दाह का प्रभावपूर्ण वर्णन:

''एकाएक मेरे शरीर से लपटें उठने लगीं। चारों ओर प्रकाश छा गया। शरीर भस्म हो गया। मेरी रश्मि-नाल अदृश्य हो गई। मैं स्वतंत्र हो गया। ...केवल प्रकाश ही प्रकाश...

मैं नवीन शरीर धारण करने चल पड़ा''।

यहाँ कथाकार गीता के उस अमर कथन की याद दिलाता है जिसमें यह कहा गया है कि जैसे शरीर पुराने वस्त्र को बदल लेता है वैसे ही आत्मा पुराने जरा-जीर्ण शरीर को बदल लेती है....

खलील जिब्रान के 'द प्रोफेट' की अन्तिम पंक्ति याद आ जाती है:-

''और, कुछ ही समय उपरान्त, वायु पर एक क्षण विश्राम कर लेने पर, कोई दूसरी माता मुझे धारण करेगी''।

मृत्यु प्रसंग पर ऐसी सम्मोहक कहानी रचने के लिए डॉ. शुक्ला को बधाइयाँ। इस कृति में संग्रहीत समस्त सम्मोहक कहानियों के लिए कथाकार को शत्-शत् बधाइयाँ।

आशा है, इस कृति का साहित्य संसार में सम्यक स्वागत एवं समादर होगा। साथ ही आशान्वित हूँ कि भविष्य में भी डॉ. डी.एस. शुक्ला अनेक श्रेष्ठ कृतियों के प्रयणन द्वारा साहित्य की श्रीसम्पदा में अभिवृद्धि करते रहेंगे।

(डॉ. शंभुनाथ)
पूर्व–कार्यकारी अध्यक्ष,
उ.प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ.

दिनांक 26.07.2017
1/60 विशाल खण्ड,
गोमतीनगर, लखनऊ.

शुभाशंसा

'हंसनी' में प्रकाशित 18 कहानियों में चुनिन्दा 4 कहानियाँ पढ़कर तथा मन न मानने के फलस्वरूप, प्रथम कहानी को आत्म-सात् करने के बाद, मैं यह कहने की स्थिति में अब हूँ कि लेखक एक ईमानदार कथाकार हैं-वे जो भी कैनवास पर उतारते हैं, वह सिर्फ वही होता है जो कहानी की माँग होती है, जिसे उनका साहित्यकार हृदय, पूरी तरह अनुमोदित भी करता है। **-देवकी नन्दन 'शान्त'**

'मरने के उपरान्त भी आइन्सटीन की थ्योरी का याद रहना', इच्छानुसार भ्रमण करने की शक्ति, दूसरों की आँख से अपने को, परिचितों को पहचान सकने का कौतूहल, किसी का संसार में से उठकर जाना तो किसी को उठाया जाना, रश्मि-नाल का बंधन छूटते ही स्वतंत्रता का आभास-सर्वथा नवीन अनुभव। यह 'जग रोया, मैं हँसा' का अनुपम सारांश है।

ग्लानि का अनुभव होते ही स्वयं को भी आत्म-हत्या हेतु समर्पित कर देना कितना दर्दनाक अनुभव रहा होगा, यह 'अहिफेन' (अफ़ीम) पढ़कर पाठक जान सकता है।

अफ़सर द्वारा मेयर के लिए, स्टेनो को बोला गया वाक्य, ''कि सार्वजनिक स्थलों पर बाथरूम की सुविधाओं का बहुत अभाव है अत: समुचित व्यवस्था कराने की कृपा की जाये।'' पूरी कहानी और श्री नरेन्द्र मोदी, प्रधानमंत्री के स्वच्छता अभियान में, मानवीय-जनमानस से सीधे संवाद पर गहरी चोट करने में सफल है। यह 'प्राकृतिक संवेग और स्वच्छता अभियान' कहानी का मर्म है।

'नेतागिरी' नाम की कहानी में, कैरियर एडवाइज़र द्वारा ' 'गुरू-शिष्य' संवाद का दृष्टान्त बताता है कि अन्तत: 'गुरू' स्वयं स्वीकार भी लेता है 'शिष्य' के सम्मुख, ''कि गुरू मंत्र का टैक्टिकल (Tactical) प्रयोग यही है कि वह शिष्य को स्वयं गुरू घंटाल बनने की प्रेरणा दे डाले'' जो मात्र 'नेतागिरी' में ही सम्भव है। यही इस कहानी का केन्द्र बिन्दु है।

सर्वाधिक विचार करने की बात यह है कि डॉ. डी.एस. शुक्ला, किसी भी कहानी का ताना-बाना, वैज्ञानिक (सिलसिलेवार यानी क्रमबद्ध ढंग से उसकी

विशिष्ट-ज्ञान थ्योरी) दृष्टि से करते हैं, अत: पाठक को अन्तत: संतुष्टि का अनुभव इस कारण होता है कि जहाँ कौतूहल स्वरूप सत्य को स्वीकार कर, सभ्य समाज की निगाह में अदालत द्वारा मुज़रिम को दोषी ठहरा दिया जाता है वहीं एक ऐसी दलील कि मुज़रिम 'यदि चार वर्ष के रात-दिन कठोर दण्डावधि में, उत्तम आचरण करता हुआ स्वयं को सिद्ध करने में सफल होता है', तो 'सजा घटायी भी जा सकती है', अपने आप में अनुपम न्याय है। 'र' शब्द जो 'राम' और 'रहमान' दोनों का प्रतीक है-मुजरिम ईश्वर को धन्यवाद दिये बग़ैर नहीं रह पाता।

दिनांक 18.07.2017
मो.नं.: 9935217841

देवकीनन्दन 'शान्त'
(साहित्य भूषण)

प्राक्कथन

कोई पास न रहने पर भी, जन-मन मौन नहीं रहता;
आप आपकी सुनता है वह, आप आपसे है कहता।

- मैथिलीशरण गुप्त

एकांत क्षणों का आत्मसंलाप सभी करते होंगे। लेखक इस संलाप को लिपिबद्ध कर कहानी के रूप में प्रस्तुत कर देता है।

हर कहानी में कोई तथ्य, संदेश अथवा उपयोगी शिक्षा होती है। कुछ कहानियाँ केवल मनोरंजन के लिए कही या लिखी जाती हैं।

सबसे अच्छी कहानियाँ वह बन पड़ीं, जिन्हें लोगों ने 'स्वांत: सुखाय' लिखा। ज्यादातर ऐसी रचनाएँ पाठकों के बीच नहीं आ पातीं। यदि आती हैं तो अद्वितीय होती हैं। हमारे शास्त्र इसी श्रेणी की रचनाएँ हैं।

वास्तव में अनुभव और कल्पना को एक सूत्रबद्ध तरीके से प्रस्तुत करने को ही कहानी कहते हैं। अनुभव तो हम सबको रोज़मर्रा की जिंदगी में मिलते रहते हैं। जब ऐसे अनुभव या उससे मिलते-जुलते अनुभव को हम किसी कहानी में पाते हैं तो हमारा ''आनंद द्विगुणित हो जाता है; हम पात्रों के साथ सम्बन्ध स्थापित करते हैं। पात्रों के सुख से हम सुखी होते हैं, पीड़ा से दु:खी होते हैं।''

प्रस्तुत कहानी संग्रह 'हंसनी' ऐसे ही अनुभवजन्य तथ्यों और कल्पना का मिश्रण है।

पिछली पुस्तक 'कही अनकही कहानियाँ' पाठकों को अच्छी लगीं। अधिकतर लोगों की जिज्ञासा थी सर्जरी से साहित्य की ओर रुझान कैसे हुआ?

सही माने में तो यह रुझान कैसे हुआ, मुझे भी नहीं मालुम। ऐसे प्रश्नों के उत्तर देने में जब हम अक्षम होते हैं तो इसे प्रारब्ध या बड़ों के आशीर्वाद का फल मानते हैं।

मेरी पूजनीय स्व. जननी और दादी के नाम क्रमश: 'विद्या' और 'सरस्वती' था। दादी 'वाणी' उपनाम से बृज भाषा में कविता भी करती थीं। सौभाग्य से मेरी माता का नाम 'वीणा' है। मैं मानता हूँ कि साहित्य के क्षेत्र में मेरी युति इन्हीं त्रिदेवियों के आशीर्वाद का फल है।

हालाँकि, कुछ मित्रों ने तो मसखरी में कमेन्ट किया ''शायद बागवान' फिल्म देखने के बाद ही डॉक्टर शुक्ला ने सहम कर लेखन प्रारम्भ किया।''

क्या करें मित्रों को सब माफ है।

प्रस्तुत कहानी-संग्रह भी डॉक्टर सूर्यप्रसाद दीक्षित विख्यात शिक्षक एवं साहित्यकार एवं डॉक्टर शंभुनाथ (आई.ए.एस. पूर्व मुख्य-सचिव उ.प्र. शासन एवं कार्यकारी अध्यक्ष हिन्दी संस्थान उ.प्र.) के मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन से संभव हो सका। उनका आभार शब्दों में व्यक्त करने में अपने को मैं असफल पाता हूँ।

मेरे अभिन्न मित्र श्री आर.सी. श्रीवास्तव तथा पुत्रवत् मित्र श्री दिव्यरंजन पाठक के बहुमूल्य सहयोग एवं सुझाव के लिए कितना ऋणी हूँ, आशा करता हूँ कि वे जानते होंगे।

मेरी पत्नी ने इस कृति की किसी भी रचना का मूल्यांकन तो क्या, अवलोकन भी नहीं किया। शायद वह बेरुखी द्वारा मुझसे बैसाखी छुड़ाना चाहती हैं। जो हो, मेरा कल्याण ही उसका इष्ट होगा, ऐसा विचार कर उसका आभार व्यक्त करता हूँ।

भारत बुक सेण्टर लखनऊ, जिसके प्रकाशक श्री वीरेन्द्र कुमार बाहरी जी अब पूर्ण स्वस्थ होकर पुनः काम पर लौट आए है, के सहयोग के लिए उन्हें और श्री तरुण बाहरी को कोटिशः साधुवाद।

आशा करता हूँ कि यह पुस्तक भी पिछली पुस्तक की भाँति पाठकों में अपनी जगह बना सकेगी।

- डॉ. डी.एस. शुक्ला

एक और अंदर की बात

पिछली पुस्तक 'कही-अनकही कहानियाँ' में मुझे अनजाने ही श्रेय मिल गया। कुछ सज्जनों ने तो स्वयं मुझे लेखन के लिए प्रेरित किया। जिनमें से डॉ. शुक्ला के सहपाठी डॉ. सूर्यभान* व मेरे प्रिय देवर आत्मप्रकाश मिश्र** की मैं विशेष रूप से आभारी हूँ। इन दोनों महानुभावों ने डॉ. शुक्ला को फोन पर बधाई देने के बाद, विशेष रूप से मुझसे बात कर, लिखने को प्रोत्साहित किया।

वैसे एक बात तो सभी विवाहित पुरुषों को ज्ञात होगी। नारी चाहे जितनी गुणहीन क्यों न हो, पत्नी बनते ही 'कुशल आलोचक' अवश्य बन जाती है। पिछली पुस्तक में मेरा जो भी योगदान है, वह इसी स्त्री-सुलभ गुण से संभव हो सका। कबीर जी ने कहा है ''निंदक नियरे राखिए, आँगन कुटी छवाय।'' पत्नी, जो हर पल आँगन क्या पूरे घर में विराजती है, का कर्तव्य हो जाता है कि 'निंदक धर्म' का पूरी निष्ठा से पालन करे।

कालिदास से तुलसीदास जी तक पत्नी के इसी गुण के चलते महान् बन पाये।

मैं अपना यह कर्तव्य करती रहूँगी-

ईश्वर डॉ. शुक्ला को निरन्तर ऊँचाई प्रदान करे।

- श्रीमती नीरज शुक्ल ''रानी''
पत्नी
डॉ. डी.एस. शुक्ला

* विख्यात आर्थो-सर्जन पूर्व अस्थि-रोग एम्स दिल्ली के विभागाध्यक्ष

** प्रोड्यूसर, दूरदर्शन

अनुक्रम

1.	जग रोये मैं हँसा	01
2.	अहिफेन	11
3.	किंग मेकर	25
4.	उफ! वो निगाहें	36
5.	हंसनी	40
6.	बुढ़ौती में ससुराल	68
7.	वामपंथी चश्मा	80
8.	देवालय	85
9.	प्राकृतिक संवेग और स्वच्छता अभियान	87
10.	मुझे पहचानो	92
11.	जीवन साथी	101
12.	गुलमोहर	115
13.	नेतागिरी	119
14.	'र'	127
15.	उर्मिला	137
16.	डॉ. पं. मुबारक प्रसाद	142

जग रोये मैं हँसा

इस नाज़ से चूमा उसने लबों को बिछड़ते वक़्त।
कि मंज़िल आखिरी है सफ़र में कहीं प्यास लग न जाय॥

सेवानिवृत्ति के बाद से सुबह जल्दी उठकर मार्निंग वाक पर जाने की आदत डाल ली थी। पर सुबह उठने में मुझे बहुत आलस्य होता था। मन कहता था उठो, शरीर कहता थोड़ा और सो लो। मन और शरीर के इसी ठेलमपेल में आधा घंटा निकल जाता। जब उठता तो लगता 'स्टीम नहीं बनी'। फिर भी उठता, कॉफी बनाता तब कहीं शौच से निवृत्त होकर वाक पर जा पाता। जाड़ों में ऊहापोह और बढ़ जाती। पर आज तो उठते ही बड़ा हल्का सा लगा, फूल की तरह। कोई आलस्य नहीं सो तत्काल ही प्रातः भ्रमण को निकल पड़ा। दरवाजा और गेट भी नहीं खोलना पड़ा। शायद पत्नी रात में दरवाजा बंद करना भूल गई थीं। वह बेचारी भी क्या करे, दिन भर गृह कार्य में चूर-चूर हो जाती होगी। मैं तो क्लिनिक के बहाने 11 बजे निकल लेता। उसे ही घर देखना पड़ता है। इस सहानुभूति के भाव के साथ मैं चल पड़ा। आज बहुत ऊर्जित महसूस कर रहा था, लगता जैसे जमीन पर पैर ही न पड़े हों। काफी देर घूमा पर कोई थकान नहीं। यह सोच ही रहा था कि एकाएक मुझे पत्नी के जोर से चीखने की आवाज सुनाई दी। मैं तत्काल घर आ गया पर इतनी त्वरित गति से! इस स्पीड से तो 'चपला हू चकित' हो गई होगी।

देखा पत्नी स्लीपिंग गाउन में थी और किसी से लिपट कर रो रही थी। मैं अचरज में था कि मेरे बेड पर कौन लेटा है। मैने सांत्वना देने के लिए उसके सिर पर हाथ रखा। मेरे स्पर्श का उस पर कोई असर नहीं हुआ। तभी पत्नी का हाथ हटने से बिस्तर पर पड़े उस व्यक्ति का चेहरा दिखा... अरे यह तो मैं ही हूँ। मैं अपनी ही पत्नी को अपने ही शरीर से

लिपट कर रोते बिलखते देख रहा हूँ। उसके स्पर्श का न मुझे भान हो रहा है न ही मेरे स्पर्श को वह महसूस कर पा रही थी। तो... तो... क्या मैं... 'देही'... हो गया।

जिसे अंग्रेजी में कहते हैं ''आई वाज शॉक्ड'', मैं खड़ा नहीं रह सका, बैठ गया। एकदम से फिर खड़ा हो गया। मैं एकदम निराधार बैठा था। आश्चर्य हुआ लेकिन तत्काल ही हँसी भी आ गई। मन ने कहा अब भौतिक शरीर की आदतों से बाहर आओ। अब तुम आत्मा हो। यह भाव होते ही मन हल्का हो गया।

अब तक पत्नी की चीखों का पड़ोस पर असर होने लगा। लोग घर के बाहर निकल कर आहट लेने लगे कि चीखें कहाँ से आ रही हैं। जब सबको पता चला आवाज मिसेज शुक्ला की है, लोग दौड़े, काल बेल बजने लगी, दरवाजा पीटा जाने लगा। नीचे आफिस के कर्मचारी भी आ गए। मेरी सास के बेहोश होने पर इन्हीं कर्मचारियों ने बेटे का हाथ बँटाया था। कुछ देर बाद कालबेल और दरवाजे के शोर का भान पत्नी को हुआ। दुपट्टा डाल कर आँसू बहाती हुई उसने दरवाजा खोला। सामने खड़े पड़ोसी डॉक्टर जोशी से बोली, ''देखिये, डॉक्टर साहब को क्या हो गया।''

डॉ. जोशी ने परीक्षण के बाद कहा- ''कुछ नहीं बचा। डेथ हुए एक घंटे से ऊपर हो गया। शायद सोते में ही हार्ट अटैक हुआ है।''

सभी लोग सहम गए। महिलाएँ पत्नी को सांत्वना देने लगीं। कुछ ने कहा, ''भाभी, बेटों को खबर कर दीजिये।''

पत्नी बोली, ''बच्चों को कैसे कह पाऊँगी कि पापा नहीं रहे?'' उसने अपने भांजे अनु को फोन किया, ''भैय्या, तुम्हारे मौसा जी नहीं रहे।'' वह अभी सो ही रहा था। नींद में उसे समझ में नहीं आया था, वह इन शब्दों पर विश्वास नहीं कर पा रहा था। मगर 'आती' के रोने से अनहोनी का आभास हो गया बोला, ''आती, हम लोग अभी आ रहे हैं।''

अब तक उसकी पत्नी भी जाग चुकी थी। महिलाएँ ज्यादा संवेदनशील होती हैं। उसने कहा, ''डैडी-मम्मी को एकदम से यह सूचना मत देना'' और कॉफी बनाने चली गई। खाली पेट जाना ठीक नहीं।

अनु ने डैडी से बताया, ''डैडी! आती का फोन आया है। मौसा जी की तबीयत खराब है। आईसीयू में भर्ती हैं। आप चलेंगे?''

डैडी एकदम हतप्रभ हो गए। तत्काल अपनी पत्नी को कहा, ''आशा, जल्दी से उठो। डॉ. साहब की तबीयत खराब है। आईसीयू में भर्ती हैं। हम लोगों को चलना चाहिए। रानी अकेली होगी।''

आशा तैयार हो रही थी, मगर जाने क्यों उनकी आँखों के आँसू नहीं थम रहे थे। उन्हें कुछ अनहोनी का एहसास हो रहा था। वह कुछ अनिष्ट सपना ही देख रही थी।

सब लोग गाड़ी में बैठे। सुप्रिया बच्चे को सोते से ही उठाकर गाड़ी में बैठ गई। गाड़ी जब सहारा अस्पताल की तरफ न जाकर दूसरी तरफ मुड़ी तो डैडी ने पूछा, ''क्या बलरामपुर अस्पताल में भर्ती हैं डॉक्टर साहब?''

अनु कुछ नहीं बोला ड्राइव करता रहा। जब गाड़ी इन्दिरा नगर की ओर मुड़ी तो मम्मी ने व्याकुल होकर कहा, ''हम लोग इन्दिरा नगर क्यों जा रहे हैं?''

''मौसा जी घर पर ही हैं।'' अनु ने काँपती हुई आवाज में कहा।

अब सबको असलियत का पता चल गया। सभी शोकमग्न हो गए। आशा खिड़की से बाहर झाँकने लगीं, जैसे बस चले तो उड़कर बहन के पास पहुँच जाएँ।

X X X X X

घर पहुँचने पर देखा कि पड़ोसी एकत्र थे। सभी ने इनको सहानुभूति की नजरों से देखा। ऐसे में तटस्थ लोग चेहरा पढ़ने का प्रयास करते हैं कि किसके चेहरे पर कितना दुःख है; कुछ तो बेबसी में मातमी सूरत बना कर आते हैं।

अंदर का नजारा देखते ही सबके सब्र का बाँध टूट गया। बहन ने रोते हुए छोटी बहन को गले से लगा लिया। भाईसाहब (डैडी) ने एक निगाह डालकर मृतक के सिर पर हमेशा की तरह हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। हालाँकि, वह जानते थे कि डॉक्टर साहब आशीष या आलोचना से परे हो चुके थे। फिर भी उन्होंने आदतन आशीर्वाद दिया...। ओल्ड

हैबिट्स डाई हार्ड।

अनु ने सबसे पहले अपने बड़े भाई बबलू (पीयूष) को सूचना दी, क्योंकि बबलू मौसा जी से बहुच अटैच्ड था। सामान्य होकर पीयूष की पहली प्रतिक्रिया, ''सोनू, मनु (पुत्रों) को सूचना हुई कि नहीं?''

''पता नहीं भैय्या, समझ में नहीं आ रहा किससे पूछूँ? आती का हाल तो बेहाल है।''

''उनसे पूछने की जरूरत नहीं। तुम मनु को बताओ, मैं सोनू को बताता हूँ। हाँ, मैं फौरन पहुँचने की कोशिश करता हूँ।'' पीयूष ने फोन काट दिया।

X X X X X

सोनू के मोबाइल की घंटी बजी। वह सो रहा था, बेटी भी सो रही थी। बहू भगवान् के सामने पूजा कर रही थी। दो पूरी रिंग जाने के बाद सोनू ने उठाया ''क्या है बबलू दादा, आपको नींद नहीं आती क्या?''

पीयूष ने सोनू की बात को अनसुना करते हुए गंभीरता से बोला, ''मौसा जी की तबीयत खराब है। हालत अच्छी नहीं है। तुम जल्दी लखनऊ पहुँचो।''

अर्ली मार्निंग फोन सोनू को सदैव आतंकित करते हैं। सभी लोग जानते हैं कि सोनू देर तक सोता है, प्रोफेशनल काल्स भी 9 बजे के बाद ही आते हैं। सोनू सन्न रह गया। बीमारी की सूचना मम्मी अथवा पप्पा स्वयं देते। पर सूचना बबलू दादा से मिलना किसी बड़े अनर्थ का संकेत था।

सोनू अपने पप्पा को कॉफी गौर से आब्जर्व करता था और सीखता था। उसे याद आया कि बाबा की मृत्यु पर पप्पा के चेहरे पर कष्ट तो था फिर भी कितने शांत बने रहे थे। एक बार आगे का पूरा कार्यक्रम निश्चित कर, सभी निकट संबंधियों को सूचित करके ही एकांत में फफक कर किस तरह रोये थे। सोनू ने सोचा कि अब सारी जिम्मेदारी मेरे ऊपर है सो मुझे स्वयं को शांत एवं संयत रखना होगा। मगर संयत रहना इतना आसान है क्या...? अनचाहे ही उसके आँसू निकल पड़े। वह झट से उठा हाथ-मुँह धोकर, सोती बेटी के सिर पर हाथ फेरकर बाहर

निकला। पत्नी चाय बना रही थी। सोनू ने किचन में ही बताया, ''बबलू दादा का फोन था, पप्पा बीमार हैं...'' कहकर उसका गला न चाहते हुए भी रुँध गया। गरिमा ने गैस बंद कर पूछा, ''बबलू दादा क्या लखनऊ में ही हैं?''

''पता नहीं'' सोनू सामान्य होने का प्रयास करते हुए बोला, ''तुम चाय बनाओ, बैठकर शांति से सोचते हैं।'' वह सोच रहा था कि मनु को भी सूचित करना चाहिए... पर छोटा भाई एकदम से व्यथित न हो जाए, वह स्वयं को संतुलित कर लेना चाहता था... तब तक मनु का ही फोन आ गया।

X X X X X

मनु भी बिस्तर पर ही था। अनु ने बताया कि पप्पा मौसा नहीं रहे, जल्दी लखनऊ पहुँचो। पहले मनु को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। उसे समझ में नहीं आया कि वह क्या करे। इस सूचना का प्रथम निश्चेतक प्रभाव हटने के बाद वह कंबल से सिर ढँककर रो पड़ा। रोते में उसका मस्तिष्क एकदम सुन्न था। शोक का एक ज्वार निकल जाने के बाद उसने आँखें धोईं और दीपाली से बोला, ''लखनऊ चलना है। पप्पा की तबीयत खराब है। अनु दादा का फोन आया था।''

दीपाली चिंतित होते हुए बोली, ''क्यों क्या हुआ? अभी कल ही तो फोन पर कितने अच्छे से बोल रहे थे।''

''अनु दादा से मैंने इतनी बहस तो की नहीं।'' मनु के स्वर में इरिटेशन था। दीपाली को स्थिति का कुछ भान हुआ। कुछ देर बाद बोली, ''भैय्या से बात हुई?''

मनु बोला, ''तुम जल्दी से तैयारी करो मैं भैय्या से बात करके जल्दी से जल्दी निकलने का इंतजाम करता हूँ।''

X X X X X

''हाँ, मनु।''

''भैय्या, कुछ सूचना मिली?''

''हाँ, पप्पा की तबीयत खराब है। बबलू दादा का फोन आया था। हम लोग चलने की तैयारी कर रहे हैं।''

थोड़ी देर तक दोनों तरफ सन्नाटा रहा। शायद दोनों अपने दर्द को एक दूसरे से छिपाने के लिए अपने को संयत कर रहे थे।

मनु बोला, ''भैय्या तुम अपने एजेंट से प्लेन के 6 टिकट बुक करने को बोलो। यदि यहाँ से नहीं तो बड़ौदा से बुक करा लो।''

सोनू बोला, ''हाँ, देखता हूँ। सबसे पहले एक या दो टिकट हो जाएँ तो यह लोग नेक्स्ट फ्लाइट से भी आ सकते हैं।'' कहकर सोनू ने फोन रख दिया। दोनों भाई एक दूसरे का सहारा पाकर कुछ सुकून महसूस कर रहे थे। तभी फोन की घंटी बजी।

सोनू ने अच्छी खबर की आशा से फोन उठाया। ''सोनू मैं चेन्नई से दिल्ली होते हुए लखनऊ पहुँचूँगा। तुम्हारा क्या प्रोग्राम बना?'' बबलू की आवाज में कोई सांत्वना नहीं थी।

''दादा, हम लोग प्रयास कर रहे हैं, हो सकता है दिल्ली में आपसे मुलाकात हो सके।''

X X X X X

तभी एक झटके से मैं अपने भौतिक शरीर के पास लौट आया। बार-बार मैं क्यों इस जीर्ण शरीर के पास आ-जा रहा हूँ। मुझे सबका रोना देखा नहीं जाता। मैं कहीं दूर चला जाना चाहता हूँ। पर नहीं; मैंने बड़े गौर से देखा... एक बहुत ही पतली नीली प्रकाश-रश्मि से मैं अपने भौतिक शरीर की नाभि से जुड़ा था। यही 'रश्मि-बंध' मुझे शरीर से विलग नहीं होने दे रहा था। आत्मीयों के दु:ख की पीड़ा झेलना भी संभवत: 'शरीर' की नियति होती है। फिर मुझे याद आया कि एक क्षण पहले मैं अहमदाबाद में अपने पुत्रों के घर के घटनाक्रम देख रहा था, दूसरे ही क्षण मैं लखनऊ कैसे पहुँच गया...? याद आया मैं अब पदार्थ (मैटर) नहीं रहा इसलिए प्रकाश की गति से अपने मोह-बंधन के कारण इधर-उधर विचर रहा हूँ। वाह... मरने के बाद भी आइंस्टीन की थ्योरी याद है। मैं मुस्कराया। मैं परशुराम की तरह 'इच्छागति' हो चुका था। (इच्छानुसार भ्रमण करने की शक्ति)।

अनु का बेटा अब तक जग चुका था। वह मुझसे काफी अटैच्ड था। मुझे देखकर पहले तो हमेशा की तरह शर्मा कर माँ से लिपटा, फिर मेरा

कोई रेस्पान्स न देख उसने तर्जनी से मेरे गाल को छूकर मुझे आकर्षित करने का प्रयास किया। दादी ने कहा, ''देखो, भैय्या से बात करना चाह रहा है।''

मेरी पत्नी ने उसे खींचकर सीने से लगा लिया। इस भोले स्नेह प्रदर्शन से सभी की आँखों में एक बार फिर आँसुओं का ज्वार आया। मेरा मन भी भीग गया। मैंने प्रार्थना की कि यदि मेरे थोड़े भी सत्कर्म हों तो हे ईश्वर, इस बालक पर वाग्देवी कृपालु हों।

कुशू को देख मुझे गुनी और विभु की याद आई। मैं अपनी इच्छा-गति से तुरंत अपनी तीसरी पीढ़ी के पास पहुँच गया। गुनी लड़की होने की वजह से समझदार थी, और विभु से बड़ी भी थी। उसको अनहोनी का कुछ-कुछ आभास हो चुका था। उसकी आँखों में आँसू थे। हो सकता है कि उसने ओवरहियर कर लिया हो। वहीं विभु अभी बहुत भोला था। एकदम इस उम्र में अपने पिता की तरह। माता-पिता को शोकाकुल देख माँ से पूछा, ''मम्मा, आप सब रो क्यों रहे हो? हमलोग एकदम से लखनऊ क्यों जा रहे हैं। अबकी तो लखनऊ जाने का कोई प्रोग्राम ही नहीं था।''

माँ बोली, ''हाँ बेटा, तुम्हारे दादू की तबीयत खराब है। तभी हम लोग जा रहे हैं।''

''दादू अच्छे आदमी हैं, वह अच्छे हो जायेंगे।'' विभु ने माँ को सांत्वना दी। वह अपनी माँ को दु:खी नहीं देख सकता था।

''भगवान् करे बेटा तुम्हारी बात सच हो।'' कहकर माँ ने प्यार से उसे हृदय से चिपका लिया।

X X X X X

अनु का मोबाइल बजा। सोनू था। ''अनु दादा! पप्पा के मोबाइल पर जितने कान्टैक्ट हों उन्हें एसएमएस कर इस घटना की सूचना दे दीजिए। हमलोग शाम तक पहुँच रहे हैं।''

मैसेज करके अनु ने मोबाइल रखा ही था कि वह बज उठा। डॉ. जुबेरी की आवाज आई, ''कैसे और कब हो गया यह सब?''

''अलसुबह सोते में ही। किसी को पता ही नहीं चला।'' तभी बाबी

ओर बिक्कू (पुत्र समान चचेरे भाई) की भी काल आने लगी। अनु ने इग्नोर किया। जुबेरी साहब से बोला ''जी सर।''

डॉ. जुबेरी बोले, ''डॉ. शुक्ला साहब अपने मरने के बाद अपनी आँखें दान करना चाहते थे। यह जिम्मेदारी मुझे सौंप गये थे।'' फिर कुछ रुककर ''भाभीजी तो इस कंडीशन में ही नहीं होंगी कि कुछ बता सकें। बेटे कहाँ हैं?''

''उनको सूचना मिल गई है, पर इतनी दूर से आने में कुछ समय तो लगेगा।''

डॉ. जुबेरी बोले, ''ठीक है, मैं एक घंटे बाद फोन करता हूँ। डॉ. साहब की आखिरी ख्वाहिश पूरी होनी चाहिए।''

रिंग फिर बजी। बाबी का फोन ''कौन बोल रहा है?''

''मैं अनु हूँ चाचा।''

''तुम पहुँच गये, बहुत ठीक। हम और बिक्कू भी पहुँच रहे हैं।''

मन, बुद्धि, कर्मफल ही प्रारब्ध रूप में आत्मा के साथ जायेंगे।

X X X X X

एकाएक सुगबुगाहट हुई नेत्रदान हेतु टीम आ गई। परिवार वाले कुछ विचलित हुए, पर मृतक की इच्छा का सम्मान करना ही था। सबको हटा दिया गया। आँख की झिल्ली (कार्निया) सुरक्षित कर ली गई। विकृति से बचाने के लिए आँखों में पलकों के नीचे एक प्रोस्थेसिस रख दी गई जिससे आँखों का स्वाभाविक उभार मेंटेन रहे। विचार आया कि क्या मैं किसी दूसरे की आँखों से अपने परिचितों को देख पहचान सकूँगा? शायद नहीं। कार्निया तो कंटेक्ट लेंस की भाँति है इसमें स्मृति नहीं होती।

बच्चों को प्लेन मिल गया था पर साँझ होने के पहले नहीं आ सकते थे। सो शरीर फ्रीजर-काफिन में सुरक्षित कर दिया गया। काफी देर हो चुकी थी। आत्मीय जन आते जा रहे थे, उनके आगमन के साथ शोक और क्रंदन का ज्वार फिर उसे उभाड़ता था। यह क्रम चलता रहा। मैं कुछ नहीं कर सकता था। सो बोर होने लगा। वाकई बगैर किसी एक्शन के मात्र दृष्टा बनना बड़ा उबाऊ होता है। सोचने लगा जो पत्नी घर में लौटने में जरा भी विलंब होने पर व्याकुल हो जाती, फोन पर फोन करने लगती,

अब कैसे धीरज रखेगी? अपना पूरा ध्यान रख पायेगी? फिर सोचा तुम पहले व्यक्ति तो नहीं हो जिसकी मृत्यु हुई हो, जैसे सब रह लिए वैसे यह भी रह लेगी। गुजरते समय के साथ ही विस्मृति जीवन को सामान्य करती है। रेलगाड़ी चलती जाएगी, मुझे यहीं पर उतरना था। लंबी दूरी के टिकट वाले दूर जायेंगे पर रेलगाड़ी चलती रहेगी। यही नियम है।

साँझ हो चुकी थी तभी फोन आया कि बच्चे लखनऊ एयरपोर्ट पर पहुँच गए हैं। एक घंटे में घर पहुँच जायेंगे। सबको कुछ सांत्वना तो हुई पर, बेचैनी एक बार फिर बढ़ गई।

मुझे याद आयी कबीर की कविता 'वह दुनिया मेरे बाबुल का घर' शायर ने लिखा है-

'तू भी घर को चली,
मैं भी घर को चला।
फ़र्क इतना सा था,
तू उठ के गई मुझे उठाया गया।'

X X X X X

सब लोग शव अब अन्त्येष्टि स्थल पर पहुँचने वाले थे। मुझे सब जाना पहचाना लग रहा था। कितनी ही बार अन्यों की अंतिम यात्रा में मैं सम्मिलित हो चुका था। अब आज कंधों पर जाने की मेरी बारी थी। अर्थी को जमीन पर रखा गया। कुछ परिचित वहाँ पहले से मौजूद थे। उन्होंने भी मुझे प्रणाम किया। कुछ मुझसे ज्येष्ठ भी थे; कोई फर्क नहीं पड़ता। मुझे पूर्वजों में स्थान मिल चुका था।

शरीर विद्युत शव दाह प्लेटफार्म पर अर्थी समेत रखा जा चुका था। मन में घर का हाल जानने की इच्छा हुई पर... यह क्या मैं जहाँ का तहाँ ही रहा... मेरी इच्छा गति समाप्त हो चुकी थी। मेरी रश्मि नाल बहुत छोटी हो गई थी। मैं बंधन महसूस कर रहा था। तभी आवाज आई ''ज्येष्ठ पुत्र इनके बंधन खोल दे।'' बड़े बेटे ने अर्थी की रस्सियाँ खोलीं, छोटे ने सहायता की। अब कुछ राहत महसूस हुई। अंतिम दान के बाद सभी ने फिर प्रणाम किया। प्लेटफार्म स्लाइड किया और मैं दहन कक्ष में आ गया। एकाएक मेरे शरीर से लपटें उठने लगीं। चारों ओर प्रकाश छा गया।

शरीर भस्म हो गया। मेरी रश्मि-नाल अदृश्य हो गई। मैं स्वतंत्र हो गया... केवल प्रकाश ही प्रकाश...।

फिर जैसे मैं बहुत बड़े वैकुएम द्वारा बड़ी तेजी से कहीं खींचा जा रहा था...।

'अन्यानि संयाती नरोपराणि' मैं नवीन शरीर धारण करने चल पड़ा।

●

अहिफेन

उनका नाम था राम और श्याम। सभी को लगता था कि वह अगर जुड़वाँ नहीं तो सगे भाई अवश्य होंगे। क्लास में सदैव एक साथ बैठते, स्कूल में एक साथ रहते, यहाँ तक कि कापी-किताब लेने बाजार भी एक साथ ही निकलते। इतने साथ का मतलब यह नहीं था कि दोनों जन्म से ही साथ थे। भारत-पाकिस्तान के बँटवारे में राम का परिवार पाकिस्तान से विस्थापित होकर भारत आया था, वहीं श्याम शाहजहाँपुर का ही रहने वाला था। दोनों सरकारी स्कूल में एक ही क्लास में भर्ती हुए। राम स्थानीय लड़कों की अपेक्षा लंबा-चौड़ा था और गोरा भी। वहीं श्याम औसत कद का साँवले रंग का था। नाम के अनुरूप राम मितभाषी और गंभीर था वहीं श्याम खिलंदड़ा और हँसमुख था। दोनों में पढ़ने में कुशाग्र थे, मगर श्याम कक्षा में न स्वयं पढ़ने में गंभीर होता और न ही उसकी शरारतों से क्लास के अन्य और बच्चे पढ़ पाते। मास्टर भी उसके सामने लाचार थे। जब वह श्याम को डाँटते तो श्याम कुछ ऐसी हरकत या मजाकिया बात कह देता कि मास्टर भी हँस पड़ते।

उन दोनों की शादी भी लगभग एक साथ तय हुई। श्याम जब अपने लिए लड़की देखने गया तो राम को भी अपने परिवार के साथ ले गया। लड़की सुंदर, पढ़ी-लिखी थी। माँ-बाप ने 'हाँ' कर दी पर श्याम ने 'हाँ' तब की जब राम ने कहा कि लड़की ठीक है। बात तय हो गई पर श्याम अड़ गया कि शादी की तारीख तभी तय होगी जब राम भैय्या की भी शादी तय हो जाये। लड़की वालों को भी इन दोनों के सौहार्द्र का भान था, सो उन्होंने कोई एतराज नहीं किया। राम के लिए भी श्याम के ससुराल वालों ने रिश्ता ढूँढ़ा। अब राम जब लड़की देखने गया श्याम का जाना लाजमी ही था।

आदतन राम लड़की वालों के यहाँ शांत बैठा था, वहीं श्याम के

चुटकुले सभी को गुदगुदा रहे थे। थोड़ी देर बात कामिनी आई और बड़े करीने से बैठ गई। श्याम ने फौरन चुटकी ली कहा, ''ये वाकई इतनी शांत हैं जितनी सिमटी ये बैठी हैं?'' कहकर उसने ठहाका लगाया। सभी हँसने लगे पर कामिनी कुनमुना उठी, क्योंकि श्याम अनजाने में ही सत्य- भाषण कर गुजरा था।

कामिनी पढ़ने में, व्यवहार में कुशल और सुगढ़ थी, परंतु वह खुले विचारों की लड़की थी। उसे बाँध कर नहीं रखा जा सकता था। एक बार वह जो निर्णय ले लेती तो उसे पूरा करके ही दम लेती। माँ के बहुत समझाने पर ही वह सिमटी और झुकी बैठी थी। उसे लगा उसके अभिनय को पहचान लिया गया। एक बार तो उसके मन में आया कि वह कहने वाले से पूछ ले कि भावी वर होने से आपको जो चाहे बोलने का अधिकार किसने दिया...? फिर भी वह चुपचाप नजरें झुकाये बैठी रही।

माँ ने कामिनी को लड्डू की प्लेट पकड़ा कर सबको सर्व करने को कहा। वह सबसे पहले प्लेट लेकर सामने बैठे श्याम के पास पहुँची। श्याम प्लेट से लड्डू लेने के लिए आगे झुका परंतु पता नहीं क्यों बड़े गौर से लड्डुओं को देखता ही रहा। कामिनी प्लेट लिए आँखें झुकाए खड़ी रही। ''इतनी देर से लड्डुओं में क्या देख रहे हो?'' कुछ देर बाद राम ने टोका।

श्याम लड्डुओं को देखता हुआ बोला, ''मैं इस्तेमाल करने के पहले हर चीज को गौर से देखता हूँ।'' फिर कामिनी की ओर देखकर बोला, ''इनकी तरह नहीं कि जिसके साथ जिंदगी बितानी है उस पर नजर ही न डालूँ।'' सभी हँसने लगे।

कामिनी ने एकाएक नजर उठा कर श्याम को देखा। हँसता हुआ श्याम उसे अच्छा लगा। वह भी हौले से मुस्करा दी। लड्डू सबको सर्व करके कामिनी फिर आँखे नीची करके बैठ गयी। अब उसके होंठों पर मंद हास की रेखा जरूर खिंच गई थी।

चलते समय श्याम ने कामिनी को फिर से छेड़ा, ''आपने अपने होने वाले जीवन साथी को ठीक से देख तो लिया न?''

कामिनी ने 'हाँ' में सिर हिला दिया।

X X X X X

अगले दिन कामिनी के पिता ने राम के घर जाकर वरीक्षा की। शादी की तारीख श्याम की शादी से तीन दिन पहले की तय हुई। शादी की तैयारी में दोनों तरफ के लोग व्यस्त हो गये। भारत में शादी के तमाम काम होते हैं, परंतु जिनकी शादी होती है उनसे कोई काम करने को नहीं कहा जाता है। शायद उन्हें अपने सपनों का ताना-बाना बुनने के लिए छोड़ दिया जाता है। ऐसी ही फुर्सत में कामिनी की बहन ने उसे छेड़ते हुए कहा, ''दीदी, जीजा जी कितने गोरे हैं, मेरे भांजे भी खूब गोरे होंगे। अच्छा सोचो यदि तुम्हारी शादी उस हें-हें करके हँसने वाले कल्लू श्याम से हो जाती तो... या तो सब बच्चे काले या चितकबरे होते।'' कहकर इस डर से कि दीदी एक आध धौल न जमा दे, वह हँसती हुई कमरे से बाहर भाग गई।

कामिनी एकदम सन्न हो गई...। तो क्या उसकी शादी उस नटखट श्याम से न होकर किसी और से हो रही थी? उसने तो दूसरे की ओर देखा भी नहीं, न ही किसी ने परिचय कराया...। ऐसा कैसे हो सकता है। वह तो श्याम को ही भावी वर मान, उसी को देखकर संतुष्ट हो गई थी। इतने दिनों से वह श्याम के ही सपने देखती रही थी। वह बहुत गुस्से से माँ के पास पहुँची, ''मेरी शादी किससे हो रही है?''

माँ ने हँसते हुए कहा, ''तुम्हारी शादी राम से हो रही है, जिसे देखकर ही तुमने 'हाँ' की थी। अब यह प्रश्न कैसा?''

''उस समय वहाँ दो लड़के बैठे थे, मैंने केवल साँवले वाले को देखा और उसी के लिए 'हाँ' की थी।'' कामिनी के स्वर में आक्रोश था।

माँ कुछ क्षण के लिए स्तब्ध हो गई। विस्फरित आँखों से कामिनी को देख रही थी, ''ऐसा कैसे हो गया कि तुमने श्याम को पसंद कर लिया और राम को देखा ही नहीं?''

''मुझे नज़रें झुका कर बैठने की शिक्षा तुम्हीं ने दी थी। जब वहाँ दो लड़के थे तो तुम्हें कम से कम परिचय तो कराना चाहिए था। जिसने मुझसे देखने को कहा मैंने उसी को देखा और उसी के लिए 'हाँ' की। माँ, यह तुम सोच लो मैं किसी और के साथ बँधने वाली नहीं, और यह तुम अच्छी तरह से जान लो...।'' कहकर वह तिनगती हुई अपने कमरे में आकर लेट गई।

वैसे गलती कामिनी की भी नहीं थी। जिस लड़के ने उसे जीवन साथी को देखने को कहा वह उसी को भावी पति मान बैठी। हँसमुख चपल श्याम उसे भा गया। पिछले कुछ दिनों में भावी पति के रूप में श्याम ही उसकी कल्पनाओं को सजा रहा था। अब शादी के एक दिन पहले उसके दिलो-दिमाग पर एक ऐसा पुरुष थोपा जा रहा था जिसे उसने देखा तक नहीं। घर का माहौल एकाएक ऐसा हो गया जैसे कोई बम फूटा हो। सब लोग कामिनी के स्वभाव से परिचित थे। वह जानते थे कि कामिनी की 'न' के बाद कोई उससे 'हाँ' नहीं करा सकता। अब क्या किया जाय। श्याम की तो शादी पहले ही तय हो चुकी थी। शादी की सारी तैयारियाँ होने के बाद अब राम के घर वालों से यह कैसे कहा जाय कि लड़की ने राम को देखा ही नहीं।

X X X X X

काफी विमर्श के बाद तय हुआ कि राम की फोटो कामिनी को दिखा दी जाय। उसकी बहन का कहना था कि ऐसे हैंडसम लड़के को कोई भी लड़की न नहीं कर सकती। जल्दी से राम की फोटो मँगाई गई। कामिनी को भी राम सुदर्शन लगा, मगर श्याम तो उसके दिलो दिमाग पर छा चुका था। कामिनी ने पहली बार अपने को बेबस पाया।

माँ ने समझाया, ''अब शादी रोकने में दोनों पक्षों की बदनामी होगी। फिर जब श्याम से रिश्ता हो ही नहीं सकता तो किसी और से शादी करने के बजाय राम से शादी करने में क्या हर्ज है? राम जैसा सुंदर 'वेल सेटेल्ड' लड़का कहाँ मिलेगा?''

अभी तक कामिनी ने जो चाहा उसे हासिल अवश्य किया था। मगर अंत में उसने पहली बार अपने मन के विरुद्ध 'हाँ' कर दी। परिस्थितियाँ जिन्हें बदला न जा सके, उनसे समझौता कर लेना ही जिंदगी है।

पर क्या यह समझौता कामिनी की फितरत बदल सकेगा?

X X X X X

जयमाल के समय जब कामिनी ने राम को देखा तो देखती ही रह गई। दूल्हे के वेष में राम सचमुच बहुत आकर्षक लग रहा था। उसे लगा कि माँ का कहना मानकर उसने कोई गलती नहीं की। भगवान जो करता है अच्छा ही करता है। तभी उसकी बहन कान फुसफुसाई, ''जीजी, यदि

अब भी तुम्हारे दिल में शंका हो तो जयमाल मुझे दे दो। मैं ही जीजा जी से शादी कर लूँगी।'' कामिनी चुप रही, केवल हल्के से मुस्कराई। उसका मुस्कराता प्रसन्न चेहरा देखकर सभी आश्वस्त हो गये। मेहमान आते गये। राम और कामिनी उन सबकी बधाइयाँ स्वीकार कर रहे थे।

खाने के वक्त वर-वधू के लिए अलग टेबल लगी। साथ देने के लिए कामिनी के पड़ोस में उसकी शोख बहन बैठी, इधर उधर परिवार के अंतरंग समवयस्क बैठाए गये। कामिनी ने नोटिस किया कि सामने की कुर्सी किसी विशेष अतिथि के लिए खाली थी।

''राम भैय्या और कामिनी भाभी को शादी की बहुत-बहुत शुभकामनाएं।''

कामिनी ने नजर उठाई तो जैसे उसके दिल की धड़कनें बढ़ गईं। सामने की खाली छूटी हुई कुर्सी पर हँसते हुए श्याम बैठा था। वह कामिनी से बोला, ''भाभी, तुम अपना नाम सीता क्यों नहीं रख लेतीं। राम के साथ कामिनी नाम जँचता नहीं है।''

कामिनी कुछ नहीं बोली। वह अपने दिल की बढ़ी हुई धड़कनों को संयत करने का प्रयास कर रही थी। कुछ देर बाद श्याम ने कामिनी को छेड़ता हुआ फिर बोला, ''मेरे प्रस्ताव पर आपका क्या विचार है?''

कामिनी ने देखा राम बड़े स्नेह से श्याम को देख रहा था। वह धीरे से बोली, ''श्याम जी, आप मुझे क्यों निर्वासित कराना चाहते हैं। मैं कामिनी ही ठीक हूँ।'' कामिनी ने महसूस किया कि श्याम को उत्तर देते समय उसकी आवाज काँप रही थी और कुछ साँस फूल भी रही थी। संभवत: उसके मानस में श्याम का आकर्षण फिर से जाग उठा था।

मधु-यामिनी में राम के आलिंगन में बद्ध कामिनी की बंद आँखों के आगे बार-बार श्याम का चेहरा आ जाता था। श्याम की स्मृति से आलिंगन की मधुरता द्विगुणित तो हुई, पर कामिनी को महसूस हुआ कि उसके और राम के बीच श्याम हमेशा के लिये आ गया है।

X X X X X

राम की शादी के तीसरे दिन ही श्याम की शादी हुई। राम ने बड़े भाई का रोल अदा कर श्याम की बहू के जेठ के रूप में कोंछा डाला। सभी लोग खुश थे। सभी राम-श्याम की दोस्ती की प्रशंसा कर रहे थे।

अगले दिन बहू की मुँह-दिखाई का बुलावा दिया गया था। नाते-रिश्तेदार

और आस-पड़ोस की महिलाओं ने मुँह दिखाई की रस्म अदा की। दोनों सुंदर बहुओं की उन सबने खूब तारीफ की। किसी ने मुँह खोल कर तो नहीं कहा, मगर मन ही मन सब ने कामिनी को चंद्रिका तुल्य माना। जब वह हँसती तो लगता मानों पानी के पात्र को छूकर चन्द्र किरणें बिखरने लगी हों।

अब नई दुल्हनों के नाचने की बारी आई। दोनों ही बहुएँ पहले अलग-अलग नाचीं फिर दोनों ने युगल नृत्य किया। दोनों के नाच में ऐसा सामंजस्य था जैसे वह वर्षों से एक साथ नाचने का रिहर्सल कर चुकी हों। दोनों बहुएँ खुद अपनी इस केमिस्ट्री पर चकित थीं।

एकाएक श्याम को लड़कियाँ पकड़ कर अंदर ले आईं। वह ताकाझाँकी कर रहा था। लड़कियों के समूह में यदि कोई अकेला लड़का पड़ जाए तो बस लड़के की आफत ही समझो। लड़कियों का आदेश हुआ कि चोर को नाचना पड़ेगा। श्याम तैयार था पर उसे एक पार्टनर की दरकार थी। कोई उसके साथ देने को तैयार नहीं हुआ। उसने कामिनी से कहा। कामिनी ने नीची नजर करते हुए मना कर दिया।

अगर कामिनी चाहती तो भी इस समय नाच नहीं सकती थी। श्याम के आते ही एकाएक उसकी साँसें फूलने लगी थीं, और श्याम के आमंत्रण पर तो उसके भी घुटने भी जवाब दे रहे थे। वह चुपचाप बैठी रही।

श्याम को अकेले ही नाचना पड़ा। वह अपनी किशोरावस्था की हिट पिक्चर के गाने 'पतली कमर है तिरछी नजर है' पर मटक-मटक कर नाचने लगा। लड़कियाँ वाह-वाह कर रहीं थीं। तालियाँ बजा रही थीं, वहीं कामिनी चुपचाप एकटक श्याम को देखे जा रही थी। कमर शब्द पर जब श्याम नायिका की कमर पर हाथ रखने का अभिनय करता तो कामिनी को अपनी कमर पर उसका वह हाथ महसूस होता। वह अब तक पुरुष के शृंगारिक स्पर्श से परिचित हो चुकी थी। उसका खून खौलने लगा चेहरा लाल हो गया। उसके बाद वह नाचते हुए श्याम की ओर देख ही नहीं पाई। यदि देखती तो उसका दम घुट जाता।

इस नाच के कार्यक्रम से कामिनी और उर्मिला में एक अंतरंगता ही

नहीं, बहनापा बन गया था।

घर का काम निपटाकर जब भी उन्हें फुरसत होती तो दोनों एक साथ देखी जातीं। परिवार वाले भी खुश थे कि चलो इन बहुओं की आपस में पटने से सम्बन्ध इस पीढ़ी में तो बने ही रहेंगे।

श्याम अपनी पत्नी को जरूरत से कुछ ज्यादा ही चाहता था; जिसकी वजह से कभी-कभी उसे कामिनी के व्यंग्य का निशाना बनना पड़ता। श्याम हमेशा मजाक के अंदाज में रहता था पर कामिनी के लिए भाभी जैसा सम्मान हमेशा बनाये रखता।

राम और श्याम दोनों के घर मिले हुए थे। आने जाने के लिए पीछे का दरवाजा हमेशा खुला रहता जो रात को भी बंद नहीं किया जाता था। जैसे राम और श्याम की मैत्री थी वैसी ही उनकी पत्नियों में भी निभने लगी। दोनों में मित्रता व बहनापा अधिक था। दोनों का पारिवारिक जीवन भी सुखमय था। समय के साथ दोनों वधुओं की संतानें हुई। पर इस बार श्याम का बेटा राम की बेटी से पहले पैदा हुआ। राम की बेटी राम की जैसी गोरी और सुंदर थी। लोग कहते कि बेटी की शक्ल यदि पिता पर हो तो बहुत भाग्य वाली होती है।

श्याम के बेटे का रंग थोड़ा दबा और नाक-नक्श भी साधारण थे। फिर भी कामिनी अपनी बेटी से अधिक उसके बेटे को चाहती है। दोनों बच्चे बढ़ते गए, दोनों परिवारों का स्नेह भी बढ़ता गया।

X X X X X

कहते हैं ज्यादा सुख विधाता अधिक दिनों तक नहीं देख पाता। बच्चे पाँच वर्ष के ही होंगे कि उर्मिला की अचानक मृत्यु हो गई। बच्चे जब स्कूल से लौटे तो उर्मिला मृत पाई गई। किसी की समझ में कुछ नहीं आया। मृतका का शरीर नीला पड़ गया था। किसी ने सर्प-दंश बताया और किसी ने हार्ट-अटैक से मृत्यु का कारण बताया। डॉक्टरों ने मृत्यु का कारण जानने के लिए पोस्ट-मार्टम की सलाह दी, पर घर वाले इसके लिए राजी नहीं हुए।

पत्नी की मृत्यु के बाद श्याम बुझ सा गया था। अब वह दुकान पर ज्यादा से ज्यादा समय बिताने लगा। तीनों वक़्त का खाना राम के घर पर

ही खाता। केवल सोने के लिए ही अपने घर जाता था। कामिनी की जिम्मेदारी अब और बढ़ गई थी, जिसे वह बड़े मनोयोग से निभा रही थी। अपने घर के अलावा उसे श्याम के घर की भी देखभाल करनी पड़ती थी। श्याम का बेटा अभी छोटा ही था। कामिनी के प्यार से वह जल्दी ही अपनी माँ को भूल गया। कामिनी इसके अतिरिक्त श्याम का भी पूरा ध्यान रखती। इसके लिए उसे राम का भी अनुमोदन मिला हुआ था।

इस नजदीकी से कामिनी में श्याम के प्रति अनुराग में वृद्धि हुई मगर अन्यमनस्क श्याम इससे बेखबर था। उसे कामिनी द्वारा उसकी और उसके बेटे की देखभाल एकदम स्वाभाविक लगी। आखिर, दोनों परिवारों में कोई अलगाव तो बिलकुल न था।

X X X X X

एक दिन राम काम से लौटा तो उसके सिर में भयानक दर्द था। कामिनी जब सिर में बाम लगाने पहुँची तो देखा उसका सिर तवे की तरह जल रहा है। नाप कर देखा 104^0 बुखार था। रात होने की वजह से दवा भी नहीं आ पाई। रात भर श्याम भी परेशान रहा। कामिनी और श्याम रात भर पानी की पट्टी रखते रहे। सुबह होते ही अस्पताल में दिखाया गया। डॉक्टर ने दवा दी, कुछ टेस्ट लिखे। पहले दिन से बुखार, सिरदर्द, पेट दर्द के साथ उल्टी भी शुरू हो गई। दवा भी हजम नहीं हो रही थी। टेस्ट की रिपोर्ट देखकर डॉक्टर ने टाइफाइड बताया। मात्र बुखार उतरने में ही हफ्ता भर लग गया। राम बहुत कमजोर हो गया था, अपने आप चलना फिरना भी उसे मुश्किल हो गया था। श्याम अपना काम छोड़ कर राम की सेवा में लगा रहा। जब राम अपने आप चलने फिरने लायक हुआ तभी श्याम अपने काम पर गया।

कामिनी के पिता वैद्य थे। उन्होंने राम की कमजोरी दूर करने के लिए आयुर्वेदिक औषधियों का सेवन करने की सलाह दी। कामिनी अपने पिता के यहाँ से दवा लाकर राम को खिलाती। राम के स्वास्थ्य में शीघ्र सुधार होने लगा। राम ने देखा कि कामिनी रोज उसे कोई चने के बराबर काली दवा दूध में घोल कर देती थी। एक दिन राम के पूछने पर कामिनी ने मुस्कराते हुए बताया, ''शिलाजीत।'' राम को एकाएक अपने बढ़े हुए ओज का एहसास हुआ। उसने प्रतिवाद किया और दवा को लेने से मना

कर दिया। परंतु उस रात वह सो नहीं सका और दिन भर बेचैन रहा। ऐसा ही दो तीन दिन चलने के बाद अंतत: उसे वह दवा नियमित रूप से लेनी पड़ी।

X X X X X

जबसे राम ने ताकत की दवा लेनी प्रारम्भ की तबसे उनके वैवाहिक जीवन में प्रगाढ़ता आ गई। कामिनी बहुत प्रसन्न रहने लगी। कभी-कभी एकांत में वह राम की प्रशंसा करते हुए कहती कि ऐसा ओज तो उसने विवाह के प्रारम्भिक दिनों में भी महसूस नहीं किया था। राम इन बातों से अन्यमनस्क हो उठता। वह सोचता कि जिन रंगीन रातों पर कामिनी निहाल रहती है उनके बारे में उसे कुछ भी याद क्यों नहीं रहता? रात दूध के साथ दवा लेने के पश्चात उसे जोरों की नींद आ जाती जो सुबह ही खुलती। रात में क्या हुआ उसे बिलकुल भी याद नहीं रहता। वह असमंजस में तो था पर कामिनी की प्रसन्नता को देख वह इसे भी जिंदगी का हिस्सा मानकर संतुष्ट रहने लगा।

इधर कामिनी श्याम के बेटे को अपनी खुदजाई औलाद की तरह चाहती थी। उसके एक बेटी तो थी ही पर अब श्याम के बेटे की वजह से उसे अपना परिवार पूरा लगने लगा। उसे अब किसी और संतान की चाहत नहीं थी। परंतु चाहत हो या न हो, सृष्टि अपना कार्य करती रहती है। कामिनी ने एक पुत्र को जन्म दिया। कामिनी विधाता से बिन माँगे मिले उपहार से निहाल हो गई। इस प्रसन्नता का एक कारण और था- नवजात का रंगरूप श्याम पर गया था। पड़ोस की महिलाओं का कहना था कि ऋतु-चक्र के किसी समय विशेष पर स्नान के बाद स्त्री पर जिस किसी का साया पड़ता है, गर्भस्थ शिशु उसी की अनुकृति लगने लगता है। राम और श्याम के परिवारों में इतनी प्रगाढ़ता थी कि शिशु की शक्ल श्याम पर जाने पर किसी को आश्चर्य नहीं हुआ। वहीं अन्तर्मन में श्याम के प्रति अनुराग के चलते कामिनी इस संयोग से प्रसन्न थी। यदि गृह लक्ष्मी प्रसन्न हो तो पूरा परिवार प्रसन्न रहता है।

X X X X X

परंतु सुख और दु:ख जीवन में स्थायी नहीं रहते। सुख के बाद दु:ख और फिर दु:ख के बाद सुख शृंखलाबद्ध क्रम से सभी के जीवन में आते

जाते रहते हैं। यदि एक आया है तो दूसरा भी अधिक दूर नहीं होगा। सुख आनंदित करता है वहीं दु:ख विकल करता है। सुखमय पल बहुत छोटे लगते हैं वहीं दु:खद क्षण काटे नहीं कटते। सुख के बाद जब दु:ख आता है तो लोग इसे अपरिहार्य न मान कर विधाता को दोषारोपित करते हैं, अथवा किसी की बुरी नजर को दोष देते हैं।

एक दिन श्याम अपनी दुकान पर बैठा था। उसे सूचना मिली कि कामिनी का अपने पिता के घर से वापस आते समय एक्सीडेंट हो गया है। श्याम संदेश वाहक को राम के पास भेज स्वयं दुर्घटना स्थल की ओर चल पड़ा।

सड़क पर तमाशबीनों की भीड़ को ठेल कर हटाता हुआ जब वह कामिनी तक पहुँचा, तब तक एक्सीडेंट हुए काफी वक्त गुजर चुका था। कोई गाड़ी कामिनी को तेज रफ्तार से हिट करके निकल गई थी। कामिनी का शरीर औंधे मुँह बीच सड़क पर पड़ा था। उसका पर्स भी वहीं पास में खुला पड़ा था जिसका सामान सड़क पर बिखर गया था। श्याम ने जल्दी से कामिनी को सीधा किया और नाड़ी महसूस करने का प्रयास किया पर उसे हताशा ही हाथ लगी। वह तत्काल कामिनी को उठाकर अस्पताल ले गया। किसी ने कामिनी के पर्स का सामान एकत्र कर श्याम के हवाले किया जिसे उसने बड़े अनमने भाव से रख लिया। अस्पताल पहुँचते ही डॉक्टरों ने उसे मृत अवस्था में (ब्राट डेड) लाया गया घोषित कर दिया। जब तक राम पहुँचे तब तक शरीर को मार्चरी ले जाया जा चुका था।

पोस्टमार्टम हुआ, मृत्यु का कारण आई हुई चोटों को बताया गया, जो कि सभी को ज्ञात था। फिर बेकार में ही शरीर की चीड़-फाड़ क्यों...? सभी के मन में यही प्रश्न था। फिर भी यह वैधानिक बाध्यता थी।

पोस्टमार्टम के उपरांत कामिनी का अंतिम संस्कार हुआ। राम ने सभी संस्कारों को यथावत् निभाया। पाकिस्तान से विस्थापित होकर आए राम का यहाँ कोई सगा-सम्बन्धी नहीं था। मित्र तो तमाम थे पर हितैषियों के नाम पर मात्र श्याम ही था।

श्याम ने देखा कि कामिनी के न रहने के आघात से राम उबर नहीं पा रहा था। वह हमेशा खोया-खोया सा रहता, रात में सो भी नहीं पाता।

दिन भर बेचैनी और चिड़चिड़ाहट बनी रहती। दो चार दिन के बाद उसकी नाक और आँखों से लगातार पानी बहने लगा। कामिनी को याद करके बार-बार उसको रोमांच हो उठता, भूख खत्म हो गई थी। श्याम के बहुतेरा समझाने पर भी राम कष्ट से उबर नहीं सका; और एक दिन तो राम बेहोश ही हो गया। उसकी उल्टी साँसे चलता देख श्याम घबरा गया। वह फौरन डॉक्टर को बुला कर लाया। डॉक्टर ने सारी परेशानी सुनने के बाद राम की पलकें खोलकर टार्च से देखा। राम की आँखों की पुतलियाँ एकदम से सिकुड़ी थीं। डॉक्टर चिंतित हो गया। उसने पूछा, ''इन्हें कोई चोट तो नहीं लगी,'' श्याम के नकारने पर उसने चिंतित स्वर में श्याम से पूछा, ''क्या यह किसी नशे के आदी थे?''

राम और नशा... श्याम को हँसी के साथ गुस्सा भी आया, ''नहीं। चाय के अलावा इन्होंने कभी कोई मादक पदार्थ स्पर्श भी नहीं किया।''

डॉक्टर ने श्याम को बताया, ''इनकी आँख की पुतली एकदम सिकुड़ी है जो हेड इंजरी (सिर में चोट), ब्रेन-हेमरेज (मस्तिष्क में रक्त स्राव) अथवा अफीम के प्रयोग से होती है। पहले की दो संभावनाएँ न होने पर मात्र अफीम के सेवन से ही ऐसा हो सकता है। अफीम के आदी को यदि कुछ न मिले तो बिलकुल यही दशा हो जाती है। चिकित्सकीय भाषा में इसे 'विदड्राल सिम्प्टम' (नशे के आदी को नशा न मिलने की स्थिति में होने वाले शारीरिक और मानसिक कष्ट) कहते हैं। इसका इलाज भी मात्र अफीम ही है।''

श्याम इस तथ्य के उद्घाटन से हतप्रभ था। बोला, ''अब अफीम मैं कहाँ से ढूँढ़ कर लाऊँ?''

डॉक्टर ने कहा, ''मैं इन्हें मार्फीन की बहुत छोटी सी डोज देता हूँ। यदि उसका अनुकूल असर होता है तो यह एकदम ठीक हो जाएँगे।''

मार्फीन इंजेक्शन लगने के कुछ समय उपरांत ही राम की हालत सुधरने लगी। डॉक्टर ने बताया कि वह राम को प्रतिदिन घटती हुई मात्रा में अफीम का इंजेक्शन देगा जिससे बगैर नुकसान के यह नशे से मुक्त हो सकेंगे। एकाएक नशे के न मिलने से कभी-कभी मरीज की मृत्यु भी हो सकती है। इतना कहकर डॉक्टर चला गया।

होश आने पर राम ने श्याम के पूछने पर बताया कि वह कोई भी

नशा नहीं करता था, अलबत्ता कामिनी उसकी बीमारी के पश्चात् अपने पिता की बताई स्वास्थ्यवर्धक औषधि उसे नियमित रूप से दे रही थी। एक्सीडेंट वाले दिन भी कामिनी अपने पिता के यहाँ राम के लिए वह औषधि ही लेने गई थी।

यह सुन कर श्याम को एक्सीडेंट के बाद कामिनी की पर्स से मिली एक काले रंग की शीशी की याद आई। उसने फौरन कामिनी के पर्स में से वह शीशी निकाल कर दिखाई। राम ने बताया कि कामिनी उसे रोज यही दवा देती थी।

श्याम राम के घर से निकल कर कामिनी के पिता के यहाँ पहुँचा। वैद्य जी को उसने वह औषधि की शीशी दिखाकर पूछा, ''यह कौन सी औषधि है?''

कामिनी के पिता जी ने उस शीशी पर लगे लेवेल को पढ़ा- ''अहिफेन? अरे! यह तो अफीम है!'' फिर उस शीशी पर अपने ही औषधालय का नाम देखकर श्याम से पूछा, ''यह तो मेरे दवाखाने की औषधि है। तुमको कहाँ से प्राप्त हुई?''

श्याम की आँखों के सामने अंधेरा छा गया। वह वहीं पर बैठ गया, उसका मस्तिष्क शून्य हो गया। वह बगैर कुछ कहे वहाँ से उठकर चल दिया। वैद्य जी ने देखा कि श्याम की चाल में शराबियों सी लड़खड़ाहट थी।

घर पहुँच कर श्याम सिर पकड़ कर बैठ गया। ओह, इतना बड़ा षड्यंत्र! उसका सिर दर्द से फटा जा रहा था। उसे कामिनी से अधिक अपने ऊपर क्रोध और ग्लानि हो रही थी। कैसे वह भी इस दुष्चक्र में भागी बना? उसके दिमाग पर नश्तर की तरह पिछले बातें चुभने लगीं।

X X X X X

पत्नी की मृत्यु के बाद कुछ दिन तो कामिनी मुँह अंधेरे ही उठ कर श्याम के यहाँ आ जाती, वहाँ का सारा काम निपटा कर, श्याम के सोते बेटे को उठा कर अपने घर ले आती। इसके बाद वह अपने घर का काम शुरू करती। श्याम के बेटे को अपनी बेटी के साथ खिलाती-पिलाती। दोनों का ध्यान समान रूप से करती। श्याम के बेटे के हिस्से प्यार के साथ सहानुभूति का भी पुट होने से लगता था कि वह उसके बेटे को

अपनी बेटी से अधिक चाहती है।

परंतु इस तरह दो घरों के काम से कामिनी पर काफी बोझ पड़ता था। इसलिए कामिनी ने दोनों परिवारों की खाने-पीने की व्यवस्था एक ही जगह करने का निश्चय किया। श्याम का बेटा अभी छोटा था इसलिए उसे ज्यादा ध्यान देने की जरूरत थी। तय पाया गया कि राम तैयार हो श्याम के ही यहाँ नाश्ता करेगा, फिर राम और श्याम अपने काम पर निकल जायेंगे। राम रात के भोजन के पश्चात् ही अपने घर जाएगा।

इस प्रकार कामिनी का अधिकतर समय श्याम के बेटे के साथ श्याम के घर पर ही गुजरता था।

X X X X X

दुकान से लौटने के बाद एक दिन श्याम के सिर में काफी दर्द उठा था। वह ठीक से भोजन भी नहीं कर सका। राम अपनी बेटी के साथ अपने घर चला गया। कामिनी काम निबटाने के बाद ही जा सकती थी। सो काम निबटाने के बाद जाते समय कामिनी ने श्याम से सिर दर्द के बारे में पूछा। श्याम अभी भी दर्द से बेहाल था। कामिनी श्याम के सिरहाने बैठ कर उसके सिर में बाम लगाकर सिर दबाने लगी। श्याम सो गया।

उस रात बहुत दिनों के बाद श्याम को लगा कि वह उर्मिला के साथ है। इतने दिनों के बाद... उन दोनों के साथ वह हुआ जो पति-पत्नी के बीच होता है।

बहुत दिनों के बाद श्याम को इतनी अच्छी नींद आई। सुबह वह एकदम फ्रेश था। उसने धीरे से उर्मिला के मुँह पर पड़ा आँचल हटाया। उफ़्फ... यह क्या...? वहाँ उर्मिला नहीं, कामिनी लेटी थी। पश्चाताप से वह शर्मिन्दा होकर वह उठ कर जाने ही वाला था कि कामिनी ने उसका हाथ पकड़ लिया। श्याम हाथ छुड़ाकर किसी तरह वहाँ से हट जाना चाहता था, मगर कामिनी ने हाथ नहीं छोड़ा।

कामिनी ने फुसफुसाते हुए उसे बताया कि शादी के लिए जब सब उसे देखने आए थे तो कामिनी ने उसे ही वर समझ लिया था। श्याम से उसे पहली नजर में ही प्रेम हो गया था। मजबूरन उसे राम से शादी करनी पड़ी। तब से वह उसका प्रेम और ध्येय था। रात जो हुआ उसका वह पहले से ही इंतजार कर रही थी। यह सब उसने श्याम के लिए ही तो

किया था।

श्याम उस समय तो वहाँ से निकल गया। मगर उसके सब्र का बाँध अब टूट चुका था, यह बाँध जब टूटता तो महल, झोपड़ी, अच्छा, बुरा कुछ नहीं देखता। वह सबको बहा ले जाता है। यही श्याम के साथ भी हुआ। रोज रात कामिनी काम के बहाने श्याम के घर पर रुकती और सब्र का बाँध टूट जाता।

X X X X X

आज अहिफेन की असलियत खुलने पर उसकी समझ में आया कि क्यों राम को कामिनी का उसके साथ रुकने का पता नहीं चला? क्यों मरते समय उर्मिला का शरीर नीला पड़ गया था? उर्मिला की मृत्यु सर्प-दंश से नहीं हुई थी। उसकी हत्या हुई थी। अफीम देकर उसे जानबूझकर मारा गया था। कामिनी ने श्याम को पाने के लिए उर्मिला को रास्ते से हटाया, राम को अफीम का आदी बनाया जिससे वह रात भर अचेत सोता रहे...।

कुछ सालों से वह अपनी पत्नी की कातिल के साथ हमबिस्तर रहा...। भाई समान मित्र नशे का शिकार हो गया। उस महिला से उसने एक पुत्र भी उत्पन्न किया? उफ्फ! अच्छा हुआ ऐसी महिला का ऐसा दु:खद अंत हुआ। मरने के बाद चिता पर लेटी हुई कामिनी का चेहरा कितना सुंदर दिख रहा था- ''विष से भरा कनक घट जैसे।'' और वह खुद क्या था...? इन सारे कुकृत्यों की जड़ में तो वह स्वयं था। वह स्वयं पत्नी के बिना कुछ महीने भी नहीं रह सका...।

अगले दिन रोज की तरह राम अपनी दवा लेने के बाद श्याम के यहाँ नाश्ता करने पहुँचा तो श्याम शायद अभी सो ही रहा था। राम ने श्याम के कमरे का दरवाजा खोला। उसकी आँखों की पुतलियाँ एकाएक फैल गईं।

श्याम का शरीर पंखे से लटक रहा था...।

●

किंग मेकर

गौर वर्ण, ऊँचा कद, चौड़ा माथा, स्वस्थ शरीर, सफेद धोती और कुर्ता (जो सफेद होते थे पर जरूरी नहीं कि लकालक धुले ही हों)। कुर्ते के जेब में वह सदैव एक काले रंग की बोतल रखते थे जिसमें उनके अनुसार सरसइया घाट का गंगाजल रहता था। इस बोतल से हर आधे घंटे में वह गंगा मइया की जय कहकर एक-दो घूँट पीते रहते थे। यह बात दीगर है कि काली बोतल के गंगाजल के प्रभाव से ही उनकी चाल हमेशा मस्त रहती थी।

शुक्ला जी इलेक्शन लड़ाने में माहिर माने जाते थे। कैंडीडेट चाहे जितना कमजोर हो, शुक्ल जी ने 'जिसके सिर पर निज धरा हाथ, उसके सिर रक्षक कोटि हाथ' हो जाते थे; मतलब वह कैंडीडेट विजयी हो जाता था। यही कारण था कि वह नगर के चाणक्य माने जाते थे। हालाँकि, शुक्ल जी इस साम्य से बिलकुल इत्तेफाक नहीं रखते थे। उनका मानना था कि जहाँ चाणक्य को 'किंग मेकर' बनने का नशा था; वहीं वह स्वयं नशे की आपूर्ति के लिए किंग बनाते हैं। फिर हँसते हुए कहते, ''अरे भाई मैं चाणक्य की तरह काला-कलूटा हूँ क्या?'' स्वयं की सम्मति के अनुसार वे चाणक्य की अपेक्षा वासुदेव कृष्ण से अधिक साम्य रखते हैं। कृष्ण ही पांडवों को दीन-हीन स्थिति से उबार सके। मसखरे फिर भी जब उनके कृष्ण से 'रंगभेद' का जिक्र करते तो वह बताते कि चुनावों के बाद वह श्री कृष्ण से संकर्षण (बलराम) में परिवर्तित हो जाते हैं। हालाँकि, शांति काल में जहाँ बलराम मानवी हरीतिमा (भाँग) के सुरूर में रहते थे, वे स्वयं दैवी 'सुरा' (सुर देवता) में मस्त रहते हैं।

सुरा के अलावा शुक्ल जी को मालिश करवाने का भी शौक था। सुबह कसरत और प्राणायाम के बाद शुक्ल जी की एक घंटे मालिश उनके दैनिक कार्यों में सम्मिलित थी। चुनाव के दिनों में मालिश के समय

से लोग आने लगते और मालिश के साथ उनका दरबार भी अनवरत चलता रहता था। मालिश से उनके शरीर ही नहीं दिमाग में भी ताजगी आ जाती थी। चुनाव कौन लड़ेगा और उसे किस प्रकार विजयी बनाया जाय ऐसे चुनावी दाँव पेंच मालिश के समय तय होते थे।

मालिश की जिम्मेदारी मोहल्ले के ही एक नाऊ ठाकुर ने ले रखी थी। नाऊ ठाकुर शुक्ल जी का अनन्य भक्त था। कंठीधारी था सो उच्च वर्ण के उसमें सभी सद्‌गुण मौजूद थे। चुनावी सभा में चमत्कारिक युक्तियों को सुनते-सुनते उसकी बुद्धि भी पैनी हो चुकी थी। दो विकल्पों में कौन सा सटीक होगा इस पर मंथन हो रहा होता तो कभी-कभार नापित बुद्धि का सुझाव ही सर्वमान्य होता था।

एक बार वर्ण और कर्म की विशुद्धता के ठेकेदार पाठक जी ने शुक्ल जी के सुरा प्रेम को शास्त्र विरुद्ध बताते हुए इस व्यसन को त्यागने की सलाह दी। इस पर शुक्ल जी ने पाठक जी की आँखों में आँखें डालते मुस्कराते हुए, कनौजिया ब्राह्मणों में बहु-श्रुत कहावत सुनाई 'बाला पियैं पियाला, फिरौ बाला के बाला। यहाँ बाला शब्द में श्लेष अलंकार है- बाला का मतलब श्रेष्ठ तथा 'बाला के शुकुल' सबसे ऊँचे ब्राह्मण (और पाठकों से श्रेष्ठ) माने जाते हैं।

मालिश करते नाऊ ठाकुर को जोरों से हँसी आ गई। उसने हँसते हुए कहा, ''यहै तुलसीदासौ लिखा हइन- समरथ को नहिं दोष गुसाई,'' पाठक जी इस अन्योक्ति के व्यंग्य को समझ, तिलमिला कर चुप हो गए।

X X X X X

चुनाव के समय में शुक्ला जी उम्मीदवारों के लिए 'अलादीन का चिराग' हो जाते थे। इलेक्शन घोषित होते ही अभ्यर्थियों की भीड़ शुक्ल जी के यहाँ एकत्र होने लगती थी। उनके यहाँ 'फर्स्ट कम फर्स्ट सर्व' का सिद्धांत काम नहीं करता था। लोग दसियों दिन लाइन लगाए रहते। पर लाइन में लगने वाले को हर दिन दो बोतल 'गंगाजल' शुक्ला जी को अवश्य भेंट करना होता था। इस प्रकार शुक्ल जी एक इलेक्शन में साल भर का स्टाक जमा कर लेते। इलेक्शन तो लगभग हर साल ही होते रहते हैं- महापालिका चुनाव, विधानसभा, लोकसभा, उपचुनाव नगर में से कोई

न कोई हर साल कोई न कोई चुनाव अवश्य होता रहता है।

यह तो उनकी दैवी सुरा की आपूर्ति की सप्लाई का भेद था। शांति के दिनों में शुक्ल जी के पास अपनी स्वयं आजीविका का कोई साधन नहीं था, परंतु इज्जत तो थी। पहले तो उनकी कृपा से पार्षद् और बाद में मेयर के पद तक पहुँचे उनके एक भक्त उनकी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे। पर जब से शुक्ल जी की बड़ी पुत्री मेयर साहब के बेटे को ब्याह गई तब से बेटी के घर का दाना पानी शुक्ल जी के लिए वर्जित हो गया। ऐसे में उनके पड़ोसी सहाय हुए। हर रोज किसी न किसी के यहाँ से पंडित जी के यहाँ 'सीधा' पहुँच जाता था। मेयर साहब के यहाँ से गुरु दक्षिणा के रूप में वस्त्र व अन्य आवश्यकताओं की आपूर्ति फिर भी होती रहती थी। शुक्ल जी भी संतुष्ट थे, क्योंकि शास्त्रों में मनाही तो केवल खाने और पीने की ही थी न।

इन शार्ट, परिवार आसानी से पल रहा था और शुक्ल जी का दैवी शौक भी निर्बाध रूप से चल रहा था। शुक्ल जी के एक और कन्या भी थी जो सुंदर और सुशील होने के साथ पढ़ी लिखी और सद्‌गुणी भी थी। तय था कि उसका सम्बन्ध भी किसी खाते-पीते परिवार में हो ही जाएगा।

X X X X X

महापालिका का चुनाव सिर पर था। पार्षद से लेकर मेयर पद तक के प्रत्याशियों ने शुक्ला जी के यहाँ लाइन लगाना प्रारम्भ कर दिया था। अधिकतर उसी समय पहुँचना चाहते जब शुक्ल जी की मालिश हो रही हो। उसी समय शुक्ल जी के मुख में सरस्वती का वास होता है, ऐसा लोगों का मानना था।

इलेक्शन के ही मौसम में एक दिन नाऊ ठाकुर ने मालिश के समय बैठके का दरवाजा बंद करके मालिश शुरू की। शुक्ल जी को यह अजीब लगा। इसके पहले कि वह कारण पूछते, नाऊ ठाकुर स्वयं बोले, ''पंडित जी, य बताओ हम कितने दिनन ते तुम्हार सेवा कई रहेन है? तुमते हम कबौ कानी कौड़िउ लीन है का...।''

यह प्रश्न जितना अप्रत्याशित था, उतना ही सबल। सालों बाद शुक्ल जी को ध्यान आया कि यह मनुष्य इतने दिनों से उनकी नि:शुक्ल और

नि:स्वार्थ सेवा कर रहा है। 'परजा' ही सही पर उसका भी पेट है, उसकी भी कुछ आकांक्षाएँ, कुछ अपेक्षाएँ अवश्य होंगी।

इस विचार ने शुक्ल जी को अपराधबोध में डाल दिया। वह शुक्ल जी जिन्होंने आज तक अपने परिवार के बारे में स्वयं कुछ न सोचा और न कुछ करने की जरूरत समझी, आज उस नाऊ के सामने अपने को शर्मिंदा महसूस कर रहे थे। उन्होंने मालिश वाले पैर से ही उसकी पीठ सहलाते हुए पूछा, ''बात तो तू पूरी सौ टके की कर रहा है। बोल क्या चाहिए तुझे? मगर सोच समझ के ही माँगियो, मेरा हाल तुझसे छुपा नहीं है।''

इस वाक्य के द्वारा उन्होंने नाऊ को चेता दिया था कि उसे धन की अपेक्षा तो बिलकुल भी नहीं रखनी चाहिए।

नाऊ ठाकुर बोला, ''हम का जानित नहीं पंडित जी। यही बदे रोजै पंडिताइन हलकान रहती हैं। पूरब जनम के तुम्हार कउनौ पुन्न (पुण्य) अहीं जऊन ई जनम म अस मेहरिया पाये हौ, और दूसर होत तो अब तक फँसरी (फाँसी) लगाय लेत।''

पीठ पर मालिश करते हुए नाऊ बोला, ''हम तुमसे अइस चीज माँगब जउन तुम चाहौ तो फौरन दै सकत हौ।''

''अगर मैंने नहीं दिया तो तुम क्या करोगे?' शुक्ल जी ने चुहल की।

''तौ पिछले एक-एक दिन का पूरा हिसाब लेब, और आजै लेब... जानि लेव।'' उसके स्वर में आक्रोश और उद्दंडता का पुट स्पष्ट था।

अनुभवी शुक्ल जी ताड़ गए कि आज नाऊ ठाकुर 'नारद मोह' में है। यदि उसकी बात नहीं मानी तो भगवान् विष्णु की भाँति उन्हें भी भुगतना पड़ेगा। इसलिए वह लगभग मनुहार करते हुए बोले, ''हाँ, बताओ क्या चाहते हो?''

नाऊ ठाकुर ने शुक्ला जी के पैरों की चंपी करते हुए कहा, ''अबकी सरकार हमहूँ का इलेक्सन जितवाय देव।''

इतनी उच्च कामना। शुक्ल जी चौंक कर उठ बैठे।

X X X X X

अगले दिन बाबूलाल, जो कि नाऊ ठाकुर का असली नाम था, हमेशा की तरह खुले बैठके में शुक्ला जी की मालिश कर रहा था। आज चुनाव में नामांकन का अंतिम दिन था। काफी लोग अपना नामांकन दाखिल कर चुके थे। आज शुक्ला जी को तय करना था कि उनका आशीर्वाद किसके साथ होगा। प्रत्येक प्रत्याशी चापलूसी में लगा था। कुछ सवर्ण शुक्ल जी से अपनी नजदीकियाँ बयान कर रहे थे। तभी शुक्ल जी ने एनाउंस किया, **''अबकी हम बबुआ का समर्थन करेंगे।''**

सभी अवाक् रह गए। बबुआ यानि कि बाबूलाल नाई।

ब्राह्मण और ठाकुर प्रत्याशी, जो अपना नामांकन भी कर चुके थे, सबसे अधिक आहत हुए। वह कुछ विरोध करें तब तक शुक्ल जी स्वयं बोले, ''हमेशा से केवल सवर्ण ही इस वार्ड का पार्षद बन रहा है, चतुर्थ वर्ण से कोई प्रत्याशी न होने से समाज में बहुत गलत संदेश जा रहा है। हम प्रजातन्त्र में रहते हैं। प्रजातन्त्र में हर वर्ण की हिस्सेदारी होना परम आवश्यक है। अत: इस बार इस वार्ड से प्रत्याशी बाबूलाल नापित ही होंगे।''

बाबूलाल ने खड़े होकर सबको प्रणाम किया और फिर अपने सेवाकार्य में लग गए। कैंडीडेट की घोषणा हो चुकी थी। अब रुकना बेकार था सो एक-एक करके सभी लोग चलने लगे; परंतु ठाकुर साहब ने बाहर जाते समय नाऊ ठाकुर को आग्नेय दृष्टि से घूरा, और आँखों से चेतावनी सी देते हुए बाहर निकल गए।

X X X X X

शुक्ल जी का आशीर्वाद प्राप्त कर बाबूलाल निर्वाचन कार्यालय में अपना नामांकन पत्र दाखिल कर आया। नामांकन में बाबूलाल चाहता था कि शुक्ल जी उसके साथ चलें, मगर शुक्ल जी ने कहा कि अब उसे स्वयं जिम्मेदारी का निर्वहन करना सीखना होगा। यदि वह अकेले नामांकन के लिए भी नहीं जा सकता तो उसका चुनाव लड़ना ही व्यर्थ है। निर्वाचन कार्यालय में 'बाबूलाल नापित' को काफी दिक्कत हुई। सौभाग्य से वहाँ का एक मुलाजिम उसकी बिरादरी का था जो बाबूलाल को सहाय हुआ, वरना तो उसे नामांकन फार्म भी न मिल पाता। उसी की

मदद से फार्म भरा गया।

नामांकन के झमेले ने उसे इतना त्रस्त कर दिया कि यदि शुक्ला जी का भय न होता तो वह बगैर नामांकन के ही वापस चला आता। जब वह निर्वाचन दफ्तर से नामांकन करा कर लौटा तो उसका अंग-अंग टूट रहा था। लग रहा था कि वह पहाड़ खिसका कर आया है। सत्य है, थकान मेहनत से नहीं, मानसिक तनाव से आती है।

रास्ते में एक हनुमान जी का मंदिर पड़ा। बाबूलाल ने पाँच आने का प्रसाद चढ़ाया।

X X X X X

अगले दिन गोष्ठी ठाकुर साहब के यहाँ हुई। उसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य समाज के प्रतिनिधि उपस्थित हुए। विषय गम्भीर था। अभी तक केवल उच्च वर्ग के कुलीन लोगों को चुनाव लड़ने का हक प्राप्त था। इसीलिए सब बहुत उद्वेलित थे।

ब्राह्मण देवता बोले, ''बड़ा उल्टा समय आ गया है, हमारे परजा जो अभी तक हमारे घर में टहल करते थे वह अब हमारे विरुद्ध बराबरी पर चुनाव लड़ेंगे। कैसा जमाना आ गया है। गाँधी अगर कुछ दिन और जिंदा रहते तो जाने क्या कर जाते।''

ठाकुर साहब बोले, ''क्या करें पंडित जी, हमलोग ब्राह्मणों को गुरु मान कर सम्मान देते थे। इस बार यह सब तो आपकी बिरादरी के एक पंडित का ही किया धरा है। आप ही कुछ सोचो।''

''क्या सोचें, दारू की रौ में वह कब और क्या कह जाएँ कोई तय है। मगर एक बात है दिमाग का वह बहुत ही शातिर है। अगर उसने कुछ कहा है तो कुछ न कुछ तिकड़म तो अवश्य करेगा।'' फिर भृकुटी पर बल डालते हुए ''मेरे घर में तो सबका मत है कि उस कमजात के विरुद्ध उसकी श्रेणी पर आकर बराबरी से चुनाव लड़ने में चाहे हारो या जीतो, दोनों में अपमान ही है। मैं तो उम्मीदवारी से कल ही अपना नाम वापस ले लूँगा।'' पंडित जी ने अपना फैसला सुनाया।

ठाकुर साहब तैश में आ गए, उनकी मुद्रा उग्र हो उठी बोले, ''क्यों पंडित जी इज्जत केवल तुम्हारी ही है? तुम सोच रहे हो कि ठाकुर इतना

गिर जाएगा कि नाऊ से बराबरी पर चुनाव लड़ेगा?''

ठाकुर साहब के क्रोध से सभी सहम गए। इलाके के बाहुबली जो थे। ब्राह्मण देवता को अपनी चूक का आभास हुआ। उन्होंने तुरंत बात को संभाला, ''अरे ठाकुर साहब! चुनाव सोच समझकर लड़ा जाता है। उसमें लंठई नहीं चलती। सोच, समझ और विवेक से काम लेना पड़ेगा। शुकुलवा यही मारे तो कमजात क खड़ा किहिस है, हम पंचै सरमाय के अपन उम्मीदवारी वापिस लै लेई और नऊवा निर्विरोध जीति जाय।'' पंडित जी अपनापन दिखाने के लिए ठेठ बैसवारी पर उतर आए।

ठाकुर साहब का पारा कुछ कम हुआ, बोले, ''तो अब हमे करना क्या है?''

पंडित जी बोले, ''हमारे वार्ड में सवर्णों की संख्या लगभग तीन चौथाई है। अभी तक हमारे तुम्हारे बीच के चुनाव में यही वोट बँट जाते थे। मैं पिछली बार पार्षद रह चुका हूँ, इसलिए अपना नाम वापस ले रहा हूँ जिससे सवर्ण वोट बँटें नहीं। मुट्ठी भर छोटी जात वाले क्या कर लेंगे।''

ठाकुर साहब को यह गणित समझ में आ गया, ''यही ठीक है। मगर मेरा तो मन करता है कि इस स्सा...ले की हड्डी पसली एक कर के चुनाव का भूत हमेशा के लिए उतार दूँ।''

पंडित जी बोले, ''नहीं ठाकुर साहब, तुम ऐसा बिलकुल नहीं करोगे। ऐसे में तुम्हें अरेस्ट किया जा सकता है और तुम्हारी उम्मीदवारी भी कैंसिल हो जाएगी, और बाबूलाल जीत जाएगा।''

ठाकुर साहब ने पंडित जी को हाथ जोड़कर प्रणाम किया, वादा किया कि उनके पूछे बगैर वह कोई कार्य नहीं करेंगे।

X X X X X

चुनाव नजदीक आ रहे थे। शुक्ल जी की मालिश अबाध रूप से चल रही थी। बाबूलाल के इकलौते प्रतिद्वंद्वी का प्रचार जोरों पर था। बाबूलाल और उसकी पत्नी जिन घरों में काम करते थे उन्हीं से हाथ जोड़ कर सहयोग माँगते रहे। हालाँकि, वह जानते थे कि सहयोग मिलने से रहा।

एक दिन बाबूलाल से नहीं रहा गया, बोला, ''पंडित जी, अबकी जानौ तुम्हारिउ नाक कटि जाई। पंडित के बैठने ते वोटौ एकमुस्त ठाकुर

क मिल जाई। हमार का होई?''

शुक्ल जी अपने सुरूर में बड़ी-बड़ी लाल-लाल आँखों में मुस्कराते हुए बोले, ''चिंता मत करो बाबूलाल, सब अपने हिसाब से चल रहा है। तीन रोज बाद इलेक्शन है; जीतोगे तुम्हीं। एक काम करो, आज अपनी सारी बिरादरी और परिवार के साथ वार्ड में जुलूस निकालो। लोगों को पता तो चले कि तुम भी चुनाव लड़ रहे हो।''

वार्ड के लोगों ने अजूबा देखा। बाबूलाल की बिरादरी के सभी लोग अपने बीवी बच्चों के साथ जुलूस बना कर निकल पड़े। कोई भी इस जुलूस को देखने या शामिल होने नहीं निकला। सभी मन ही मन शुक्ला जी और कलयुग को कोस रहे थे। एकाएक एक मोड़ पर बाबूलाल और ठाकुर साहब का जुलूस आमने-सामने आ गये। दोनों ही पूरी आवाज में नारे लगाने लगे। सवर्णों का जुलूस उत्तेजना में था, वह सोच रहा था कि 'नीच जात' अदब से किनारे खड़े होकर उनके जुलूस को आगे निकल जाने देंगे; पर ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। बाबूलाल भीड़ का नेता बना था। वह ज्यादा जोर से नारे लगाने लगा। अंत में ठाकुरों को ही बगल से होकर निकलना पड़ा। जाते-जाते सभी बाबूलाल और उसके जुलूस को ऐसे घूर कर निकले कि जुलूस में शामिल अधिकतर लोगों के घुटने ढीले हो गए।

इसके बाद जो होना था, वही हुआ। इसके पहले कि जुलूस शुक्ल जी के घर के सामने उनके आशीर्वाद से समाप्त होता कि ''मारो सालों को, आज चुनाव का भूत इनके सिर से हमेशा के लिए उतार दो...।'' कहते हुए सवर्णों का दल हाकी डंडा लेकर पिल पड़ा। लोगों को चोटें आईं। पल भर में जुलूस तितर-बितर हो गया। केवल बाबूलाल का परिवार ही बाकी बचा। शुक्ल जी भी शोर सुनकर बाहर आ गए। बाबूलाल उनके सामने रोने लगा, ''देखो पंडित जी, तुम्हरे घर के सामने हि कित्ता बड़ा कांड हुइ गवा। अब का करी?''

शुक्ल जी के कहने पर बाबूलाल थाने पहुँचा। ठाकुर साहब वहाँ पहले से मौजूद थे। बाबूलाल को देखते ही बोले, ''मैं क्या कह रहा था थानेदार साहब, देखिये मैं यहाँ आपके साथ हूँ और यह कमजात मेरे ही खिलाफ रिपोर्ट लिखाने आया है।''

बाबूलाल की रिपोर्ट नहीं लिखी गई। उसे दरोगा ने दुत्कार कर भगा दिया।

शुक्ल जी के कहने पर घायल बाबूलाल के परिवार ने नारे लगाते हुए पूरे वार्ड में अपनी चोटों का प्रदर्शन किया। ऊँचे पत्थर के मकानों में रहते-रहते सवर्णों के दिल भी पत्थर हो जाते हैं। बाबूलाल के प्रति सहानुभूति की जगह सभी ने कहा- जूती पैर में ही शोभा पाती है या नीच के दिमाग सही करने में ही जूते की शोभा होती है।

X X X X X

इस घटना के अगले दिन चुनाव प्रचार बंद हो चुका था। मुहल्ले में अजीब भय का माहौल था। कब जाने क्या हो जाय? एकाएक पूरे मोहल्ले में कोहराम मच गया। लोगों ने सुना कि दिन दहाड़े बाबूलाल की जवान बेटी को उसके घर से अगवा कर लिया गया है। रोता कलपता बाबूलाल शुक्ला जी के पास आया। इस बार शुक्ल जी भी चिंतित हो उठे। वह स्वयं बाबूलाल के साथ थाने गए। शुक्ल जी की वजह से रिपोर्ट लिखी गई और पुलिस हरकत में आ गई।

अपहरण करने वालों के मुँह ढके थे शिनाख्त का सवाल ही नहीं। बाबूलाल इतना डर गया था कि किसी के खिलाफ नामजद रिपोर्ट भी नहीं लिखा सका। उसने मात्र इतना कहा, ''दरोगा बाबू, सिर्फ हमार बिटिया वापस दिलाय देव। हमार कोहू से दुश्मनी नहीं है।''

ऐसे सनसनी के माहौल में वोटिंग प्रारम्भ हुई। इस बार महिलाओं ने काफी संख्या में वोट डाला। ठाकुरों के घर की औरतें इस साल पहली बार वोट डालने निकली। ठाकुर साहब की ठकुराइन घर से निकली ही थी कि बाबूलाल की पत्नी उनके घर बर्तन माँजने पहुँच गई। ठकुराइन ने अचरज से पूछा- ''आज तुम कैसे? वोट डालने नहीं गई?''

नाऊन ने पल्लू से आँसू पोंछते हुए कहा, ''नहीं मालकिन, बहुत सीख मिलि गै। बाढ़ैं शुक्ला जी जौन हमरे मनई कि मति फेर दिहिन, अब तो आप लोगन के आसिरवाद ते बिटिया सही सलामत मिलि जाय यही काफी है।'' कहकर नाऊन, ठकुराइन के पैरों पर लोट गई।

नीची जात का कोई भी सदस्य आज वोट डालने नहीं निकला।

ठकुराइन पहली बार वोट देने पहुँचीं। उनका बड़ा सम्मान हुआ। लाइन के बगैर वह पीठासीन अधिकारी तक पहुँच गईं। बड़े कौतुक से उन्होंने उंगली में नीली स्याही लगवाई, अधिकारी ने उन्हें समझाया कि चुनाव में मात्र दो ही प्रत्याशी हैं। बस का निशान ठाकुर साहब का है वहीं साइकिल का निशान बाबूलाल का। जिसको भी आप वोट देना चाहें उसके सामने मुहर लगानी होगी। कर्मचारी ने अपनी ड्यूटी पूरी की।

ठकुराइन वोट और मुहर लेकर कनात के पीछे गईं। मुहर लगाते समय साइकिल के निशान पर उन्हें नाउन की रोती हुई सूरत दिखी...। दाँत पीसते हुए ठकुराइन ने साइकिल पर मुहर लगा दी।

X X X X X

बाबूलाल के घर में उस रोज चूल्हा नहीं जला। सारा परिवार रात को खाली पेट ही सोया; पर आँखों में नींद कहाँ। भोरहरे ही आँख लगी। एकाएक भीड़ की आवाज से उनकी नींद खुली, चुनाव का नतीजा आ गया होगा। बाहर भीड़... हे भगवान्! अब क्या होने वाला है... सोचकर बाबूलाल की आत्मा काँप उठी। एकाएक भीड़ अन्दर आ गयी। लोगों ने बाबूलाल को कंधे पर उठा लिया। ''बाबूलाल जिंदाबाद, हमारा पार्षद बाबूलाल... जीत गया भाई जीत गया, बाबूलाल जीत गया।'' कहते हुए भीड़ शुक्ल जी के घर की ओर चल पड़ी। शुक्ल जी ने सभी का स्वागत किया। सभी का मुँह मीठा कराया। सभी खुश थे केवल बाबूलाल गमगीन था। उसने मिठाई छुई भी नहीं।

औलाद सबको प्यारी होती है। शुक्ला जी बाबूलाल का दर्द समझ गए।

भीड़ को विदा कर शुक्ला जी बाबूलाल को अंदर ले गए। अपनी बेटी से बोले कि बाबूलाल के लिए स्पेशल मिठाई लाओ।

बेटी ने मिठाई की तश्तरी बाबूलाल के चेहरे के सामने की। बाबूलाल का मिठाई लेने का मन नहीं था मगर शुक्ला जी की बेटी लाई थी इसलिए उसने एक टुकड़ा उठाने के लिए हाथ बढ़ाया।

शुक्ला जी की बेटी का रंग तो बहुत गोरा था। आज उसके हाथ साँवले कैसे...? बाबूलाल ने सिर उठाकर चेहरा देखा।

मिठाई की प्लेट लिए उसकी ही बेटी खड़ी मुस्करा रही थी। थोड़ी देर तक बाबूलाल को लगा कि वह सपना देख रहा है।

बाबूलाल की हैरानी देखकर उसकी बेटी ने उसे आश्वस्त करते हुए कहा, ''बाबू, हमार अपहरन-वपहरन कुछौ नहीं भा। शुक्ला चाचा ही हमका अपने हियाँ बुला लिहिन रहै। हम हियाँ आराम ते रहेन।''

बाबूलाल को धीरे-धीरे अपनी पिटाई और फिर बेटी की किडनैपिंग का सत्य समझ में आ गया। उसने विस्फरित आँखों से शुक्ला जी को देखा; उसके मुँह से निकला ''पं...डि...त...।''

शुक्ला जी ने 'पंडित जी' से 'पंडित' सम्बोधन में अंतर समझा।

प्रजातन्त्र आ गया था...।

●

उफ! वो निगाहें

गर्मियों की छुट्टियाँ, सात वर्षीय बेटा खिलौना-कारों के कलेक्शन के लिए जूते के डिब्बों से मल्टीलेवेल पार्किंग बनाने में लगा था। माँ, पति के आफिस जाने के बाद गृहकार्य में व्यस्त थी। सभी कुछ आम ग्रीष्म अवकाश में मध्यवर्गीय परिवार का दृश्य। तभी एकाएक कालबेल बज उठी। आम घरों में प्रेस वाला, काम वाली बाई और मेहमानों के आने का एक निश्चित समय होता है। पर इस समय कौन...? माँ बेटे दोनों के चेहरे पर अचरज के भाव उभरे। फिर भी माँ काम छोड़कर दरवाजा खोलने चली। बेटे की निगाहों ने माँ का अनुसरण किया। माँ ने सेफ्टी चेन लगाकर दरवाजा खोला। अरे यह क्या...? वह सन्न रह गई...। उसने फुर्ती से दरवाजा खोला, उसका पति 'V' खून से लथपथ खड़ा था। शर्ट, पैंट, जूते, हाथ सभी में खून लगा था। उसने यदि हाथ से दरवाजा न पकड़ा होता तो गिर जाती। उसके घुटने एकाएक कमजोर पड़ गये। बेटा भी चीखा चिल्लाया..., ''अरे पापा को क्या हो गया?''

महिलाएँ चेहरे के भाव समझने में अधिक सक्षम होती हैं। लोग अपनी माँ या पत्नी से अपने मन के भाव नहीं छिपा पाते। पत्नी को संभलने में देर नहीं लगी क्योंकि 'V' के चेहरे पर दर्द नहीं था मात्र अवसाद ही दिखाई पड़ रहा था। वह आश्वस्त हुई, साथ ही 'V' ने आगे बढ़कर अपने बेटे को सांत्वना दी कि पापा एकदम ठीक हैं। उन्हें कुछ भी नहीं हुआ। रास्ते में एक्सीडेंट से घायल एक अंकल की सहायता करने में उनके कपड़े घायल के खून से सन गए। वे तो मात्र अपने कपड़े बदलने आए हैं। बेटा आश्वस्त हुआ, पत्नी साईं बाबा को प्रणाम कर 'V' के लिए पानी लेकर आई। 'V' ने महसूस किया कि उसे प्यास लगी है जो कि तेजी से घटते घटनाक्रम की वजह से वह महसूस ही नहीं कर पाया था।

एक तरफ पत्नी दूसरी तरफ बेटा। दोनों उसको देख रहे थे। थोड़ी देर के बाद 'V' स्वाभाविक हो परिवार को देखकर मुस्कराया। पत्नी ने हाथ सहलाते हुए कहा, ''क्या हुआ? कैसे हुआ? कुछ बताओ भी।''

''मैं रोज की तरह आफिस जा रहा था। आजकल कंपनी में बड़ी अनिश्चितता है। चार दिन लेट हो जाने पर एच-आर को कैफियत देनी पड़ती अत: हर कोई जल्दी आफिस पहुँचना चाहता है। यह सोचते हुए मैं 'सोला ओवरपास' पास पहुँचा ही था कि वहाँ पर एकत्र भीड़ पर नजर पड़ी। बाइक धीमी कर देखा कि दो लोग सड़क पर घायल पड़े थे। एक युवक था वहीं दूसरा व्यक्ति उमरदार लग रहा था। युवक तो उठकर बैठ चुका था, शायद उसके कंधे और पैर में चोट आई थी। बुजुर्ग औंधे मुँह सड़क पर पड़ा था। उसके सिर में चोट लगी थी जिससे खून बहकर सड़क पर फैला हुआ था। मैंने बाइक स्टैंड पर खड़ी की और इकट्ठी तमाशबीन भीड़ में से एक से कहा कि इन्हें अस्पताल पहुँचाना चाहिए। उसने लापरवाही से मोबाइल पर बात करते कहा कि 108 पर एंबुलेंस को सूचना मिल गई होगी। मेरे मन में दुविधा जागी, सोचा इस पचड़े में पड़ने से आफिस के लिए लेट हो जाऊँगा, तभी मेरा हाथ बाइक के पेट्रोल टैंक से छू गया। टैंक धूप की गर्मी से काफी गर्म था। मेरा हाथ जल सा गया। मुझे एकदम से ध्यान आया कि यह दोनों लोग देर से सड़क पर पड़े है। अहमदाबाद की भयानक गर्मी में जलती हुई गरम सड़क से ये कहीं जल न जाएँ, मैंने तत्काल बुजुर्ग को सीधा किया। शायद लोग किसी पहल की प्रतीक्षा कर रहे थे। मेरे बढ़ते ही दो लोगों ने आगे बढ़कर सहारा दे युवक को फुटपाथ पर बैठाया। वह दर्द से कराह रहा था।

''बुजुर्ग शायद बेहोश था या 'शाक' (सदमे) में था। सीधा होते ही उसने आँखें खोलीं। चारों ओर देखने के बाद उसने मुझे देखा। मेरा शरीर काँप गया। उसकी नजरों में दर्द, घबराहट और बेबसी थी। मुझ पर उसकी दृष्टि केन्द्रित होते ही चेहरे पर याचना और आशा के भाव उमड़े। उसे तिनके का सहारा मिलने की संभावना दिखी होगी। बुजुर्ग के सिर के आगे के बाल कम हो चुके थे, कनपटी के बाल सफेद थे। होंठ उम्र के लिहाज से मोटे, पर... उसकी आँखों में ऐसा क्या था जिसने मुझे ऊपर से नीचे तक झकझोर दिया था। मैं उसे गोद में उठा कर बीचो-बीच सड़क पर

आ गया। बुजुर्ग को गोद में लिए मेरे बीचोबीच सड़क पर आ जाने से आती हुई कार को मजबूरन रुकना पड़ा। एक व्यक्ति ने कार का पिछला गेट खोला। मैंने बुजुर्ग को पीछे की सीट पर लेटा कर कहा, ''बाबू जी, घबराइए नहीं, मामूली चोट है अभी अस्पताल पहुँच कर सब ठीक हो जाएगा।''

''उसके होंठ हिले पर आवाज नहीं निकली''

''तभी घायल युवक भी लंगड़ाता हुआ कार के पास आ गया जिसे लोगों ने आगे की सीट पर बैठा दिया।''

कार वाले ने बड़ी चिंता के साथ पूछा, ''इन्हें कहाँ ले जाना है? मैं इस शहर के लिए नया हूँ।''

''यहीं आगे सरकारी अस्पताल है, वहीं पहुंचा दीजिये तो शायद इनकी जिंदगी बच जाय। आपकी कार के आगे-आगे मैं अपनी बाइक से चलूँगा। आप केवल मुझे फालो करते हुए आ जाइये।'' कहकर मैंने अपनी बाइक स्टार्ट की।''

''अभी तक असंवेदनशील बनी पब्लिक को जैसे चेतना आ गई। कार के आगे मेरी बाइक के चलते ही सभी ने तालियाँ बजा कर मेरा और कार वाले का अभिनंदन किया। मगर मेरा ध्यान उस वरिष्ठ जन की सुरक्षा पर था। मैं आगे-आगे चल पड़ा।''

''इमरजेंसी के पोर्टिको में पहुँचते ही तत्काल स्ट्रेचर उपलब्ध हो गया। वे घायल युवक को व्हीलचेयर व बुजुर्ग को स्ट्रेचर पर लिटा कर चिकित्सा-कक्ष की ओर ले गये।''

''तब तक वे बुजुर्ग काफी आश्वस्त हो चुके थे। उन्हें लगा होगा कि अब वह ठीक होकर अपने परिवार से मिल सकेंगे। मैं उनके साथ स्ट्रेचर पर हाथ रखे चल रहा था। एकाएक बुजुर्ग ने मेरा हाथ पकड़ गुजराती भाषा में कुछ कहा जिसे मैं समझ नहीं सका। मैंने झुककर पूछा, ''जी''।

''थैंक यू सन'' कह कर उन्होंने मुझे बड़े प्यार से देखा उनकी वह निगाह...। वह निगाह मुझे फिर जानी पहचानी लगी। ओह, ऐसा मुझे क्यों लग रहा था?''

पत्नी ने देखा 'V' के होंठ अचानक सुबकने की मुद्रा में गोल हुए, ठोढी कँपकँपाई और वह तेजी से दोनों हाथों से मुँह ढाँप कर सिसकता

हुआ लिविंग-रूम में चला गया और दरवाजे को अंदर से बंद कर लिया।

बेटा परेशान हो गया। माँ से पूछा, ''पापा रोने क्यों लगे?''

माँ ने बच्चे को लिपटाते हुए कहा, ''तुम्हारे पापा को उन दादा जी की चोट याद आ गई।''

लगभग पंद्रह मिनट बाद 'V' रक्त से सने कपड़े बदल कर, हाथ मुँह धोकर बाहर निकला। चेहरे पर जबरदस्ती की मुस्कान थी। पर आँखें अभी लाल थीं और आँसू ढलकने को बेचैन थे। पत्नी ने कोई प्रश्न नहीं किया। कभी प्रश्न न करना भी बहुत आश्वस्त करता है। कुछ देर के बाद पत्नी ने 'V' का हाथ पकड़ कर पूछा, ''एकाएक तुमको क्या हो गया? वे बुजुर्ग तो तुम्हारी वजह से अब सुरक्षित हैं। फिर यह आँसू क्यों?''

'V' ने पत्नी और पुत्र को बाँहों में समेटे हुए कहा, ''अब समझ में आया वह निगाह और शब्द मुझे क्यों आंदोलित कर रहे थे। उन बुजुर्ग की की निगाह में मुझे लगा जैसे पापा मुझे देख रहे हों और कह रहे हों ''थैंक यू सन!'' कहकर वह फिर चुप हो गया।

इस बार पत्नी भी इमोशनल हो गई उसे भी सुदूर रहने वाले अपने पिता का चेहरा याद आ गया।

कुछ देर बाद पत्नी ने सहज होते हुए कहा, ''V' पापा यह घटना सुनकर यही शब्द बोलेंगे- थैंक यू माई सन!''

कुछ रुककर बोली, ''और वह निगाहें...। 'V' हर पिता जब अपनी औलाद को देखता है तो उसकी निगाह में एक सा ही वात्सल्य और स्नेह होता है।''

''शायद तुम सही कह रही हो।'' कहकर 'V' ने बड़े लाड से अपने बेटे को देखते हुए सीने से चिपटा लिया।

पश्चादुक्ति : लोग समझते हैं कि हमारे बच्चे अच्छी आय, सुख-सुविधाओं के लिए हमसे दूर चले जाते हैं। उन्हें बूढ़े माँ-बाप का कोई ख्याल नहीं रहता। पर क्या यह सही है?

बच्चों की अपनी मजबूरी है। फिर भी, वहाँ रहकर भी, वह अंजान लोगों में अपनों को तलाशते हैं।

●

हंसनी

आज की शाम बड़ी उमस भरी थी। कूलर के सामने बैठने पर थोड़ी राहत तो जरूर महसूस होती थी पर पसीना रुकने का नाम नहीं ले रहा था। उसे लगा शायद आज छुट्टी के दिन माल से सिनेमा देखकर लौटने के बाद गर्मी ज्यादा ही महसूस हो रही थी। उसे याद आया कैसे एसी हाल में घुसते ही पसीना अपने आप ही सूखने लगा था। चुटकियों में पसीना ऐसा गायब हो गया, चेहरे और शरीर का चिपचिपापन एकदम खत्म हो गया। यदि अरुणा होती तो इस छोटी सी बात को यूँ पोएटिक अंदाज़ में कहती- ''जिस प्रकार घास पर पड़ी ओस की बूँदें सूर्य निकलने पर धीरे-धीरे गायब हो जाती हैं वैसे ही एसी हाल में जाते ही शरीर का पसीना उड़ जाता है।''

अरुणा उसकी सबसे अभिन्न सहेली थी दोनों साथ ही पलीं, बढ़ीं मगर शादी के बाद दोनों बिछड़ गईं। करुणा तो अरुणा को जब तब याद भी कर लेती है पर अरुणा..., अपने मस्त स्वभाव के कारण इन सब बातों पर उसका ध्यान ही नहीं जाता होगा। वह शुरू से ही बड़ी प्रैक्टिकल थी। हमेशा वर्तमान में जीती तथा पिछली बातों को वह याद भी नहीं करना चाहती थी। वैसे भी उन दोनों का अतीत कोई बहुत सुंदर नहीं रहा।

करुणा की विचार शृंखला काल बेल बजने से टूटी। स्पीड-पोस्ट आई थी। काफी वजनी लिफाफा था। भेजने वाले के काफी पैसे खर्च हुए होंगे; सोचते हुए उसने साइन करके पत्र लिया। भेजने वाले का नाम पढ़ते हुए उसके चेहरे पर मुस्कराहट छा गई।

पत्र अरुणा का था। करुणा ने सोचा लगता है आज मैडम को अपनी सहेली याद आ ही गई।

पत्र लंबा था। करुणा ने पानी का जग पास में रखकर पत्र पढ़ना शुरू किया।

''हंसनी...'' अरुणा ने लिखा था, ''करुणा, अगले जन्म में हंसनी होना चाहूँगी। जानती हो क्यों? बताऊँगी तो हँसोगी। हंसिनी तो सुंदर होती ही है, पर उसकी एक विशेषता और होती है। हंस का जोड़ा हमेशा एक दूसरे के प्रति वफादार रहता है। कहा जाता है कि यदि दुर्भाग्यवश नर हंस की मृत्यु हो जाय तो हंसनी अपनी सारी उम्र अपने हंस के विरह में ही व्यतीत कर देती है। वह दुबारा फिर से जोड़ा नहीं बनाती। है न यह कितनी अद्‌भुत बात। एक पतिव्रता स्त्री होना हम मानवों में भी श्रेष्ठ माना जाता है। परंतु क्या सभी स्त्रियाँ इस व्रत को निबाह पाती हैं? शायद नहीं। कुछ एक के कदम कभी न कभी बहकते ही होंगे। पुरुषों के सम्बन्ध में ऐसी कोई प्रतिबद्धता या उतना कड़ा नियम नहीं है, फिर भी व्यवस्था स्त्रियों के लिए ही बनाई गई है क्या?''

करुणा ने पन्ना पलटा। अरुणा का लिखना जारी था ''शायद इसलिए कि स्त्री परिवार की धुरी होती है, जिसे मजबूत होना चाहिए। अगर धुरी कमजोर पड़ गई तो परिवार की गाड़ी डगमगा सकती है। करुणा, मैं तुम्हें पारिवारिक धर्म पर कोई सीख देने के लिए यह सब नहीं लिख रही हूँ। मैं अपने मन की व्यथा तुम से शेयर कर रही हूँ। तुम्हारे सिवा मेरा इस दुनिया में है ही कौन?''

X X X X X

''है ही कौन?'' करुणा को खटका लगा। एक शादी-शुदा महिला यदि लिखे कि उसके बचपन की सहेली के अलावा कोई आत्मीय जन नहीं है तो अवश्य यह चिंता का विषय है। वह आगे पढ़ना चाहती थी। तभी काल बेल बज उठी। उसका पति आया था। वह अरुणा के पत्र को फूलदान के नीचे दबाकर पति का स्वागत करने चल पड़ी।

पति ने आते ही कहा, ''बड़ी गर्मी है। पहले मैं नहा लूँ उसके बाद साथ बैठकर चाय पिएंगे।'' कहकर वह सीधा बाथरूम चला गया। करुणा किचेन में जाकर चाय-नाश्ते की तैयारी करने लगी।

वर्तमान संघर्षमय होता है, भविष्य अनदेखा होता है। इसलिए जब भी मौका मिलता मन भूतकाल में चला जाता है और यादों में सुकून पाने की कोशिश करता है। जरूरी नहीं कि यादें हमेशा सुखद ही हों; वह

दु:खद भी हो सकती हैं। पर अंत में सबकुछ अपने दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। एक दु:खद यादों को लेकर कुढ़ता रहा है, वहीं दूसरा, यह सोचकर ईश्वर को धन्यवाद देता है कि परिस्थितियाँ बदतर भी हो सकती थीं। यह भी सत्य है कि अति संतोष प्रगति में बाधक भी हो सकता है; अत: बीते लमहों के प्रति संतुलित दृष्टिकोण ही उचित है। करुणा की सोच सकारात्मक थी इसलिए वह अतीत की बाते सोच कर कुढ़ती नहीं थी। वह जानती थी कि सभी अनाथ बच्चियाँ उन दोनों के समान भाग्यशाली नहीं होतीं, जो अनाथालय में रहकर शोषण से बच पाईं तथा जिनकी संभ्रांत परिवार में शादी भी संभव हो सकी।

अरुणा का पत्र पाकर वह अपनी पुरानी स्मृतियों के उस मुकाम पर पहुँच गई जब दोनों अपने-अपने परिवारों से बिछड़ कर अकेली रह गई थीं। उन्हें किसी तरह अनाथालय पहुँचाया गया। सौभाग्य से उस अनाथालय की अधीक्षक एक महिला थीं जो पैसों की हेरा फेरी तो कर लेती थीं पर बच्चियों का बड़ा ध्यान रखती थीं। इसी अनाथालय में अरुणा और करुणा एक साथ आई थीं। हमउम्र थीं, लंबाई भी लगभग एक सी थी इसलिए वार्डेन ने उन्हें अरुणा और करुणा का नाम दिया। अनजाने लोग उन दोनों को बहन होने का भ्रम भी कर लेते थे, जिसको किसी ने भी तोड़ने का प्रयास नहीं किया।

दोनों ही पूरे आश्रम में सबसे सुंदर थीं। कद और काठी एक सी होने के बावजूद दोनों में कुछ फर्क भी था। करुणा जहाँ भोली-भाली और खुलते हुए गेहुंए वर्ण की थी, वहीं अरुणा चंचल, कमर तक लंबे बाल और गौर वर्ण की थी। भीड़ में भी अचानक अरुणा पर ही निगाह टिकती थी। अभी बच्ची होने के नाते दोनों अपनी शारीरिक विशेषताओं से अनभिज्ञ थीं।

हम दोनों को अपने लड़की होने का एहसास तब हुआ जब इन्हें पढ़ाने के लिए एक टीचर नियुक्त हुआ। वह पढ़ाता तो बहुत अच्छा था, पर कुछ ही दिनों में उसके सींग निकलने शुरू हो गये। वह किसी न किसी बहाने इन लड़कियों को छूने का प्रयास करता था। पहले तो बच्चियों को समझ नहीं आया परंतु कुछ अंतराल बाद जब टीचर 'बोल्ड' होने लगा तो सहज 'स्त्री-बुद्धि' से वह असहज होने लगीं। उन्होंने टीचर के इस 'डर्टी-टच' के बारे में वार्डेन से बताया। वार्डेन ने तत्काल ही उस टीचर को हटाकर महिला टीचर की व्यवस्था की। इसके साथ ही उसने दोनों लड़कियों पर विशेष ध्यान देना शुरू किया।

दोनों का आठवीं क्लास में स्कूल में दाखिला करा दिया गया। वहाँ बालिकाओं के लिए नृत्य शिक्षा अनिवार्य थी। अरुणा और करुणा दोनों ही जल में मछली की तरह नृत्य-कला में रम गईं। करुणा में जहाँ अधिक भाव थे वहीं अरुणा के चेहरे पर भाव के साथ शारीरिक लय और सुंदर स्वर भी था। अरुणा में ज्यादा होशियारी और दुनियादारी थी। अब वह अपनी खूबी और कमियों को अच्छी तरह पहचानती थी। आगे चलकर इन खूबियों को अपनी प्रगति में उपयोग करना भी सीखने वाली थी। वहीं करुणा भोली थी और बहुत महत्त्वाकांक्षी भी नहीं थी।

सामान्य शिक्षण कक्षाओं के बाद इन दोनों लड़कियों को नृत्य के विशेष प्रशिक्षण हेतु चयनित किया गया। विशेष प्रशिक्षण के लिए इन्हें स्कूल में एक पीरियड अतिरिक्त रुकना होता था। वार्डेन ने दोनों को इस शर्त पर नृत्य सीखने की अनुमति दी कि इसका इन दोनों की सामान्य शिक्षा पर असर नहीं पड़ना चाहिए। मछली को जल में तैरने के लिए अतिरिक्त श्रम नहीं करना पड़ता। वैसे ही इन लोगों के लिए नृत्य सामान्य शिक्षा में बाधक नहीं हुआ।

लड़कियाँ किशोरावस्था तक तो नृत्य और संगीत में अधिक रुचि लेती हैं, परन्तु आगे चलकर इन विधाओं को कॅरियर नहीं बना पातीं। जिसका परिणाम होता है कि गर्ल्स स्कूल में भी नृत्य और संगीत के लिए पुरुष प्रशिक्षक ही मिल पाते हैं। यही विडम्बना इन दोनों कन्याओं के स्कूल में थी। यहाँ नृत्य प्रशिक्षक पुरुष ही था और उसके सींग निकले हुए थे। वह नई छात्राओं को मुद्रा समझाने के बहाने अश्लील ढंग से छूता रहता। उसकी इस हरकत से एक साल के अंदर ही काफी छात्राएं नृत्य प्रशिक्षण से विरत हो गयीं। वही छात्राएँ बचतीं जो किन्हीं कारणों से उसकी हरकत बर्दाश्त कर सकती थीं।

यहीं से अरुणा और करुणा के स्वभाव की भिन्नता प्रकट होने लगी

थी। इस डर्टी टच के कारण करुणा जहाँ अपने अध्ययन में व्यवधान का बहाना लेकर नृत्य की कक्षा से हट गईं, वहीं अरुणा प्रशिक्षण लेती रही। अरुणा का तर्क था यदि टीचर मुझे छूकर खुश होता है तो मेरा क्या ले लेता है। मुझे नृत्य में ही कैरियर बनाना है तो बर्दाश्त करना ही होगा। वह नृत्य सीखती रही। टीचर को अनधिकार स्पर्श को अधिक महत्त्व नहीं दिया। नतीजा वह नृत्य प्रतियोगिता में जिले में प्रथम आई। उसे नृत्य की उच्च शिक्षा हेतु छात्रवृत्ति भी मिल गई। स्कूल और अनाथालय के साथ ही अनाथालय की अधीक्षिका का भी नाम हुआ।

करुणा विज्ञान विषयों को लेकर आगे पढ़ती गई। विज्ञान संकाय में भी पुरुष टीचरों का बाहुल्य था। प्रैक्टिकल परीक्षाओं में नंबर उन्हीं की संस्तुति से मिलते थे। वहाँ भी करुणा को वही मुसीबत झेलनी पड़ी, मगर उसने नंबरों की वजह से समझौता नहीं किया। इस वजह से उसे प्रैक्टिकल्स में सामान्य अंक ही मिलते। परंतु प्रैक्टिकल में सामान्य नंबरों के बाद भी उसकी फर्स्ट-क्लास कोई रोक नहीं पाया। उसने छात्राओं की परेशानी समझी और विज्ञान की अध्यापिका बनना निश्चित कर लिया।

अरुणा नृत्य विधा में ही निरंतर प्रगति करती रही। नृत्य में शारीरिक लय और भंगिमाओं के साथ यदि शारीरिक सुंदरता भी हो तो वह कलाकार जल्दी ही उभर कर ऊपर आ जाता है। अरुणा में ईश्वर की दी यह सभी विशेषताएँ थी। कुशल मार्गदर्शन पाकर अच्छी नृत्यांगना के रूप में वह जानी जाने लगी। नृत्य-संस्थान को अरुणा के नाम पर कार्यक्रम मिलना शुरू हो गए जिससे संस्थान के साथ अरुणा को भी वित्तीय लाभ होने लगा।

परंतु हर सफलता का एक मूल्य होता है। अरुणा को वह मूल्य तो चुकाना ही पड़ा था।

धीरे-धीरे अरुणा उस मुकाम पर पहुँच गई जहाँ उसे किसी सहारे की जरूरत नहीं रह गई। अब कार्यक्रम के प्रस्ताव सीधे उसके पास आने लगे थे। अरुणा स्वयं ही अपने सह-कलाकारों का चयन करती और उन्हें अपनी आय से हिस्सा भी देती थी। उसकी अपनी 'ललित डांस ट्रूप' नाम से एक 'नृत्य टोली' बन गई थी।

अरुणा अब सफल और आत्मनिर्भर तो हो गई थी फिर भी उसके नारीत्व को एक लता की भाँति एक वृक्ष के सहारे की अपेक्षा हरदम बनी रहती है। नदी एक किनारे के सहारे कभी अपने गन्तव्य, सागर, को नहीं पा सकती। जीवन साथी के बगैर स्त्री और पुरुष दोनों ही अधूरे रहते हैं।

एक दिन उसके ट्रूप के नृत्य कार्यक्रम को शहर के बड़े बिजनेस हाउस द्वारा प्रायोजित किया गया। वह कार्यक्रम नए युवा सीईओ के स्वागत हेतु आयोजित किया गया था। नए सीईओ ही कार्यक्रम के मुख्य अतिथि थे। कार्यक्रम के शुरुआत में ही डांस-ट्रूप के सदस्यों का परिचय मुख्य अतिथि से कराया गया। जब मुख्य अतिथि अरुणा के सामने पहुँचा तो एकाएक दोनों स्तब्ध हो गए। मुख्य अतिथि अरुणा के रूप, वेषभूषा, देहयष्टि, जिसे नृत्य की ड्रेस ने और भी निखार दिया था, को देखता रह गया। वहीं अरुणा उस नवयुवक अधिकारी को निर्निमेष ताकती रह गई। सच में, प्रथम दृष्टि प्रेम (लव एट फर्स्ट साइट) शरीर की रासायनिक क्रिया ही है, जिससे दो अनजाने लोग पहली ही नजर में एक दूसरे पर आसक्त हो जाते हैं। वैसा ही कुछ प्रथम दृष्टि में अरुणा एवं मुख्य अतिथि के बीच घटित हुआ।

अरुणा का नृत्य प्रारम्भ हुआ। अरुणा ने आज लीन होकर नृत्य किया। वह नृत्य में ही समाधिस्थ हो गई। नृत्य-समाधि में उसके मन में मात्र युवा मुख्य अतिथि का चेहरा ही घूम रहा था। वह कब तक नाची, उसे कुछ पता नहीं चला। नृत्य के अंत में जब उसने अभिवादन किया तब तालियों की गड़गड़ाहट से उसकी तंद्रा टूटी। उसके चेहरे पर श्रम-बिन्दु झलक रहे थे, आँखों में उन्माद, चेहरे पर संतोष एवं दर्प युक्त मुस्कान थी। उसे भान था कि आज उसने सबका दिल जीत लिया है। इस समय वह साक्षात् अप्सरा लग रही थी।

वहीं युवा मुख्य अतिथि अरुणा के रूप, शृंगार, कला के अतिरेक से मंत्र-कीलित सा बैठा रहा। जब उद्घोषक ने अरुणा को सम्मानित करने हेतु मुख्य अतिथि का आह्वान किया तब वह एकदम चौंक कर आपे में लौटा। दिल की व्यग्रता को शांत करता हुआ वह सधे कदमों से मंच पर पहुँचा। बुके देते हुए अरुणा के हाथ जाने-अनजाने में मुख्य अतिथि नरेंद्र

से छू गये। दोनों को लगा जैसे बिजली का झटका लगा हो। दोनों के हाथ से बुके छूट गया, पर वे एक दूसरे को देखते रहे। सहयोगियों ने बुके उठा कर दिया और सम्मान समारोह समाप्त हुआ।

अरुणा के ट्रूप के लोगों के लिए अरुणा का अभिभूत होना, पाने की ललक दिखना कोई नई बात नहीं थी। परंतु आज उन्होंने अरुणा में भी परिवर्तन देखा। इस बात का उन्हें समुचित अनुभव था। वह समझ गये कि ट्रूप अब कुछ दिनों का ही मेहमान रह गया है। उन्हें अपनी जीविका के लिया अब कोई और ट्रूप देखना होगा।

यह सत्य है कि सभी अनुमान शत-प्रतिशत सही नहीं निकलते। वैसा ही ट्रूप के कयासों के साथ हुआ। 15 दिन के अंदर अरुणा को 'अरुणा नरेंद्र' बनाकर मायानगरी मुंबई ले गया और अरुणा के निर्देशन में एक 'नृत्यम्' नाम की एक संस्था का गठन कर दिया।

अरुणा के मुंबई शिफ्ट हो जाने के बाद से करुणा का उससे कोई संपर्क नहीं रह गया। अचानक आज के पत्र ने अरुणा के साथ उसके बचपन की यादें भी ताजा कर दी थीं।

X X X X X

अरुणा की स्मृतियों की शृंखला गालों पर गीले हाथों के मधुर स्पर्श से टूटी। उसका पति नहाकर आ गया था। उसे चुपचाप खोया हुआ बैठा देख उसने प्यार से उसे अपनी ओर उन्मुख किया, ''मैं कपड़े बदलता हूँ तब तक यदि चाय तैयार हो जाय तो चाय बालकनी में ही पी जाय।'' करुणा हमेशा पति के नहाकर निकलने तक चाय तैयार कर चुकी होती थी पर आज अतीत की छाया में वह कुछ ज्यादा ही रम गई थी। वह इस अपराध बोध के साथ जल्दी से किचन में चली गई।

करुणा जब तक चाय लेकर आये तब तक अर्जुन बालकनी में बैठकर इंतजार कर रहा था। हल्की सी बारिश का एक झोंका जिस तेजी से आया उसी तेजी के साथ चला भी गया। जिससे उमस खत्म हो गई थी। ठंडी हवा में मिट्टी की सोंधी खुशबू मिल चुकी थी। इस खुशबू से अर्जुन ने मन में सोचा कि इस समय यदि चाय के साथ गर्मागर्म पकौड़ी हों तो मौसम का पूरा आनंद आ जाये। करुणा ने टेबल पर ट्रे पूरी तौर

से रखी भी नहीं थी कि अर्जुन को ताजी गरम पकौड़ियों की खुशबू आ गई। वह प्रसन्न होते हुए बोला, ''अरे वह यदि इस समय मैंने कुछ और माँगा होता तो शायद वह भी मिल गया होता। मैं सोच रहा था कि यह चाय-पकौड़ियों का ही मौसम है।'' फिर एक पकौड़ी में मुँह में रखता हुआ बोला ''तुम महिलाएँ पुरुषों के दिल की बात कैसे समझ लेती हो?''

करुणा कुछ विनोद भरें व्यंग्य के साथ बोली, ''श्रीमान जी, मैं तो सिर्फ आपके ही दिल की बात समझ पाती हूँ पर लगता है कि आपको कई अन्य महिलाओं का भी अनुभव है।''

दोनों हँसने लगे। थोड़ी देर बाद अर्जुन ने बताया, ''माँ का फोन आया था। पिताजी कुछ अस्वस्थ हैं। सोचता हूँ उन्हें देख आऊँ।''

''देख ही क्यों? उन्हें यहाँ लिवा लाओ। इलाज भी अच्छी तरह हो जाएगा। माँ को भी कुछ आराम मिल जाएगा। जगह बदलने से मन भी बदल जाएगा।'' करुणा ने कहा।

अर्जुन को करुणा का अपने माता-पिता के प्रति यह सेवाभाव बहुत भाता था। वहीं करुणा सारी जिंदगी माँ-बाप के प्यार को तरसती रही थी। अपने सास ससुर की सेवा करने में उसे संतोष मिलता था जिसके लिए वह जीवन भर तृषित रही।

अर्जुन रात की गाड़ी से ही निकल गया। शाम की लगी बारिश की झड़ी रात में और तेज हो उठी। वैसे तो अर्जुन स्टेशन बाइक से जाता था और बाइक स्टेशन में पार्क कर ट्रेन से चला जाता था। इससे आने-जाने में सवारी ढूँढ़ने और किराया देने की बहस से बच जाता था पर आज उसे थ्री-व्हीलर से जाना पड़ा। अर्जुन के जाते ही बारिश एकाएक तेज हो गई, बिजली भी लगातार गरजने लगी। करुणा ने सोचा कि यदि मौसम कुछ समय पहले ही इतना खराब हो गया होता तो वह अर्जुन को जाने न देती। मगर अब तक तो वह स्टेशन पहुँच गया होगा। इस विचार से उसे कुछ शांति मिली।

X X X X X

घर में अकेले होने पर करुणा को नींद ठीक से नहीं आती। खाना वह अर्जुन के साथ ही खा चुकी थी। उसने आराम से बैठकर अरुणा का

पत्र पढ़ने की सोची। पढ़ते-पढ़ते नींद भी आ जाती है। वह दरवाजा बंद कर सीधे फूलदान के पास पहुँची और पत्र उठाया ही था कि धड़ की आवाज के साथ खिड़की का पल्ला खुल गया और तेज हवा का झोंका पानी की बौछार के साथ अंदर आया। परदे उड़ने लगे, खिड़की के पास रखा टेबल लैम्प गिर पड़ा। अरुणा के पत्र के पन्ने भी हाथ से छूट कर पूरे कमरे में बिखर गए। उसने दौड़ कर खिड़की बंद की, टेबल लैंप को यथास्थान रखा। जब कमरे में एक बार पुनः शांति स्थापित हो गई, तब करुणा का ध्यान अरुणा के पत्र पर गया। उसके हाथ में पत्र का आखिरी पन्ना बचा था। सारे पन्ने बटोरने के पहले उसकी दृष्टि अंतिम सम्बोधन पर पड़ी; अरुणा ने लिखा था, ''तुम्हारी अकेली बहन करुणा।''

'बहन'- इस शब्द को पढ़कर एकाएक करुणा के मन में प्यार का एक ज्वार उठा। शुरू से ही अनाथ होने के कारण करुणा रिश्तों के लिए हमेशा तरसती रही। लोगों को अरुणा और करुणा में बहनों को भ्रम होने पर करुणा तो खुश होती थी परंतु अरुणा को अच्छा नहीं लगता। करुणा की बहन होने में वह हीनता महसूस करती। करुणा का रूपरंग कम होने के कारण अरुणा को बहन बनना नापसंद था। यही कारण था कि आज अरुणा द्वारा उसे बहन का सम्बोधन उसे अंदर तक भिगो गया। उसकी आँखो में स्नेह के आँसू आ गये। थोड़ी देर वह आँख बंद किए बैठी रही। फिर हौले से प्रकृतिस्थ होते हुए उसने पत्र के आखिरी हिस्से पर नजर डाली। तभी जोर से बिजली कड़की और लाइट चली गई। परंतु तब तक पत्र का जो अंश करुणा ने पढ़ा उससे उस पर भी वज्रपात हुआ। पत्र की अंतिम पंक्तियाँ थीं ''प्यारी करुणा, जब तक तुम्हें यह पत्र मिलेगा तुम्हारी बहन इस दुनिया से सिधार चुकी होगी। हंसनी अपने हंस से मिलने जा चुकी होगी। मुझे माफ करना।''

'हंसनी अपने हंस से मिलने जा चुकी होगी।' पत्र की अंतिम पंक्तियाँ कितनी त्रासदियाँ बता गयीं। अरुणा का पति नहीं रहा और अब अरुणा भी प्रयाण की तैयारी कर रही है। वैधव्य के दुःख से आत्महत्या करे, ऐसी कमजोर भी नहीं थी अरुणा। दुःख सचमुच असह्य हो गया होगा तभी अरुणा ने यह रास्ता अपनाया। करुणा ने मोबाइल के फ्लैश की

रोशनी से पत्र में दिये मोबाइल पर रिंग किया। दो-तीन रिंग का कोई जवाब नहीं आया। करुणा चिंतित हो उठी। घर में क्या अरुणा ने अकेले ही... नहीं-नहीं भगवान् न करे ऐसा हो, सोचकर एक बार फिर मोबाइल मिलाया। घंटी बजती रही। करुणा फोन बंद करने वाली ही थी कि दूसरी तरफ फोन उठ गया। करुणा के मन में आशा का संचार हुआ।

X X X X X

''हैलो, कौन बोल रहा है?'' उधर से एक गंभीर मर्दानी आवाज आई। करुणा ने एक साँस में ही अपना परिचय दे दिया। दूसरी तरफ से अशुभ समाचार न मिले करुणा यही प्रार्थना कर रही थी।

''अच्छा तो आप करुणा जी बोल रही हैं।'' वही गंभीर मर्दानी आवाज आयी।

''हाँ, हाँ, मैं ही अरुणा की सहेली करुणा हूँ। अरुणा कैसी हैं?'' करुणा के स्वर में चिंता और आतुरता थी जिसे कि दूसरी तरफ वाले व्यक्ति ने भी अनुभव किया था।

''सूचना अच्छी नहीं है करुणा जी। मैं पुलिस इंस्पेक्टर देसाई बोल रहा हूँ।''

पुलिस इंस्पेक्टर... करुणा खड़ी नहीं रह पाई। धम्म से कुर्सी पर बैठ गई। लंबी साँस लेकर उसने सोचा- अनहोनी तो घट चुकी है।

उधर इंस्पेक्टर देसाई धम्म की हल्की आवाज के साथ करुणा के एकाएक चुप हो जाने से चिंतित हो गया। वह जल्दी से बोला, ''करुणा जी, आप ठीक तो हैं?''

''हाँ, मैं ठीक हूँ आप अपनी बात पूरी करिये।''

''करुणा जी, आपका एड्रेस हमें अरुणा जी की डायरी से मिला। हम लोग आपको कान्टेक्ट करने की सोच ही रहे थे...।''

''यह सब छोड़िए। यह बताइये अरुणा कुशल से तो है, और आप लोग उसके घर में क्या कर रहे हैं? अरुणा का पति कहाँ है?'' करुणा ने टोकते हुए एक साथ कई प्रश्न दाग दिये। वह अरुणा की कुशलता जल्दी से जल्दी जान लेना चाहती थी।

इंस्पेक्टर की आवाज की नरमी गायब हो गई। वह बड़े ही पेशेवर अन्दाज में बोला ''ठीक है, सुनिए। अरुणाजी ने आत्महत्या कर ली है। उसी छानबीन में हमें आपका एड्रेस मिला...। और हाँ नरेंद्र जी का भी स्वर्गवास हो चुका है। उनकी अन्त्येष्टि के अभी 15 दिन ही हुये हैं। नरेंद्र जी ने महामारी पीड़ितों की सेवा में बड़ा योगदान किया था। इस कारण थोड़े ही दिन में वह काफी लोकप्रिय हो गए थे। लगता है अरुणा जी ने पति वियोग के सदमे से आत्महत्या कर ली है। हालाँकि, हम लोगों को कोई सुसाइड नोट नहीं मिला।'' फिर एकाएक सोचता हुआ बोला, ''पर आपने इतनी रात में कैसे फोन किया?''

करुणा को कुछ ऐसी ही भयानक त्रासदी का अंदाजा था, ''मुझे आज शाम ही अरुणा का पत्र मिला जिसमे वह बहुत निराश लग रही थी। घर के काम की वजह से मैंने बिलकुल अभी-अभी पत्र देखा है, और अरुणा से संपर्क करने का प्रयास किया।''

इंस्पेक्टर बोला, ''करुणा जी, आप ही एकमात्र ऐसी व्यक्ति हैं जो अरुणा जी को नजदीक से जानती हैं; आपको लिखे गए पत्र से अरुणा जी की मानसिक दशा की जानकारी भी मिलती है, जिससे यह सिद्ध हो सकता है कि अरुणा ने आत्महत्या की है।''

''मैं वह पत्र अभी पूरी तौर से नहीं पढ़ पाई हूँ, परंतु पत्र के अंतिम अंश से आभास होता है कि अरुणा ने आत्महत्या ही की है।'' करुणा ने बताया।

''क्या आप अपनी मित्र या बहन, जो भी रिश्ता आपका मृतका से रहा हो, की अंतिम सहायता हेतु यहाँ तत्काल आ सकती हैं। आपके बयान से हम इस घटना को आत्महत्या सिद्ध कर सकते हैं, और आगे लंबी विवेचना से बच सकते हैं।'' फिर कुछ सकुचाते हुए ''यहाँ कुछ दिनों से अरुणा जी के बारे में अजीब अफवाहें फैल रही हैं। मैं गलत भी हो सकता हूँ, पर मेरा मानना है कि उनकी मृत्यु में उनके अतीत की कुछ कहानी अवश्य है, जो सार्वजनिक होने से इस दंपति और खासकर अरुणा की छवि के लिए अच्छा नहीं होगा।'' इन्सपेक्टर ने कहा।

करुणा, अरुणा के स्वभाव से परिचित थी। उसका उन्मुक्त व्यवहार

कभी-कभी गलतफहमियाँ उत्पन्न कर देता था। यह बात और है कि इन सबसे अरुणा का कुछ भला अवश्य हो जाता था। अरुणा तत्काल ही जाने को तत्पर हो गई, ''आने को मैं प्लेन से एक घंटे में पहुँच सकती हूँ पर इतने कम समय में टिकट कैसे मिल सकता है?''

इंस्पेक्टर बोला, ''इसकी आप चिंता न करें। मैं प्रशासनिक चैनल से आपका टिकट कन्फर्म करवा देता हूँ। चेक-इन-डेस्क पर आपको टिकट प्राप्त हो जाएगा। मगर इसके लिए आपको एक घंटे के अंदर ही एयरपोर्ट के लिए निकलना होगा। आप यदि इतनी जल्दी चल सकती हों तो मैं प्रशासनिक चैनल टैप करूँ।''

करुणा ने तत्काल हामी भर दी और तैयार होने लगी। थोड़ी ही देर में मोबाइल फिर बज उठा। उधर से इंस्पेक्टर ने बताया कि करुणा का टिकट बुक हो गया है और 15 मिनट में पुलिस वैन उसे एयरपोर्ट छोड़ने के लिए उपलब्ध हो जाएगी।

X X X X X

करुणा को एयरपोर्ट सिक्योरिटी ने भी सहायता की। वह प्लेन पर बोर्ड करने वाली आखिरी यात्री थी। थोड़ी ही देर में प्लेन ने उड़ान भरी। करुणा सोच रही थी कि कभी-कभी पुलिस भी कितनी सहायक हो सकती है। एक साधारण महिला की मृत्यु पर उसके लिए 'ग्रीन-कारिडर' जैसी व्यवस्था कर दी। फिर उसे याद आया कि अरुणा एक साधारण महिला नहीं थी। वह एक सेलिब्रिटी थी।

अरुणा की याद आते ही करुणा की आँखें एक बार फिर से नम हो गईं। उसने आँसू पोछ कर अपने पर्स से अरुणा का अधूरा पत्र निकाल कर पढ़ना शुरू किया।

अरुणा ने लिखा था... करुणा तुम मेरी नृत्य संस्था 'नृत्यम्' से तो परिचित होगी ही जो हमने मुंबई में जाकर बनाई थी। संस्था हर दो महीने में अपने कार्यक्रम प्रस्तुत करती और बाकी दिनों में अन्य प्रायोजित कार्यक्रम करती। नरेंद्र के सहयोग और उसकी कार्पोरेट अप्रोच से 'नृत्यम्' संस्था बहुत जल्दी ही विख्यात हो गई। संस्था ने ट्रूप को फायदे में साझीदारी न देकर निश्चित वेतन पर हर साल के अनुबंध पर रख लिया।

अब हमारे ट्रूप के सदस्य 'नृत्यम्' संस्था के वेतन भोगी कर्मचारी हो चुके थे।

संभवत: मैं और नरेंद्र एक दूसरे के लिए काफी लकी थे। हम दोनों का नाम आभिजात्य समाज में हमेशा चर्चा में रहता। एक नव-वर्ष संध्या पार्टी में हमारा जोड़ा सबसे आकर्षक जोड़ा चुना गया। इन-शॉर्ट, करुणा, मैं सातवें आसमान पर थी। सुना था कि सातवें से ऊँची कोई जगह नहीं होती है इसलिए नीचे आना तो लाजमी था ही। मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ।

नरेंद्र अपने काम में व्यस्त रहते, मैं अपने कार्यक्रमों में। तमाम रिहर्सल और तैयारी में समय लगाने के बाद भी कुछ समय मेरे पास बच जाता था। बच्चों का विचार हम लोगों ने कुछ वर्षों के लिए स्थगित कर रखा था। सोचा तब तक जिंदगी पूरी तरह से जी ली जाय। और करुणा यहीं मुझसे गलती हो गई।

खाली समय के लिए मैंने किटी ज्वाइन कर ली। सभी महिलाएँ एक विशिष्ट वर्ग की थीं। सो किटी का एमाउंट भी वैसा ही विशेष था। बीस महिलाओं की किटी ज्वाइन करते ही मेरी किटी निकल आई। सबने कहा अरुणा के सितारे आसमान को छू रहे हैं।

मेरे पास तो ज्यादा समय नहीं बचता था, परंतु जो मात्र हाउस वाइफ थीं, उनका समय काटे नहीं कटता था। सुना था वह एकाधिक किटी पार्टी की सदस्य थी। जब करने को कुछ नहीं होता तो दिमाग में फितूर छाने लगता है। मैंने पाया कि यह महिलाएँ किटी-पार्टी में अश्लील द्विअर्थी संवाद व चुटकलों में बहुत आनंद लेती थीं। गुजरते समय के साथ मैंने पाया कि वे महिलाएँ अपनी अंतरंग बातें व अनुभव भी पार्टी में शेयर करती थीं। मैं इस चर्चा में सक्रिय सहयोग तो नहीं करती, हाँ, मुझे मजा अवश्य आने लगा था।

ऐसी ही एक किटी में जब मैं पहुँची तो किसी पुरुष मित्र के बारे में चर्चा हो रही थी। बातों में पता चला कि मुझे छोड़कर सभी सदस्य उस पुरुष विशेष से भली-भाँति परिचित थीं। उसके बारे में बताया जा रहा था कि देखने में बुद्धू लगने वाला वह साधारण सा पुरुष बेडरूम में एकाएक बहुत आकर्षक हो जाता है। उसकी आँखो का एनिमल लुक महिलाओं

को झकझोर देता है। वाकई ''ही इज वर्थ ए ट्राई, वंस एटलीस्ट...।''

मैं इसे अनसुना करने का प्रयास तो कर रही थी, पर जाने कैसी चाहत, प्यास सी मेरे अंदर जाग्रत होने लगी थी। ऐसा नहीं था कि मैं नरेंद्र से संतुष्ट नहीं थी। फिर भी मन में तूफान सा मचने लगा। मैं पार्टी छोड़कर चली आई। इस तूफान के साथ अकेले घर पर रहना मुश्किल था सो वह सीधे नरेंद्र के आफिस गई। नरेंद्र भी अधिक व्यस्त नहीं था। इसलिए दोनों ने बाहर ही खाना खाया और पिक्चर देखने के बाद शाम को ही घर लौटे। नरेंद्र ने भी मेरी बेचैनी महसूस की। उसे लगा कि आज मैं उसका कुछ ज्यादा ही ध्यान रख रही थी। ऐसी समर्पण की भावना उसने मुझमें पहली कभी नहीं देखी थी। उसे इसका भान नहीं हो पाया कि फूल की सुरभि बगिया से बाहर निकलने को तड़प रही थी।

इसके दो-तीन दिन बाद तक मेरा मन किसी काम में नहीं लगा। रिहर्सल के समय उसकी ट्रूप से भी उसकी यह व्याकुलता छिप न सकी। ट्रूप के वयोवृद्ध सितारवादक, जो मुझे बेटी के समान स्नेह करते थे, ने पूछ ही लिया, ''बेटी, तुम आज असाधारण रूप से व्यग्र लग रही हो। क्या बात है? आज काम में भी तुम्हारा मन नहीं लग रहा है। बात-बात में चिड़चिड़ा उठती हो। परिवार में सब ठीक तो है?''

मुझे लगा जैसी मेरी चोरी पकड़ी गई। मैं बचाव सा करती हुई बोली, ''नहीं बाबा, ऐसा कुछ नहीं है। नरेंद्र बहुत भले हैं, मेरा बहुत ध्यान रखते हैं। फिर भी न जाने क्यों कहीं मन नहीं लग रहा है।''

सितारवादक बाबा बोले, ''तुम कलाकार हो। नित्य वही पुराने रिहर्सल और नृत्य, वही नृत्य नाटिकाएँ। तुम्हारा मन ऊब गया है। कुछ नया क्यों ट्राई नहीं करती?''

मैं चौंक उठी। बाबा ने कितनी सही बात बोली। मेरा मन वाकई एक ही रुटीन से भर गया है। कुछ नया 'ट्राई' करना चाहिये।

मेरे तनमन में उत्तेजना फैल गई। दिल की धड़कन तेज हो गई। किसी तरह अपने को काबू कर मैंने पूछा, ''नया ट्राई करने का मतलब...? मुझे क्या करना चाहिए?''

''कहीं बाहर घूम आओ या कुछ ऐसा करो जो अभी तक न किया हो।''

मन स्वार्थी होता है। वह हर बात का निष्कर्ष अपने हिसाब से ही निकालता है; और इसीलिए कभी-कभी स्वछंद हो उठता है। बाबा का मतलब नृत्य विधा के नए प्रयोग से था, वहीं मैंने अपने मन से इसके विमर्श का अर्थ 'एकस्ट्रा-मैराइटल अनुभव' की स्वीकारोक्ति के रूप में लिया।

इस छोटे से शब्द 'नया ट्राई करो' ने मेरी सारी वर्जनायें, शील और संकोच को तोड़ डाला। मैं कुछ निश्चय करके वहाँ से सीधे अपने ड्रेसिंग रूम में आ गई और काँपते हाथों से मोबाइल उठाकर एक निश्चित नंबर मिलाया।

X X X X X

सरकारी दफ्तर के एक कनिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी ने अपने मोबाइल का ट्रू-कॉलर आन किया। डायल करने वाले का नाम- 'अरुणा नरेंद्र नृत्यम्' देख कर मुस्कराया। उसे इस फोन की आने की उम्मीद थी। उस किटी ग्रुप में वही अकेली महिला थी जो अभी तक उससे परिचित नहीं हुई थी।

कुछ देर बाद अरुणा प्रसन्न मुद्रा में रिहर्सल रूम में आकर बोली, ''बाबा, अगले हफ्ते एक कंसर्ट करना है जिससे सारी आय मुख्यमंत्री कोष में निर्धन लोगों के हित में दान की जाएगी। सभी लोग पूरी तत्परता से तैयारी शुरू कर दीजिए।''

कंसर्ट हुआ और बहुत सफल रहा। मुख्यमंत्री को थैली भी भेंट की गई। कहने को कलाकारों ने इस कंसर्ट के लिए नि:शुक्ल कार्य किया था। परंतु ऐसी शायद ही कोई संस्था हो जो सत्कार्यों में भी अपनी 'चोंच गीली न करती हो।' ऐसी ही काली कमाई आयोजकों और पहुँच वाले लोगों में बँटने के बाद, उस प्रशासनिक अधिकारी को 'नृत्यम्' संस्था का हिस्सा अरुणा को पहुँचाने का दायित्व सौंपा गया। प्रशासनिक अधिकारी जानता था कि मात्र इसी कार्य के लिए कंसर्ट आयोजित हुआ था, सो वह एक सुंदर ब्रीफकेस में पैसा भर कर दोपहर में अरुणा के आवास पर पहुँचा। अरुणा पहले से ही तैयार थी। उसने स्वयं बाहर निकल कर अधिकारी का स्वागत किया।

''आपका हिस्सा लेकर आया हूँ, कृपया स्वीकार करने की कृपा करें।'' कहकर वह नजरें नीची किये ही मुस्कराया। अरुणा उसे अंदर ले गई, अपने हाथ से ठंडा पिलाया, पैसे सुरक्षित जगह रखकर उसने अधिकारी का ब्रीफकेस वापस कर दिया।

अरुणा ने देखा ब्रीफकेस पर सोने के अक्षरों से अधिकारी का नाम लिखा था। अरुणा ने कहा ''यह ब्रीफकेस भी बहुत महँगा होगा। यह पीस स्पेशल आर्डर देकर बनवाया गया लगता है?'' अरुणा ने महसूस किया कि बात करते समय उसकी साँस फूल रही थी। उसके इस परिवर्तन को उस अधिकारी भी नोटिस कर रहा था।

''मैडम, यह सब आप लोगों की कृपा से ही संभव है वरना, हम लोगों की सैलरी तो काफी कम होती है।'' वह आँख झुकाये ही मुस्कराया और ब्रीफकेस लेकर जाने को तत्पर हुआ।

अरुण उसे जाता देखकर बोली, ''कोई और काम बाकी तो नहीं रह गया।'' अब तक उसकी आवाज बुरी तरह काँपने लगी थी।

अधिकारी रुक गया था और पलट कर ब्रीफकेस टेबल पर रखा। पहली बार उसने आँखें उठा कर अरुणा को देखा। अरुणा स्तब्ध रह गई। उसकी आँखों से पाशविकता झाँक रही थी। होंठ मुस्कराहट में खुले थे, पर अंदाज गुर्राने जैसा था। अरुणा के घुटने कमजोर हो गये वह केवल उसे देखती रही।

उसने आगे बढ़कर अरुणा को कंधे से पकड़ कमरे में धकेलते हुए कहा, ''हाँ, असली काम तो अभी तो बाकी ही है।''

X X X X X

साइट से नरेंद्र जल्दी फुर्सत पा गया। सोचा घर चलकर पत्नी के साथ ही खाना खाया जाए। उसने ड्राइवर को घर चलने को बोला। घर के बरामदे में ही उसने एक ब्रीफकेस रखा देखा जिसमें सोने के अक्षरों में नाम लिखा था। नरेंद्र चौंक उठा। वह जान गया कि ब्रीफकेस का स्वामी कौन है और वह इस समय बंद कमरे में उसकी पत्नी के साथ है...।

नरेंद्र अपना कोट वहीं पड़ी कुर्सी पर टाँग कर चुपचाप वापस आफिस लौट गया। बाहर से वह शांत था; पर अंदर से उसमें ज्वालामुखी

फट चुका था, जिसका लावा निकल कर उसे जला ही रहा था आगे कितनों को ताप पहुँचाएगा उसे खुद नहीं मालूम।

X X X X X

अरुणा तृप्त होकर लगभग मदहोशी की हालत में उस अधिकारी के साथ बाहर निकली और बाय कहने के लिए हाथ उठाया ही था कि उसका सारा शरीर जमकर पत्थर हो गया। बरामदे की कुर्सी पर नरेंद्र का कोट लटक रहा था।

वह खड़ी नहीं रह सकी, वहीं कुर्सी पर बैठ गई, शरीर की उत्तेजना गायब हो गई। पश्चाताप ने अरुणा के दिल और दिमाग को अमावस्या के ज्वार के भाँति डुबो दिया। उसका दम घुटने लगा। नरेंद्र ऐसे पति के साथ धोखा। मन तो चंचल होता है। उसे विवेक की डोर से बाँध कर रखना चाहिये वरना वह उच्छृंखल हो जाता है। अनैतिक मनमानी के बाद कभी-कभी अपमान, पश्चाताप, तिरस्कार और धिक्कार ही हाथ लगता है। आत्मीय जन द्वारा तिरस्कार और भी विचलित करता है। वह चुपचाप उठकर सीधे बाथरूम गई। गर्म पानी से मल-मल कर अपने को साफ किया, जैसे तन-मन का सारा कलुष धो डालना चाहती हो। कौन समझाये कलुषित तो केवल मन होता है, और मन स्नान करने से स्वच्छ नहीं होता; उसे पश्चाताप की अग्नि में जलना पड़ता है।

अरुणा की अब यही स्थिति थी।

नरेंद्र आफिस से आधी रात के बाद लौटा। वह देर रात तक आफिस में ही बैठा रहा। अरुणा के लगातार बजते फोन को नहीं उठाया। अरुणा इसी पल से भयभीत थी। इस विचार से ही काँप उठी थी कि वह नरेंद्र की आँखों का सामना कैसे करेगी। वह गुस्सा करेगा, चीखे चिल्लायेगा संभवत: हाथ भी उठा बैठे।

और तब ऐसे में उसका क्या व्यवहार होना चाहिए...।

परन्तु जब नरेंद्र लौटा तो ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। उसका चेहरा विषाद से बुझा था, क्रोध का नाम भी नहीं था। वह चुपचाप चेंज करके गेस्ट रूम में सोने चला गया। अरुणा उसके गुस्से में मिलने का इंतजार करती ही रही। उस समय तो उसको कुछ राहत मिली कि शायद सुबह

तक नरेंद्र उसे माफ कर दे। आखिरकार, अभी तक वह उसे कितना प्यार करती थी। क्या उसकी इन अच्छाइयों के एवज में उसकी एक भूल क्षमा योग्य नहीं है? फिर उसके दिल ने ही कहा कि यह भूल वाकई अक्षम्य है।

सुबह हुई। अरुणा नाश्ते की मेज पर इंतजार करती रही पर नरेंद्र गेस्ट रूम से पूरी तरह तैयार होकर निकला और बगैर कुछ कहे घर से चला गया। उसने अरुणा तरफ देखा भी नहीं। अरुणा के लिए उसका न बोलना ही पहाड़ लग रहा था पर यह तिरस्कार उसे इतना अपमानित कर गया कि उसका 'अहं' तक आहत हो गया। उससे भी नाश्ता नहीं किया गया। वह भी वैसे ही नाश्ते की मेज से उठ गई। वह नारी सुलभ आदत के अनुसार शीशे के सामने जा खड़ी हुई। उसे अपने पीछे नरेंद्र का मुस्कराता चेहरा दिखा, अरुणा भी बरबस मुस्कराने को थी कि उसके और नरेंद्र के बीच एक काली छाया प्रकट हो गई। छाया के आते ही दर्पण में नरेंद्र की मुस्कान गायब हो गई, चेहरा काला हो गया छाया लंबी होती गई और नरेंद्र दूर-बहुत दूर चला गया। उसने चिल्लाकर नरेंद्र को रोकना चाहा पर छाया ने उसका मुँह बंद कर दिया। वह तड़फड़ा गई पर कुछ न कर सकी और वहीं आँख बंदकर जमीन पर बैठ गई।

X X X X X

नरेंद्र रात को फिर देर से लौटा और सीधे अपने कमरे में चला गया। दिन भर उसने अरुणा का फोन नहीं उठाया। अरुणा ने बाहर निकल कर पीसीओ से फोन किया। नरेंद्र ने उठाया पर उसकी आवाज सुनते ही फोन काट दिया। इसके बाद नरेंद्र का मोबाइल स्विच-ऑफ आने लगा। अरुणा उस रात भी नहीं खा सकी। मात्र पानी पीकर लेट गई, सोई कि नहीं, उसे स्वयं नहीं पता। सुबह होते ही वह नरेंद्र के दरवाजे के सामने कुर्सी डाल कर बैठ गई। सोचा आज नरेंद्र से सीधे बात करेगी, माफी माँगेगी और किसी न किसी तरह उसे मना लेगी। पर नरेंद्र कमरे से निकल उसे अनदेखा कर जाने लगा तो अरुणा ने उसके सामने खड़े होकर बात करने की कोशिश की। नरेंद्र उसको भी अनसुना करके जाने लगा तब अरुणा ने जबरदस्ती उसे पकड़ कर कहा, ''नरेंद्र, तुम मुझसे बोलते क्यों नहीं।

यदि मुझसे गलती हुई तो मुझे डाँटो, चाहो तो मार भी लो; पर प्लीज इस तरह चुप मत रहो।''

नरेंद्र कुछ नहीं बोला। वह सिर्फ बुझी सी निगाहों से अरुणा को देखता रहा। नरेंद्र की आँखों में न क्रोध था न नफरत। मात्र विषाद था। विषाद की छाया इतनी गहरी थी कि अरुणा स्वयं काँप उठी। उसकी पकड़ ढीली पड़ गई। नरेंद्र बगैर कुछ बोले बाहर चला गया।

नरेंद्र की आँखों में इतनी वेदना देख अरुणा का हमेशा प्रसन्न रहने वाला मन कुम्हला गया। उसको पहली बार एहसास हुआ कि नरेंद्र के अंदर कहीं कुछ मर सा गया है, उसकी आत्मा खत्म हो गई है। नरेंद्र मात्र शरीर से जीवित है, मात्र चलती फिरती लाश...।

अरुणा को मालूम था कि उससे शादी के पहले नरेंद्र की महिला मित्रों का दायरा काफी बड़ा था। कुछ-कुछ कैसानोवा जैसी ख्याति थी उसकी। परंतु शादी के बाद वह एक और केवल एक अरुणा और उसकी कला के प्रति ही समर्पित रह गया। उसके चारो तरफ मँडराने वाली तितलियाँ एकदम अदृश्य हो गईं। मित्र कहते, ''नरेंद्र, तुम्हारे जैसे सजीले और धनवान युवक का मात्र एक ही स्त्री के पल्लू से बँधे रहना सारी पुरुष जाति के लिए कलंक है।''

नरेंद्र प्रत्युत्तर में मात्र मुस्करा देता।

ऐसे पति से विश्वासघात यह तो वास्तव में क्षम्य नहीं था।

X X X X X

इस तथ्य से परिचित होने के बाद भी अरुणा का अपराधी मन तिरस्कार के दंश से विद्रोही हो उठा। वह अहंकार के साथ उठ खड़ी हुई। उसके मन ने कहा कि अरुणा कोई अबला नहीं है जो नरेंद्र के बिना जीवित नहीं रह सकती। वह स्वयं सक्षम है। इन परिस्थितियों में किसी को भी उसे अपमानित करने का अधिकार नहीं है, चाहे वह उसका पति ही क्यों न हो। रही नरेंद्र के दु:ख और विषाद की बात ड्रामा भी तो हो सकती है। इसी आवरण के पीछे नरेंद्र उसे लज्जित अपमानित कर तोड़ना चाहता है। मन ने फिर एक बार उसका साथ दिया। नहीं, कभी नहीं! वह ऐसा कभी होने नहीं देगी।

संघर्ष की मुद्रा में आते ही अरुणा के आँसू सूख गए। उसने फौरन अपने ट्रूप मैनेजर को फोन मिलाया बोली, ''मैनेजर साहब, मैं आज से ठीक 15 दिन के बाद एक नृत्य-नाटिका करने जा रही हूँ। शहर का बेस्ट थियेटर बुक कर लीजिए और आज शाम से ही बाबा से बात कर सारी टीम रिहर्सल शुरू कर देगी। हाँ, याद रखिये यह प्रदर्शन सर्वोत्कृष्ट होना चाहिए।'' मैनेजर का उत्तर सुने बिना ही उसने फोन रख दिया। शाम 5 बजे ही वह रिहर्सल के लिए पहुँच गयी।

पूरी ट्रूप ने अरुणा को रिहर्सल में इतना लीन कभी नहीं पाया था। उसकी लगन से प्रेरित होकर उसकी पूरी टीम अपना सर्वश्रेष्ठ कार्यक्रम देने को आकुल दिखी।

क्यों न हो, यह नारी के आत्म सम्मान का प्रश्न जो था। नरेंद्र उसे एक साधारण, पति के तिरस्कार से टूटी हुई, केचुए के समान स्त्री बनाना चाहता था। वह चाहता है कि अरुणा उसके सामने रोए, गिड़गिड़ाए, तो यह उसकी भूल है। अरुणा सिद्ध करना चाहती थी कि वह नरेंद्र के अतिरिक्त भी पहचान रखती है।

अतएव सबसे अच्छा थियेटर बुक हुआ था जिसका किराया लाखों रुपये में था। इसलिए सबसे सस्ते टिकट का मूल्य 10000 रुपये से प्रारम्भ होता था और 50000 रुपये तक जाता था। सबसे आगे की सीट केवल विशिष्ट व्यक्तियों के लिए ही आरक्षित थी। इनके लिए पास व निमंत्रण कार्ड नि:शुल्क बाँटे गये। इनमें से एक नाम नरेंद्र का भी था।

कार्यक्रम का दिन आ पहुँचा, सभी पास व निमंत्रण कार्ड्स तो भेजे जा चुके थे परंतु बुकिंग विंडो से एक भी टिकट नहीं बिका था; प्रतीक्षा और आशा थी कि शो प्रारम्भ होने से पहले कम से कम इतने टिकट तो बिक ही जायेंगे जिससे आयोजन का खर्चा निकल आयेगा।

आशावान होना एक सद्‌गुण है। यह आपको कठिन समय में अवसाद से बचाता है। वहीं आशा एक मजबूरी भी है। जब हम कुछ नहीं कर पाते तब सिर्फ आशावान बने रहना ही एक मात्र विकल्प रह जाता है। आशाएँ जब फलीभूत होती हैं तो हम प्रसन्न होते हैं और अपनी मेहनत को सराहते और श्रेय देते हैं; परंतु जब आशाएँ फलीभूत नहीं होतीं

हैं तब हम मात्र दैव को ही दोष देते हैं। आशाओं का विफल होना वास्तव में हमें चिंतन करने तथा दोबारा प्रयत्न करने को प्रेरित करता है।

प्रतीक्षा का समय समाप्त हो हुआ। कार्यक्रम प्रारम्भ करने का समय हो चुका था, परन्तु हाल में एक भी दर्शक नहीं था। पूरा हाल खाली था। यहाँ तक कि नि:शुल्क पास वाले दर्शक भी नहीं आये। ट्रूप के सदस्यों के चेहरों पर चिंता था, वहीं अरुणा का चेहरा दर्प और आवेश से दीप्त था। वह हारना जानती ही नहीं थी। उसने नृत्य नाटिका को समय से प्रारम्भ करने को कहा। उसका तर्क था कि ललित कलाएं मात्र धनोपार्जन हेतु नहीं होती हैं, 'स्वांत: सुखाय' भी होती हैं।

बहरहाल, कार्यक्रम समय पर प्रारम्भ हुआ कलाकार ने दिल लगाकर कार्य किया। आत्मिक संतोष तो मिला, फिर भी कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य पूरा नहीं हो सका। जिस आत्मनिर्भरता को वह नरेंद्र को दिखाना चाहती थी वह पूरी नहीं हुई। हाँ, अरुणा को यह अवश्य पता चल गया कि उसकी वह गलती जिसे अभी तक वह अपने घर की चहारदीवारी के अंदर की बात मानती थी, वह जगजाहिर हो चुकी थी।

अभिजात्य वर्ग की एक विशेषता है- वह समस्त अनाचारों में लिप्त रहते हुए भी सामाजिक रूप से साफ सुथरे बने रहना चाहता है। अपनी कीर्ति में उन्हें चंद्रमा का सा दाग स्वीकार नहीं। जो लोग कुछ दिन पहले अरुणा के शो में भीड़ लगाये रहते थे वह अरुणा से किनारा कर चुके थे। उसने अपनी किट्टी की मित्रों को फोन किया, जिन्हें काम्प्लीमेंट्री पास भेजा था, किसी ने भी उसका फोन नहीं उठाया।

घर पहुँच कर जब अरुणा के मन का विद्रोह और रोष कम हुआ तो आज के कार्यक्रम की विफलता के परिणाम समझ में आने लगे। यह एक कार्यक्रम की विफलता ही नहीं थी, इसके आर्थिक दुष्परिणाम भी थे। साज-सज्जा, विज्ञापन, महँगे हाल का खर्चा, ट्रूप का वेतन आदि मिलाकर बहुत बड़ी आर्थिक हानि।

अगले शनिवार को अरुणा के ग्रुप की किटी-पार्टी होनी थी। सोचा सभी को कार्यक्रम में न आने के उलाहने के साथ ही विमर्श होगा कि आगे क्या और कैसे किया जाय? उसे अभी भी अपनी किटी मित्रों पर

बहुत भरोसा था। नियत समय पर वह कार में बैठी। आज वह खुद ड्राइव करने का मन बना चुकी थी। उसने सीटबेल्ट बाँधी ही थी कि मोबाइल बज उठा। उसके फोन उठाते ही उधर से आवाज आई ''अरुणा जी, किटी आज न होकर अगले शनिवार को होगी।'' कुछ देर की चुप्पी के बाद उधर से फिर आवाज आई ''किटी पार्टी ने एकमत से निश्चय किया है कि तुम्हें अब किटी में आने की जरूरत नहीं है, और हाँ, दूसरी मीट में ही तुम्हारी किटी निकल आई थी। सभी सदस्यों का आग्रह है कि तुम किटी का एमाउंट वापस कर दो।'' इतना कह कर मोबाइल स्विच आफ हो गया।

किटी का एमाउण्ट वापस करना है...। उसने हिसाब लगाया। 22 लोगों की एक किटी की कुल राशि लगभग 80 लाख रुपया...। अरुणा को पसीना आ गया। हताशा में वह स्टीयरिंग पर सिर रखकर थोड़ी देर बैठी रही। उसका मस्तिष्क सुन्न हो चुका था। अरुणा को जीवन में पहली बार भगवान् की याद आई। उसे उस भगवान् की याद आई जिसका अस्तित्व उसने कभी स्वीकार नहीं किया था।

उसके जीवन भर की पूँजी का बहुत बड़ा हिस्सा मात्र एक हफ्ते में डूब चुका था।

X X X X X

थोड़ी ही देर में अरुणा का मन स्थिर हो गया। अरुणा ने जब से होश संभाला तब से वह संघर्ष ही तो कर रही थी। वापस घर आकर सबसे पहले उसने किटी की राशि वापस भेज दी। कपड़े बदलकर मूड ठीक करने की नियत से वह टीवी खोलकर बैठ गई। टीवी पर न्यूज चल रही थी जिसमें अरुणा की जरा भी रुचि नहीं थी। एकाएक पूरे टीवी स्क्रीन पर ब्रेकिंग न्यूज का कैप्शन आया और एक जानी पहचानी बहुमंजिला इमारत की तस्वीर स्क्रीन पर आने लगी। उद्घोषक ने बताया कि अरबों की मिल्कियत वाली मल्टीनेशनल कंपनी के सीईओ नरेंद्र ने अपने पद से इस्तीफा दे दिया। अरुणा सतर्क होकर बैठ गई। दिखाई जा रही बहुमंजिला इमारत नरेंद्र की कपंनी का हेड आफिस था।

तभी स्क्रीन पर नरेंद्र की शक्ल उभरी। सुंदर और आकर्षक तो वह

था ही, इस समय बहुत संयत और गंभीर लग रहा था। उसके मुँह के सामने कई टीवी चैनलों के माइक लगे हुए थे। एक ने पूछा, ''नरेंद्र जी, इतनी बड़ी कंपनी जो आपकी लीडरशिप में काफी प्रगति कर रही थी उसे आप एकाएक छोड़ देंगे?''

''हाँ'' नरेंन्द्र का संक्षिप्त उत्तर था।

दूसरा चैनल ''क्या आप इससे भी बड़े पैकेज पर किसी अन्य कंपनी में जा रहे हैं?''

''नहीं, मेरा मन अब इस चमक-दमक वाली जिन्दगी से भर गया है। अब मैं शांतिपूर्वक परमार्थ सेवा में लगना चाहता हूँ।''

अरुणा के लिए यह सूचना एक बम विस्फोट के समान था। उसकी अंतरात्मा से पहला प्रश्न उठा कि कहीं नरेंद्र के वैराग्य का कारण उसकी वह एक भूल थी? उसका मन कचोट उठा। परंतु शीघ्र ही नरेंद्र के इस निर्णय के आर्थिक पक्ष ने उसे पूरी तरह तोड़ दिया। उसकी स्वयं की आर्थिक हानि के बाद नरेंद्र की सैलरी भी बंद। अब खर्चा कैसे चलेगा? उसकी बढ़ी हुई जरूरतें कैसे पूरी होंगी? क्या उसे एक बार फिर उसी गरीबी का सामना करना पड़ेगा जिससे वह बड़ी मुश्किल से निकल पाई थी।

वह धीरे से उठी, मेडिसिन कबर्ड से उसने नींद की दो गोलियाँ निकाल, बिना पानी के ही निगल कर चुपचाप बेड पर पड़ गई। हताशा में जब कोई रास्ता न सूझे तब नींद की गोद में जाना ही कल्याणकारी होता है।

X X X X X

नरेंद्र कब घर लौटा, क्या खाया? खाया भी या नहीं खाया? अरुणा को नींद में कुछ भी नहीं पता चला। जब उसकी नींद खुली तो अगले दिन की दोपहर हो चुकी थी। उसका मुँह बुरी तरह से सूख रहा था, सिर दर्द से फटा जा रहा था। किसी तरह से वह उठी। पानी पिया, तब कहीं थोड़ी सी शांति मिली। मगर तत्काल ही कल रात की चिंता, जिसे नींद की गोलियों ने भुला दिया था, दुगने वेग से वापस आ गईं। मन हुआ कि फिर गोली खा कर सो जाए, पर दिल ने कहा सोते रहना कोई निश्चित उपाय नहीं। इसलिए वह नए

सिरे से हर विकल्प पर विचार करने लगी। परेशानियों का मुकाबला करने का दृढ़ निश्चय ही आधी परेशानियों को दूर कर देता है। उसका सबसे पहला निर्णय था कि वह ट्रूप का फाइनल भुगतान कर दे। बेकार में उनको लटकाना उचित नहीं है। फिर बेवजह उन्हें 'रिटेनर मनी' क्यों दी जाय। उसने मैनेजर को बुलाकर सबके पेमेंट कर देने को बोला। अरुणा ने मैनेजर को भी बोला कि अब वह मैनेजर को भी नहीं एफोर्ड कर सकती इसलिए वह अपना भी फाइनल पेमेंट ले ले।

सबका पेमेंट करने के बाद ही अरुणा ने चैन की साँस ली। अरुणा के पास अभी भी इतनी जमापूँजी थी कि उसका जीवन निर्वाह हो सकता है। मगर शायद दुर्भाग्य इतने से ही संतुष्ट नहीं हुआ।

X X X X X

अगले दिन सुबह काले कोट धारी वकील एक नोटिस दे गया। नोटिस का सारांश था कि नरेंद्र की गारंटी पर एक विला के लिया अरुणा द्वारा लोन अब तुरंत ही वापस करना होगा। नरेंद्र के इस्तीफे के बाद सैलरी खत्म होने की वजह से नरेंद्र की गारंटी स्वत: समाप्त हो गई। अरुणा या तो हफ्ते भर में दूसरा गारंटर लाये वरना लोन वापस करे। दूसरा गारंटर ऐसी परिस्थितियों में कहाँ मिलेगा, अत: अरुणा ने लोन वापस करना तय किया लोन भुगतान में उसके गहने और कार भी बिक गई।

घर आने पर एक अनजाने गार्ड ने उसे घर में घुसने से रोका। गुस्से से वह फट पड़ने वाली ही थी कि नरेंद्र का ड्राइवर गाड़ी से आकर गेट पर रुका।

ड्राइवर चेहरे से दु:खी लग रहा था। उसने लगभग रोते हुए बताया कि साहब ने अपनी सारी प्रापर्टी जिसमें यह बंगला और कार शामिल है को बेचकर एक धर्मार्थ ट्रस्ट को दान दे दिया है।

अरुणा अब और सहन करने की स्थिति में नहीं रह गई। उसे चक्कर आ गया। यदि ड्राइवर ने सहारा न दिया होता तो अरुणा गिर पड़ी होती। ड्राइवर ने उसे गाड़ी में बैठाकर एसी आन कर दिया और पानी पिलाया। अरुणा के कुछ आश्वस्त होने पर ड्राइवर ने कहा, ''मैडम, कार के साथ मैं भी अब दूसरे मालिक का मुलाजिम हो गया हूँ। चलिये, मैं

आपको आपके नए घर तक छोड़ दूँ।''

अरुणा की प्रश्नवाचक मुद्रा देखकर ड्राइवर ने कहा ''नहीं इसमें कोई बड़ी बात नहीं मैं आपको आपके घर आसानी से ड्राप कर दूँगा।''

अरुणा गाड़ी से अपने नए घर पहुँची। नया घर एक मध्यम श्रेणी की चाल में था जहाँ कामन टाइलेट सुविधा थी। अरुणा को लगा कि वह एक बार फिर से अनाथालय पहुँच गई है।

X X X X X

''सच है करुणा, जो जितना ऊपर उठता है वह उतनी ही तेजी से मुँह के बल गिरता भी है।''

अरुणा के इस सम्बोधन से करुणा के जो आँसू आँखों में ही सीमित थे, जैसे उनका बाँध टूट गया हो। फफक कर रो पड़ी। विमान में पड़ोस की कुर्सी पर बैठा सहयात्री उसे रोता देख हतप्रभ हो गया। उसने बेल बजाकर एयर होस्टेस को बुलाकर रोती करुणा की तरफ इशारा किया। रोता देख होस्टेस भी घबरा गई ''मे आई हेल्प यू मैम? (क्या मैं आपकी कुछ सहायता कर सकती हूँ? मैम)''

''नो नथिंग, जस्ट एन इमोशनल आउटबर्स्ट (कुछ नहीं केवल मनोद्वेग)'' फिर शिष्टता के नाते करुणा ने एक गिलास पानी माँगा।

पानी पीने के बाद पत्र पढ़ने के पहले उसने भगवान् से प्रार्थना की अब आगे अरुणा पर कोई नया तूफान न आए। मगर बुरे समय में प्रार्थना भी सफल नहीं होती। आगे करुणा ने लिखा कि किस प्रकार नरेंद्र लातूर में भूकंप पीड़ितों की सहायता करने लातूर गया और वहाँ भूकंप के बाद फैले प्लेग की महामारी में मरीजों की सेवा करते करते स्वयं ब्यूबानिक प्लेग से ग्रसित हो गया।

करुणा, अभी तक मैं समझ रही थी कि नरेंद्र ने मुझे प्रताड़ित करने के लिए पहले मेरे सारे पंख काट दिये और अंतिम सजा देने के लिए मुझे वह अपने साथ लातूर लेकर आया है। हालाँकि, उसके साथ लातूर आने का फैसला भी स्वयं मेरा था। नरेंद्र ने मुझे एक बार भी प्रेस नहीं किया था।

आईसीयू में नरेंद्र के चिकित्सक ने मुझे बताया कि अब प्लेग उतनी

भयानक बीमारी नहीं रह गई, जितनी पहले थी। ब्यूबानिक प्लेग (प्लेग निमोनिया) अब लाइलाज मर्ज नहीं रहा। फिर भी जाने क्यों, दवाइयाँ नरेंद्र जी पर असर ही नहीं कर रही हैं। संभवत: ये जीने की आशा ही छोड़ चुके हैं। ऐसा क्यों अरुणा जी...? आप उनकी पत्नी हैं। शायद आप इनकी निराशा का कारण जानती हों। यदि हाँ तो हमसे शेयर कीजिये ताकि हमलोग इनकी कुछ मदद कर सकें।

करुणा, मैं किस प्रकार से डॉक्टर को बताती कि यह मेरी एक गलती का बदला लेने के लिए मुझे तड़पा रहे हैं। फिर भी मैंने डॉक्टर से वादा किया कि यदि ऐसा कुछ मेरी समझ में आयेगा मैं बताऊँगी।

मैंने डॉक्टर के कथन को भी मुझे परेशान करने के लिए नरेंद्र के षड्यंत्र का हिस्सा माना। वहाँ से लौटकर मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि इस आदमी के साथ अब नहीं रह सकती। मैं वहाँ से जाने के लिए सामान पैक कर रही थी कि डॉक्टर ने फोन पर नरेंद्र की मृत्यु की सूचना दी।

करुणा, मैं सन्न रह गई। नरेंद्र वाकई में मरणासन्न था, जब मैं उसके जीवन से निकल जाने का उपक्रम कर रही थी। जिसे मैं नाटक समझ रही थी वह बड़ी भयंकर वास्तविकता थी।

मैं इतनी क्रूर कैसे हो गई करुणा? इतनी क्रूर कैसे हो गई?

X X X X X

करुणा ने पत्र पढ़ना बंद कर दिया। जब करुणा का हृदय इस कथा से विदीर्ण हो गया तो अरुणा का क्या हाल हुआ होगा, सोचकर करुणा बहुत देर तक सुबकती रही।

तभी माइक पर पाइलट की आवाज उभरी, ''हम लोग अपने गंतव्य पर लगभग पहुँच चुके हैं। बीस मिनट के अंदर ही आपका प्लेन लैंड कर जाएगा। कृपया अपनी सीटबेल्ट बाँध लें।''

उतरने के पहले पत्र समाप्त करने की नीयत से करुणा ने पत्र फिर से पढ़ना शुरू किया।

अरुणा ने लिखा था कि यह सूचना मिलते ही मैं अस्पताल भागी। डॉक्टर ने बताया कि अरुणा नरेंद्र के पार्थिव शरीर को केवल दूर से देख

सकती है। रोग फैलने न पाये इसलिए सरकार बॉडी का डिस्पोसल स्वयं कराएगी। इसके बाद के संस्कार के लिए एशेज अरुणा को दे दिये जायेंगे।''

अग्नि से शरीर के साथ रोग भी खत्म हो जाएगा। इसीलिए अग्नि को 'पावक' कहते हैं।

अस्थियों के साथ डॉक्टर ने अरुणा को एक पत्र भी सौंपा, जो अरुणा को संबोधित था। नरेंद्र ने कहा था कि यदि वह ठीक हो जाए तो यह उसे वापस कर दिया जाय अन्यथा मृत्योपरांत ही मेरी पत्नी को दिया जाय।

''अरुणा, इतना सब होने के बाद भी मैं तुमसे उतना ही प्यार करता हूँ जितना कि पहले करता था। गलतियाँ सबसे होती हैं तुमसे भी हुई; कोई बात नहीं। मगर मैं यह सोचकर घुला जा रहा हूँ कि तुम्हारे इस कदम के पीछे कहीं कोई मेरी चूक तो नहीं है? कहीं कोई कमी मुझमें ही रह गई होगी जिसने तुम्हें ऐसा करने पर मजबूर कर दिया।

हो सकता है कि मैं पैसा कमाने में अधिक व्यस्त हो गया, और तुम्हारा पर्याप्त ध्यान नहीं रख सका। इसलिए मैं संपत्ति से दूर हो गया। वह स्थान और शहर छोड़ा कि तुम्हें परिचितों से मुँह न छुपाना पड़े। मगर मेरे द्वारा लिया हर कदम उल्टा ही पड़ा। तुम्हारी आँखों की नफरत बढ़ती गई। सेवा कार्य में थोड़ी शांति मिलती थी। लोगों ने कहा भयानक बीमारी से बचाव के साधन अपनाऊँ। मगर मेरा मानना था कि मैं तुम्हारे प्रेम के सहारे सुरक्षित रहूँगा, और यदि प्यार ही नहीं रहा तो जीने का कोई अर्थ नहीं। यह पत्र तुम्हें जब मिलेगा तब तक यह तय हो जायेगा कि तुम्हारे दिल में केवल नफरत ही है या कुछ और। अच्छा विदा!

मैंने पूरा प्रयास किया।''

करुणा, सोचो वह भला आदमी मेरी गलती और नफरत के बावजूद मेरे प्यार को तरसता रहा...।

करुणा, आज मैं नरेंद्र के प्रति सारी जिम्मेदारी पूरी कर यह पत्र तुम्हें फाइनली पोस्ट करने की स्थिति में पहुँच गई हूँ। अब मेरे जीवन का कोई अर्थ नहीं रहा।''

हंसनी... अरुणा ने लिखा था, ''करुणा, अगले जन्म में मैं हंसनी

होना चाहूंगी। जानती हो क्यों? बताऊँगी तो हँसोगी। हंसनी सुंदर तो होती ही है, पर उसकी एक विशेषता होती है। हंस का जोड़ा हमेशा एक दूसरे के प्रति वफादार रहता है। कहा जाता है कि यदि दुर्भाग्यवश यदि नर हंस की मृत्यु हो जाए तो हंसनी अपनी सारी उम्र हंस की विरह में व्यतीत कर देती है। वह दुबारा फिर जोड़ा नहीं बनाती। है न यह कितनी अद्‌भुत बात...। हंसनी अपने हंस से मिलने जा चुकी होगी।''

पत्र समाप्त हो गया। करुणा के आँसू सूख गए थे पर दिल भारी हो हो गया था। प्लेन लैंड करने हेतु काफी नीचे आ चुका था। प्लेन का टायर धरती को कभी भी छू सकता था। एकाएक करुणा ने साइड विंडो से बाहर देखा। पौ फट चुकी थी; बाल रवि क्षितिज से उदय हो रहा था, जिसके आलोक से आसमान में छितरे छुटपुट बादल सिंदूरी रंग से भर गए थे। तभी आकाश पर हंसों का एक झुंड जाता दिखा। नीले आसमान की पृष्ठभूमि में धवल हंसों की शानदार उड़ान का एक अद्‌भुत दृश्य था। करुणा का मन उत्फुल हो उठा, तभी उसकी निगाह झुंड से थोड़ी दूरी पर एक अकेले हंस पर पड़ी जो बहुत मंद गति से झुंड के पीछे-पीछे जा रहा था...।

करुणा के दिल को धक्का सा लगा। क्या यह एकाकी परवाज हंसनी तो नहीं है। अपने हंस की वियोगिनी हंसनी...?

●

बुढ़ौती में ससुराल

मुझे समझ नहीं आ रहा था या मैं समझना नहीं चाहता था कि बुढ़ौती में श्रीमती जी को एकाएक मायके जाने की क्या सूझी। हुआ यों कि रिटायरमेंट के पहले हम सभी अपने बेटी बेटों के ब्याह से निपट कर पोते-पोती वाले हो चुके थे। उनका मुंडन-छेदना भी हो चुका था। इसलिए किसी के यहाँ जाने या किसी को अपने यहाँ बुलाने का कोई बहाना भी नहीं बन पाता है। धन्य हो बुद्धूबक्सा (टीवी) और व्हाट्स एप जो श्रीमती जी का मन लगाए रहता था। मैंने अपने को लिखने पढ़ने में लगा लिया था। बच्चों और उनके बच्चों के फोन पारिवारिक होने की याद दिला देते थे। गो कि, सरकारी पेंशन पर ऐश हो रही थी मगर ऐसी एकरस जिंदगी में पोस्टमैन ने भूचाल ला दिया।

एक दिन हमारे लेटरबाक्स में, जिसकी महीनों खाली पड़े रहने की आदत सी हो गई थी, एक बड़ा रंगीन लिफाफा गूलर के फूल की तरह नजर आया। मैं लेकर आया, पत्नी ने बड़े चाव से खोला और इतनी प्रसन्नता से उछल पड़ीं जैसे व्हाट्स एप पर कोई बढ़िया जोक आ गया हो। उनके मायके में भतीजे की शादी थी। श्रीमती जी ने शादी की डेट देखे बिना ही ऐलान कर दिया कि **''उन्हें इस शादी में जाना है।''**

मैंने कहा, ''भागवान्, देख तो लो, शादी की डेट निकल तो नहीं गई, आज कल मान्यों को लोग ऐसे ही सूचना देते हैं, कि सूचना भी कर दी और मान्यों पर कुछ खर्च भी न करना पड़े। शिकवा करने पर तोहमत पोस्ट आफिस पर।''

भागवान् की खुशी को गुस्से में तब्दील होते थोड़ी भी देर नहीं लगी। बोलीं, ''तुम ही डेट देखो, मेरे पास ऐनक नहीं है।'' कहकर कार्ड मेरी तरफ ऐसे बढ़ा दिया जैसे मैं हमेशा ऐनक ही लगाए रहता हूँ। फिर भी जल्दी से ऐनक ढूँढ़ कर तारीख पढ़ी तो कमबख्त तीन हफ्ते बाद की थी।

कोई बचाव नहीं था। उन्होंने फर्मान सुनाया, ''जल्दी से टिकट बुक करा लो। रात को सोते हुए चलेंगे सुबह एकदम फ्रेश पहुँच लेंगे।''

रात का सफर। पहले तो ठीक लगता था। गाड़ी बाद में चलती थी हम पहले सो जाते थे; पर अब बंद जगह नींद ही नहीं आती है। जब तक नींद आये-आये तब तक गंतव्य स्टेशन ही आ जाता है। एक जगह रहते-रहते जगह बदलने से नींद ही नहीं आती, डिस्टर्ब रहती है। शायद इसी को अटैचमेंट या मोह कहते हैं। फिर मन ने कहा- ''ज्ञान की बातें छोड़ो, इस मुसीबत को टालने का प्रयास करो।'' मैंने श्रीमती जी के हाथ में कार्ड वापस देते हुए कहा, ''मुबारक हो, बहुत अर्से के बाद तुम्हें मायके वालों ने याद किया। तुम बैठो, मैं तुम्हारे लिये चाय बनाकर लाता हूँ।'' इसके पहले मेरी इस दरियादिली को पत्नी भाँप पाए, मैं किचेन को खिसक लिया। वास्तव में मैं अपना अगला 'मूव' प्लान करना चाहता था। अगर कुछ देर वहाँ और रुकता तो श्रीमती जी पूरा प्रोग्राम तय कर देतीं जिससे हट पाना असंभव होता।

X X X X X

किचन भी सोचने की अच्छी जगह है। जो लोग कुर्सी, कमोड या स्टडी में मनन करते हैं उनको मेरी सलाह है कि किचन को भी एक मौका दें। इससे पत्नी तो प्रसन्न होती ही है ख्यालात भी ऊँचे दर्जे के आते हैं। बहरहाल हाथ में 'ताज़ा' चाय का स्टीमिंग कप और जेहन में ताज़ातरीन आइडिया लिए मैं पत्नी के सामने हाजिर हुआ।

चाय का प्याला लेते समय मेरे चेहरे को श्रीमती जी गौर से स्टडी कर रहीं थी। औरतें बड़ी शक्की होती हैं।

उनकी खोजी निगाहों की आँच से पहले तो मैं सकपकाया फिर सारे सेल्फ कान्फिडेन्स को बटोर कर सामने की कुर्सी पर सोचने की मुद्रा में बैठ गया। श्रीमती जी ने चाय से ओब्लाइज होकर कोमल स्वर में पूछा, ''क्या सोच रहे हो, बीवी को चाय बनाकर पिलाने से क्या एहसासे कमतरी (इंफीरियारिटी-काम्प्लेक्स) महसूस हो रहा है।''

मैं उनके इस पैंतरे से बिलबिला कर बोल उठा, ''नहीं, रिटायरमेंट के बाद तो यह हर पति का फर्ज है।''

वह संतुष्ट हो गई, मैं सोच रहा था कि बात कैसे बढ़ाई जाए।

''भागवान् सोचो, सीनियर सिटीजन डिस्काउंट के बाद भी आने जाने में दस हजार रुपये तो लग ही जाएंगे, घर पर सिक्योरिटी का प्रबंध, गिफ्ट, नेग-न्योछावर कुछ ऊपर दरा के खर्चे जोड़ने के बाद यह न्योता कम से कम बीस हजार का तो पड़ेगा ही।'' मैंने एक वित्त-विशेषज्ञ सी गंभीर मुद्रा में कहा। एकाएक श्रीमती जी की पुतलियाँ सिकुड़ीं; मैंने इसे शुभ संकेत माना। स्त्रियों का अर्थशास्त्र अधिक प्रैक्टिकल होता है।

''हम लोग ऐसा भी तो कर सकते हैं कि वहाँ जाने के बजाय 5-6 हजार का ड्राफ्ट भेज देते हैं। वह लोग भी खुश हो जाएंगे आखिर निमंत्रणों का मकसद भी तो यही होता है। 10 रुपये के कार्ड पर 5-6 हजार की वसूली; घाटे का सौदा तो नहीं। हमारे 15 हजार बचेंगे, आने जाने की किल्लत से भी बचेंगे।'' मैं कूटनीतिज्ञ की भाँति मुस्कराया।

श्रीमती जी भभक उठीं, बोलीं, ''सठिया गए हो क्या?''

इसके पहले कि मैं याद दिलाऊँ कि मुझे सठियाये हुए अर्सा गुजर चुका, अब मैं सत्तरिया चुका हूँ; श्रीमती जी बोलीं, ''ससुराल आने जाने में कभी तुमने धेला भी खर्चा किया है? बड़े आए बचत करने वाले'' फिर उसी साँस में ''हमेशा मायके वालों ने आने जाने के टिकट के अलावा तुम्हारी जेब ऊपर से गरम की है। अरे, कुछ तो शर्म करो।''

मुझे शर्म से राहत देने के लिए मोबाइल में एसएमएस आने की घंटी बजी। देखा तो दो सेकेंड ए.सी. कन्फर्म टिकट की सूचना थी।

X X X X X

इस कमबख़्त को भी इसी समय आ पड़ना था। मैंने मन ही मन सोचा मगर जाहिरा तौर पर ऊपर से मुस्कराते हुए पत्नी को मोबाइल देकर कहा, ''तुम सही कहती हो भागवान्, तुम्हारे मायके वाले अभी भी तुमको बहुत चाहते हैं। यह देखो उसका प्रमाण।''

पत्नी ने मोबाइल वापस करते हुए मेरी ओर वैसी विजयी मुस्कान के साथ देखा जैसे सीज़र ने अलेक्जेंड्रिया की लाइब्रेरी को खाक करने के बाद देखा होगा।

तय हो गया कि अब जाना तो लाजिमी है ही... ''देन एंजवाय इट।''

मैं कपड़ों को सूटकेस में पैक करने लगा। हाँ, भूल न जाऊँ इस लिए शेविंग किट के साथ जुलाब कि टिकियाँ सबसे पहले रख लीं।

श्रीमती जी गिफ्ट-शॉपिंग के लिए लिस्ट बनाने में बिजी हो गईं।

यात्रा के दिन सुबह से ही कौन ताला कहाँ लगेगा, सब नल ठीक से बंद हैं कि नहीं, घर में एक बत्ती जलते रहना जरूरी है, सूटकेस को सीट के नीचे बाँधने वाली चेन और ताले के साथ-साथ पेपर सोप का पैकेट रखने की रिहर्सल चलती रही।

मुझे ट्रेवेल करने में उतनी परेशानी नहीं होती जितनी इस मॉक-ड्रिल में होती है। फिर भी, बीवी का इकलौता पति होने की यह सजा तो भुगतनी ही पड़ती है।

यह बात दीगर है कि इकलौता पति हूँ या नहीं यह बीवी ही जानती होगी। वैसे भी खुशफहमी में रहने की आदत हो जाती है।

X X X X X

'ओला' पहले से ही बुक कर दी थी सो टाइम से आ गई। हम लोग जय गणेश, जय गंगा मइया की, के साथ चल पड़े। श्रीमती जी सेल्फ हेल्प पर बिलीव करती थीं, इसलिए हमलोग कुली नहीं करते थे। तय था कि अपना-अपना सामान खुद उठाएंगे। सो, मैं एक बैग व दो व्हील ट्राली वाले सूटकेस लेकर, वहीं पत्नी अपना पर्स और हैंड-बैग लेकर ट्रेन पर बोर्ड होने प्लेटफार्म को चल पड़े।

''तुम इतना धीमा क्यों चल रहे हो? बोझा तो मैंने भी उठा रखा है।'' रास्ते भर वह मुझे टोकती रहीं। पर मैंने चुप रहने में ही भलाई समझी।

बोगी के सामने पहुँच कर चार्ट में सीट नंबर कन्फर्म करना आवश्यक होता है। पर ऐन वक़्त में दोनो हाथ भरे होने के कारण ऐनक निकालने में देरी हुई। पत्नी की ऐनक उनकी आँख पर लगी थी, सो वे झट सीट नंबर कन्फर्म कर कम्पार्टमेंट में चढ़ते हुए बुदबुदाईं ''कितने स्लो हो! जल्दी करो।''

दो सूटकेस एक बैग लेकर मैं तेजी से चढ़ा। बीच में भीड़ की धक्का-मुक्की झेलते जब तक बर्थ तक पहुँचा तब तक श्रीमती जी अपनी होठों की लिपस्टिक दो बार सँवार चुकी थीं। मुझे अर्दब में लेने

वाली ही थीं कि मेरी धौंकनी जैसी चलती साँस को देखकर चुप हो गईं। बोतल से पानी निकाल कर मुझे देते हुए बोलीं, ''कितनी जल्दी हाँफ जाते हो। कितनी बार कहा है कि सुबह शाम च्यवनप्राश ले लिया करो। पर कोई सुने तब ना।''

एक महिला सहयात्री ने मेरा फेवर लेते हुए कहा, ''अंकल जी कितना बोझ लेकर चढ़े हैं, यह तो देखिये।'' फिर अपने थुलथुल पति को देखती हुई बोली, ''अंकल जी की तो उमर भी हो चली। मेरे 'ये' तो 40 बरस में ही हाँफ जाते हैं।'' उसने भी अपने शौहर को अर्दब में लिया।

वह तो बेचारी मानवता के नाते या फिर अपने पति को पिलपिला करने के लिए बोली होगी, पर उसे क्या मालूम मुझे हफ्तों तक ताना सुनने को मिलेगा। ''लड़कियों के सामने बहुत जवान बनने का नाटक करते हो। अरे, एक सूटकेस मुझे ही पकड़ा देते। मैं अभी बूढ़ी तो हुई नहीं।''

बहरहाल उस महिला के कमेन्ट का यह असर हुआ कि श्रीमती जी सीट के नीचे रखे सूटकेसों को चेन से बाँधने लगीं। बूढ़ी और मोटी न होते हुए भी उनका पेट इस कदर दबने को तैयार न हुआ। एक बार के प्रयास में ही साँस फूल आई। उन्होंने मेरी तरफ देखा। मैंने फेथफुली उठ कर सूटकेसों को सीक्योर कर दिया। भला हुआ उस महिला ने इस बार कोई कमेन्ट न करके मुझे आने वाले तानों से बचा लिया।

X X X X X

बहरहाल, सामान को व्यवस्थित कर मैं सुस्ताने के लिए सीट पर बैठ गया। बेटर-हाफ ने पीने को पानी दिया तो पता चला कि गला काफी देर से सूख रहा था। पानी पीकर अच्छा लगा ही था कि श्रीमती जी की कोहनी का टिकोरा मेरी पसलियों में महसूस हुआ। मैंने प्रश्नवाचक भाव में भौहों को उचकाया। मैंडम ने धीरे से कहा, ''नीचे की दोनों सीटें हम लोगों की हैं। यह लोग एक नीचे की सीट कब्जियाना चाहते हैं। कुछ तो करो।''

उठने की इच्छा न होते हुए भी मैं उठा ऐनक निकाल कर मोबाईल में अपनी सीट का नंबर कन्फर्म करने की मुद्रा बनाई, फिर सीट के नंबर देखने का नाटक करते हुए बोला, ''हाँ, यह नीचे की दोनों सीट हम लोगों

की ही हैं।'' इस बार बगैर किसी प्रतिरोध के धरमपत्नी बहुत ही आज्ञाकारी मुद्रा में उठ खड़ी हुईं।

पत्नी के लेटने की व्यवस्था कर मैं इस उम्मीद से पीछे मुड़ा कि अब तक वह युगल शराफत से मेरी सीट खाली कर चुका होगा। पर यह क्या वह दोनों कानों में इयरफोन लगाये संगीत का आनंद ले रहे थे। मारे आनंद के आँखें भी मुँदी हुई थीं। मैंने हताशा से अपनी पत्नी की ओर देखा। वह फुसफुसाई ''सीट से हटना न पड़े इसलिए नाटक कर रहे हैं। इनकी समाधि तोड़ो।''

मैं अगला मूव सोच ही रहा था कि पत्नी का टोंगा लगा, ''आदमी को बोलो या कंधा थपथपाओ।'' मैंने वैसा ही किया। उसने कहीं सुदूर से वापस आती हुई मुद्रा में आँखे खोलीं।

''भाई जी, यह हम लोगों की सीटें हैं। हम लोग अब आराम करना चाहेंगे। आप कृपया अपनी-अपनी सीटों पर जाकर संगीत का आनंद लें।''

उसकी पत्नी अपने आप संगीत की दुनिया से वापस आती हुई बोली, ''भाई साहब! आप तो कितने फिट हैं! आप ही ऊपर की सीट पर चले जाइये। प्लीज...।''

यह जानते हुए भी कि उसका फिटनेस पर पिछला कमेन्ट और यह मादक आवाज वास्तव में मुझे उल्लू बनाकर अपना काम साधने के अलावा कुछ भी नहीं है। फिर भी एक तो सुंदर महिला, ऊपर से मुझे अंकल जी न कहकर भाई साहब कह रही थी। मैं मना नहीं कर पाया।

पति-पत्नी दोनों ने एक साथ मुझ पर थैंक झोंका। इसके तत्काल बाद ही वह दोनों क्रोध भरी मुद्रा में एक दूसरे को घूरने लगे। अंत में पति ने ही अपनी आँखे नीची कीं और बोला, ''देखो, मैं तो ऊपर चढ़ नहीं पाऊँगा। साधारण चलने में ही मेरी साँस फूल जाती है। डार्लिंग! ऐसा करो, तुम ही ऊपर चली जाओ। मैं अंकल जी की सीट पर नीचे ही लेट जाऊँगा।''

पति का वाक्य पूरा भी नहीं हुआ था कि ऐसा लगा कि ट्रेन पटरी से उतर गई। मोटे की स्लिम पत्नी लगभग चिंघाड़ती हुई बोली, ''लेडी को ऊपर की बर्थ पर जाने को बोलते हो। शर्म नहीं आती। मैंने ही अंकल

जी से अपने लिए सीट माँगी थी। उस पर से मोटे होने की दलील देते हैं। किसने कहा था कि इतना वजन बढ़ाओ।'' वह दोनो आपस में झगड़ने लगे।

एक बार फिर मेरी पत्नी ही सहाय हुई। उसने उठकर उस युगल को जोर से डाँटा, ''चो..प्प...। ट्रेन में सीन क्रिएट करते शर्म नहीं आती? एक बूढ़े आदमी की सीट छीनकर अब आपस में लड़ रहे हो। कुछ नहीं आप दोनों को यह नीचे की सीट नहीं मिलेगी। चलिये उठिये। इस पर मेरे मिस्टर ही लेटेंगे।'' श्रीमती जी ने अपना फैसला सुनाया और उनका सामान उतार कर साइड-बर्थ पर रख दिया। फिर मुझे जबरदस्ती उठाकर उस सीट पर दबाकर बैठा दिया। मैं भी ठसक कर बैठ गया। मेरे बैठने के दबाव से वह मोटा व्यक्ति असहज होकर उठ खड़ा हुआ। दूसरी बार में वह महिला मुझे अंकल कहकर मेरी सहानुभूति खो चुकी थी। मैंने उसको भी उठने का इशारा किया।

बहरहाल, पत्नी के इंटरवेंशन से प्राप्त नीचे वाली सीट पर मैं दवा खाकर सोने का प्रयास करने लगा। नींद न आये तो सन्नाटे में भी अजीब-अजीब आवाजें सुनाई पड़ने लगती हैं। लोगों के खर्राटे के अलावा भी कई और प्रकार की ध्वनियाँ और दुर्गंध नींद को रोक रहीं थीं। भारतीय-रेल तो खटर-पटर झटकों के लिए विख्यात है ही। 'प्रभु जी' भी कुछ नहीं बदल पाये। इस विश्लेषण और कम्पार्टमेंट में ध्वनि और गंध प्रदूषण को कोसते हुए आँख लगी ही थी कि श्रीमती जी ने जगाया, ''उठो! पाँच बज चुका है शेव-वेव करके तैयार हो लो। एक घंटे में स्टेशन आने वाला है।''

''अरे, शादी तो उनके बेटे की है। इस उम्र में मुझे क्या तैयार होना?'' मैंने अपना मत प्रस्तुत किया।

''इस उम्र में तैयार होने की ज्यादा जरूरत होती है।'' यह कहकर श्रीमती जी इतनी मोहक अदा से मुस्कराईं कि मेरी नींद उड़ गई। चेतन होने पर मैंने गौर किया कि देवी जी नख-शिख से दुरुस्त, कास्मेटिक्स एंड लिपिस्टिक्स से लैस मुस्करा रही थीं। ऐसी महिला का पति, जो इस उम्र में भी इतनी आकर्षक है, होने के नाते मेरी भी कुछ रेस्पान्सबिलिटी बनती

है कि कम से कम शेव तो कर ही लूँ...। शक्ल तो भगवान् की दी जैसी है, वैसी ही रहेगी।

चलती ट्रेन में शेव करते, चेहरे पर एक आध कट झेलते हुए प्लेटफार्म आते-आते मैं भी अपनी बीवी का शौहर लगने लायक हो गया। स्टेशन के बाहर निकलते ही ड्राइवर मेरे नाम का प्लेकार्ड लिए खड़ा था। मुझे देखकर शायद वह मानने को तैयार ही नहीं था कि इतनी शानदार एसी टैक्सी मेरे लिए भेजी गई होगी। उसको यकीन दिलाया कि मैं ही वह व्यक्ति हूँ जिसके लिए वह आया है; पर मेरी श्रीमती जी को देखने के बाद ही वह मेरी बात से मुतमइन हुआ।

बहरहाल, उसने हमें गंतव्य तक पहुँचाया।

X X X X X

घर पहुँचा, हमेशा की तरह दरवाजे पर मेरी सास बड़े उल्लास से हम लोगों का स्वागत करने खड़ी थीं। वही झक सफेद साड़ी, गौर वर्ण। हमेशा की तरह प्रभावशाली लग रहीं थीं। पत्नी लपक कर उनके गले मिलीं, दोनों इतने अरसे के बाद मिलने से कुछ भावुक भी हुईं। उनकी झप्पी के बाद मेरा नंबर आया। मैं भी हमेशा की तरह बड़े सम्मान से उनके चरण छूने झुका ही था कि, ''अरे...अरे... यह क्या करते हो का शोर हुआ।'' पत्नी ने मुझे झटके से खड़ा कर दिया, ''क्या गजब करते हो। यह तो तुम्हारी छोटी साली ऊषा है। इसके पैर क्यों छू रहे हो?''

मैं झटके से खड़ा हो गया। आसपास के लोग आश्चर्य से देख रहे थे, कुछ लौण्डे टाइप के युवकों के चेहरे पर मसखरी भरी मुस्कान थी। वह इसे उम्र का असर मान रहे थे। मैंने पाला संभालते हुए कहा, ''अरे, ऊषा, तुम तो एकदम अम्मा जी लगने लगी हो। वही पर्सनैलिटी, सुंदर गोरा चेहरा।'' मैंने पूरा अमूल मक्खन का लेप लगाया।

ऊषा प्रसन्न तो हुई पर खिसिया भी गई थी सो बोली, ''इस उम्र में भी जीजा जी बड़े जोकी हैं।''

मैंने उसके अंग्रेजी के ज्ञान पर तरस खाते हुए सोचा कि चलो इसने जोकर तो नहीं कहा।

हुआ यों कि बुजुर्ग लोग अपने कमरे में अपनी जवानी की फोटो ही

लगाते हैं। शीशे की सत्यता को नकारते रहते हैं। इसलिए उन्हें अपना बुढ़ापा नहीं दिखता। अपनी समकक्ष महिलाओं को 'माताजी' ही कहकर संबोधित करते हैं। वही मेरे साथ भी हुआ। तय किया कि लौटते ही घर में अपनी करेंट फोटो जरूर लगाऊँगा।

सब लोग आए, मिले, चाय नाश्ता हुआ फिर सभी हल्दी की रस्म में भाग लेने चल दिये। मुझे इन महिलाओं की रस्म में कोई दिलचस्पी नहीं थी। मैं वहीं पड़े दीवान पर लेट गया। रात में नींद की दवा, ऊपर से नींद भी पूरी नहीं हुई थी सो पेट भरते ही मुझे झपकी आने लगी। मेरी आँख लगी ही होगी कि ऊषा की एनआरआई बहू अपनी डेढ़ साल की बेटी को लेकर आई और मुझसे बोली, ''मौसा जी, अंदर बड़ा शोर हो रहा है। अगर कष्ट न हो तो बेटी को आपके पास लिटा दूँ। आपको कोई तकलीफ तो नहीं होगी?'' उसके पूछने के लहजे में शाइस्तगी थी।

मुझे याद है मैंने पूछा, ''पेशाब वगैरह तो नहीं करेगी?''

''नहीं, फिर भी डाइपर बँधा है।''

मैं आराम से सो गया। कितनी देर सोया पता नहीं पर नींद में भी महिलाओं की हँसी, खिलखिलाहट सुनाई पड़ती रही थी।

X X X X X

कब तक सोया राम जाने, पर जब नींद खुली तो मेरे माथे और चेहरे पर कुछ गीला महसूस हुआ। हाथ लगाकर देखा तो कोई पीली-पीली चीज लिपटी थी। मैं उठ बैठा। वही पदार्थ मेरे हाथ और घुटने पर भी लगा था। मैंने फौरन बगल में देखा। शिशु बालिका अपनी जगह पर नहीं थी। दो और दो को मिलाया तो सन्न...! हो न हो यह एनआरआई बहू की बेटी का ही किया धरा है। बेटी को हिंदुस्तान का पानी रास नहीं आया। इसीलिए इतना डायरिया हो गया कि डायपर भी कंट्रोल नहीं कर सका। ओवरफ्लो ने मुझे भी लीप दिया। बहू भी कैसी, जो अपनी बिटिया तो उठा ले गई, पर मुझे यूँ ही मजाक बनने के लिए छोड़ गई। कम से कम जगा तो देती। क्या सोचा था मौसा जी को पता ही नहीं चलेगा... नालायक।

आज दिन ही खराब है सुबह से ही कुछ ऐसा हो रहा है कि इज्जत का बार-बार फलूदा बन रहा है। फिर याद आया कि इससे पहले कोई

देखे, मुझे सफाई करके कपड़े बदल लेने चाहिए। मैं फौरन बाथरूम में दाखिल हो गया। सफाई करते समय ऐसा लगा जैसे कुछ महक रहा हो। मैं हँस पड़ा, लगा नींद की दवा का असर अभी गया नहीं तभी तो 'पॉटी' से भी खुशबू का एहसास हो रहा है।

बाथरूम से निकलते ही बीवी आ पहुँची। मैंने सुबह से अब तक की सारी भड़ास निकल दी, ''यह बर्ताव हो रहा है मेरे साथ तुम्हारे मायके में। अब यह नौबत आ गई की कल की आई बहुएँ भी मेरा निरादर करेंगी।''

पत्नी हतप्रभ कुछ देर बाद हौले से बोलीं, ''क्या हुआ क्या, यह तो बताओ?''

''बताऊँ क्या, तुम तो सट्ट से अंदर जनानखाने में ऐसे घुस गईं कि पूछो ही नहीं। भूल गई कि पिछले 42 सालों से शादीशुदा एक अदद पति भी आया है तुम्हारे साथ। उसका भी ध्यान रखना मायके में तुम्हारी ही जिम्मेदारी है।''

श्रीमती तुनक कर बोलीं, ''अच्छा जी, ऐसे बोल रहे हैं जैसे अपने मायके में आप मेरा बड़ा ध्यान देते थे। दिन भर मुझ पर क्या गुजरी यह पूछने की हिम्मत नहीं थी। बातें बनाते हैं।''

इस अप्रत्याशित काउंटर से मैं जमीन पर आ गया। पुचकारते हुए बोला, ''तुम तो पुरानी बातों का बखेड़ा लेकर बैठ गईं। हुआ यह कि तुम लोगों के जाते ही मुझे नींद आ गई। ऊषा की एनआरआई बहू मेरे पास अपनी नन्हीं बेटी सुला गई। उसकी बेटी ने सोते में ऐसी पॉटी की कि मुझे भी सान दिया। मेरे मत्थे, गाल, हाथ और घुटने सभी सान दिये। बहू ने यह सब देखा, मगर चुपके से अपनी बेटी उठा ले गई। मुझे उसी हाल में छोड़कर चली गयी। समझती होगी कि यह सब कैसे हुआ मुझे पता नहीं लगेगा।'' गुस्से से एक बार फिर मेरी साँस फूलने लगी। पर श्रीमती जी की मुस्कराहट एक कान से दूसरे कान तक फैल रही थी। बोलीं, ''क्यों बच्चे पर दोष मढ़ते हो? ऐसा तो नहीं तुम्हारा ही पेट सफर की वजह से खराब हो गया।'' कहकर अब वह उन्मुक्त भाव से हँस पड़ीं।

मैं झन्नाकर बोला, ''देखो भागवान्, अब तुम सरे-आम मेरी इनसल्ट

कर रही हो।''

तभी बहुत सारी साली, सलहजें और कुछ बहुयें भी आ गईं। सभी के चेहरे पर मुस्कान थी।

X X X X X

सबके सामने इज्जत तो खराब हो ही चुकी थी। मैं सोच रहा था कि ऐसे में मेरा रेस्पान्स क्या होना चाहिये। फिर आइडिया फूटा कि जब कुछ समझ में न आए तो चुटकुले से काम चलाना चाहिये। मैंने मजाक करते कहा ''ऊषा, तुम्हारी एनआरआई बहू, बेटी को क्या खिलाती है कि उसकी 'पॉटी' से चन्दन और कपूर की खुशबू आती है।''

अब तो कमरे में हँसी का भूचाल आ गया। ऊषा भी अपने पोपले मुँह से फों-फों करके हँस पड़ी। मेरा मजाक इतना उत्तम तो नहीं था। मैं हैरान था।

तभी पत्नी ने बड़े प्यार से मेरा हाथ पकड़ कर बैठाया बोलीं, ''वाकई कल रात ट्रेन पर तुम्हें नींद नहीं आई। तभी तुम दीवान पर ही सो गए। तुम्हारी साली सलहजे तुमसे हल्दी की रस्म निबाहने आईं थीं। तुम्हें जगाया पर तुम्हारी नींद नहीं खुली तो सबने सोते में ही तुम्हारे हल्दी लगा दी। हाँ, मसखरी में हल्दी कुछ ज्यादा ही लग गई। सभी ने रस्म के बाद मान्य का नेग तुम्हारी तकिया के नीचे रख दिया।''

मैंने देखा तकिया के नीचे हजार-हजार व पाँच सौ के कई नोट रखे थे। इतने रुपये देख मेरे चेहरे पर मुस्कराहट आनी लाजिमी थी। इतनी दक्षिणा में तो यदि पॉटी भी लग गई होती तो भी ज्यादा मलाल न होता।

X X X X X

बारात में पहनने के लिए पत्नी ने मेरे लिये सुरमई रंग का सूट सिलवाया था। सुरमई रंग उन्होंने यूँ पसंद किया था जिससे कि मेरा पक्का रंग कुछ कम स्याह दिखे। पर यहाँ तो मेरे लिये खास चकमक शेरवानी और पगड़ी की व्यवस्था थी। पहननी पड़ी। शेरवानी काफी शानदार थी। सभी ने शेरवानी की तारीफ भी की। संभवत: पहनने वाले की सूरत में तारीफ लायक कुछ था ही नहीं।

खैर, बारात की निकासी के पहले पगड़ी बँधाई का नेग, दूल्हे के

साथ सबसे उम्दा कार में बैठने का सम्मान, लड़की वालों के दरवाजे एक बार फिर मोटी दक्षिणा। तबीयत झक ही नहीं गार्डेन-गार्डेन थी। जयमाल के बाद फोटो सेशन। कोई महँगे मोबाइल में बातें करते हुए फोटो खींच रहा था, तो कोई कार्टून की तरह वर-वधू को आशीर्वाद देते और राम जाने कितनी मुद्राओं में लोग फोटो खिंचा रहे थे। मैं उनका बचकानापन देखकर खुश हो रहा था। मगर जब शादी के एल्बम में अपनी फोटो देखी तो शानदार शेरवानी और पगड़ी के मध्य एक बहुत ही मामूली सा चेहरा नजर आया, ऊपर से कैमरे के लेंस को एकटक देखने से आँखें भी कुछ भेंगी हो रही थीं। पूरे एल्बम में यदि कोई कार्टून लग रहा था, तो यह खाकसार था।

फोटो सेशन के बाद डिनर, फिर क्विक पाणिग्रहण व फेरे। पूरी शादी इतनी जल्दी समाप्त हो गई मानो नौशे के साथ-साथ सभी को हनीमून पर जाने की जल्दी हो रही हो। कुछ युवक बोतलें खुलने से बहक रहे थे, मगर मेरी आँखें बगैर नशे के ही मुँदी जाती थीं। मेरी उम्र का ध्यान रखते हुए मुझे पहले वापस भेज दिया गया। मुँह दिखाई, बहू भोज में कुछ जेब ढीली अवश्य हुई पर उससे दूना चलते समय विदाई में आ गया।

वर-वधू 'मधुर-यामिनी' के लिये रवाना हुए और हम लोग एक बार फिर से अपनी पुरानी रूटीन पर लौटने के लिए होम-बाउंड हो लिये।

जैसाकि बताया गया है कि हम लोग सेल्फ-हेल्प में बिलीव करते हैं, घर वापस आते समय भी हम लोगों ने कुली नहीं किया।

अब तक श्रीमती जी का 'ईगो' इतना ऊँचा और पर्स इतना भारी हो चुका था कि एक बैग, दो सूटकेस के अलावा पत्नी का हैंडबैग भी इसी नाचीज को ढोना पड़ा।

मेरी साँस फूल रही थी, पसीना धार से बह रहा था मगर... पत्नी समझ नहीं पा रही थी कि मैं इतना 'स्लो' क्यों हूँ?

●

वामपंथी चश्मा

देश की राजधानी में बहुश्रुत बुद्धिजीवियों की चरागाह के रूप में प्रसिद्ध एक कॉलेज है। इस कॉलेज के छात्र और शिक्षक सदैव सिक्के का दूसरा पहलू रखने के लिए विख्यात हैं। कभी-कभी अति-बुद्धिजीविता के सुरूर में वह कुछ ऐसा भी कह या कर जाते हैं जो देश और समाज के लिए घातक भी हो सकता है। पर इससे उन्हें क्या लेना-देना? वामपंथ तो देश दुनिया की सीमाएं मानता ही नहीं। उनके लिए सारी दुनिया एक है। केवल यही एक बिन्दु है जिस पर वह भारतीय संस्कृति से साम्यता रखते हैं। शास्त्रों ने ही सर्वप्रथम 'वसुधैव कुटुंबकम' का दर्शन प्रस्तुत किया और उस पर काफी कुछ अमल भी किया। परंतु इस कॉलेज का 'एलीट बुद्धिजीवी' वर्ग इसे कार्लमार्क्स द्वारा प्रतिपादित मानते हैं।

ऐसे एलीट कॉलेज के कुछ छात्रगण एक बार प्रगति मैदान में आयोजित पुस्तक मेले में गए। पुस्तक मेले में कई पंडाल लगे थे जहाँ लेखकगण अपनी नवीनतम् कृतियों को स्थापित साहित्यकारों से लोकार्पित कराकर अपना स्थान व पहचान बनाना चाहते थे। विषयों के अनुसार इन संगोष्ठियों में कभी-कभी उच्चस्तरीय व्याख्यान भी सुने जा सकते हैं। अत: यह पंडाल वास्तविक मनीषियों और 'स्यूडो इंटेलेक्चुअल्स' (छद्म-मनीषियों) का जमावाड़ा स्थल बन जाते हैं। हमारे प्रगतिशील छात्र भी ऐसी गोष्ठियों में भाग लेते और सरकार के अनुदान की राशि के बूते पर, काफी कार्नर में बैठ सुंदरियों पर दृष्टिपात करते हुए पंडाल में सुने गए वक्तव्यों पर विमर्श करते देखे जाते हैं।

प्रगति मैदान की ऐसी ही एक संध्या को प्रगतिशील छात्रों की चौकड़ी,मात्र चुहल के लिए एक ऐसे पंडाल में प्रवेश करते हैं संस्कृति की चर्चा हो रही थी। जहाँ भारतीय संस्कृति की चर्चा हो रही थी।

मंच पर एक धवल धोती-कुर्ता धारी वक्ता ध्वनि-संप्रेषक (माइक)

पर देख उनके चेहरे पर व्यंग्य मुस्कान तैर गई। चुहल का पूरा आनंद लेना है तो इस पोंगा पंडित की पूरी पोंगापंथी तो सुननी ही पड़ेगी, सोचकर वह सब धीरता से बैठे रहे। वक्ता गृहस्थ आश्रम को समाज का मेरुदंड बताते हुए एक पौराणिक कथा का दृष्टांत दे रहा था। वह कह रहा था-

''एक बहुत बड़े ऋषि, जो ज्ञान और ईश आराधना में लगे रहकर, तपस्वी सा जीवन व्यतीत कर रहे थे। वह स्त्री को नरक का द्वार मानते थे अत: स्त्री संसर्ग से विमुख, सभी सांसारिक बंधनों से दूर, वनवास में केवल पुण्य लाभ कर रहे थे। वह दिन में मात्र दो बार ही भोजन करते, वह भी कन्दमूलों का। वह 'स्वर्ग के आदम' की भाँति अन्न का सेवन नहीं करते थे।

ऐसे तपस्वी एक बार स्नान करने सरस्वती के घाट पर पहुंचे। उस समय उनके अंदर प्रभु-प्रेम, सरस्वती की तरंगों से अधिक ऊर्जस था। उन्होंने 'ऊँ नमो भगवते वासुदेवाय' का जाप करते हुए नदी में डुबकी लगाई। एक डुबकी में उनकी आँखें खुली थीं। निर्मल जल के अंदर के दृश्य को देखकर उनकी आँखें खुली की खुली ही रह गईं। इतने आनंदमय दृश्य की तो उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी। उन्होंने देखा एक मत्स्य परिवार पानी में विहार कर रहा था। मत्स्यराज आगे-आगे तैर रहे थे उनके पीछे उनका विशाल परिवार था। मत्स्यराज के बच्चे कभी उनके पास पहुँच कर स्नेह से उनके साथ तैरते, व उनसे तैरने की विभिन्न कलाएँ सीखते, कभी उनकी पत्नी उनके पास आकर उन्हें स्पर्श करती जिसका प्रति-उत्तर वह स्नेह भरे आलिंगन से देते। यह पारिवारिक दृश्य उनके मन में बस गया।

वह स्नान करके लौटे तो उनके मन में ईश-स्तुति के श्लोक नहीं थे बल्कि सुखद पारिवारिक जीवन के चित्र थे। उन्होंने मन में अपने एकाकी तपस्वी जीवन और मत्स्यराज के विवाहित जीवन की विवेचना की। एक ओर मत्स्यराज कितने सुखी थे वहीं वह स्वयं कितने अकेले। ईश्वर ने सृष्टि बनाई और उस प्रकृति की निरंतरता के लिए नर और मादा (पति-पत्नी) के रस पूर्ण सम्बन्ध बनाये। ईश्वर चाहता है कि उसके सभी प्राणी निरंतर वृद्धि करते रहें। यही प्रकृति की अभिलाषा है; इससे

दूर भागना पलायन। फिर जिस माँ से जन्म लिया वह नरक का द्वार कैसे हो सकती है? कहते हैं 'स्वर्ग कहीं दूर नहीं वह तुम्हारी माँ के चरणों में हैं, तो बच्चों की माँ 'ठगिनी' कैसे हो सकती है?'

उनके मन में तर्क उठा कि चारों आश्रम (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास) में गृहस्थ आश्रम ही बाकी तीनों आश्रम का पोषक है। बाकी तीनों आश्रम की जीविका भिक्षा पर आधारित हैं और भिक्षा उन्हें गृहस्थों से ही मिलती है। यदि स्वयं उनके पूर्वज भी गृहस्थी से विमुख हो गए होते तो स्वयं वह कैसे अस्तित्व में आए होते। वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि गृहस्थ जीवन सृष्टि की निरंतरता हेतु अनिवार्य है।

कई दिनों के विचार करने के उपरांत वह राजा के यहाँ गए और विवाह हेतु राजा से उनकी पुत्री का हाथ माँगा, जिसे राजा ने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

ऋषि गृहस्थ जीवन में रहकर ईश-आराधना करते रहे। उनका जो श्रम इंद्रिय निग्रह में लग जाता था वह मनन में लगने लगा। उनका गुरुकुल विश्रुत हुआ, ऋषि के शिष्यों और पुत्रों ने भी समुचित ख्याति प्राप्त की।

X X X X X

इससे अधिक वह एलीट बुद्धिजीवी सहन नहीं कर सके। एक ने ऊँची आवाज में 'धत्त' कहकर अपने संस्कार का परिचय दिया। सभी पंडाल के बाहर निकलकर मुँह और आँखों का स्वाद ठीक करने हेतु काफी कार्नर में पुनः स्थापित हो गये। चर्चा चल ही रही थी कि इन रूढ़िवादियों के चंगुल से भारत को कैसे छुड़ाया जाय। अधिकतर लोगों का विचार था कि रक्तिम क्रान्ति के अलावा कोई रास्ता नहीं है। स्टेलिन जैसी ही क्रांति के बगैर यह देश सड़-गलकर स्वयं नष्ट हो जायेगा। इस दीमक लगी व्यवस्था को ठोकर मारना उनका, उन जैसे बौद्धिक वर्ग का दायित्व है; जिससे एक नई व्यवस्था पनप सके।

तभी उनके एक साथी ने आकर बताया कि अमुक पंडाल में मोपासाँ की कहानियों पर परिचर्चा चल रही है। मोपासाँ...। पाश्चात्य लेखन पर चर्चा। आधी काफी छोड़कर वह सब तुरंत उस पंडाल की ओर चल पड़े।

पंडाल की चमक दमक प्रभावी थी। मंच पर वक्ता पाश्चात्य

वेषभूषा में सजे थे और मोपासाँ की एक कहानी के अंग्रेजी अनुवाद 'चाँदनी' के बारे में बता रहे थे-

''एक पादरी ईश्वर के प्रति अपनी निष्ठा में पूर्ण रूप से समर्पित थे। स्त्रियों को वह केवल 'नन्स' के रूप में ही स्वीकार कर पाते थे, क्योंकि वह प्रतिज्ञाबद्ध होती हैं। प्रतिज्ञाबद्ध होते हुए भी कभी-कभी नन्स के अंदर की कोमल भावनाएँ बाहर आ ही जाती थीं। इसलिए वह औरतों से घृणा करते थे और हेय समझते थे। ऐसे असंतोष के समय में वह पवित्र ग्रंथ के शब्दों को दोहराते, ''स्त्री, मुझे तुझसे क्या लेना-देना?'' उसके बाद अपने मन से ही जोड़ देते थे, ''नारी, जिसने प्रथम पुरुष 'आदम' को बहकाया, वह आज भी अपनी कुत्सित हरकतों से बाज नहीं आ रही है।'' वह नारी की स्नेह भरी आत्मा से घृणा करते थे।

इसका मतलब यह नहीं कि वह पाषाण हृदय थे। वह प्रकृति के प्रति अति-संवदेनशील थे। एक दिन वह चाँदनी रात में नदी किनारे निकल पड़े। रात उनके लिये प्रार्थना और विश्राम के ही लिये थी; सो वह यामिनी की सुंदरता से लगभग अपरिचित ही थे। वहीं वह रात्रि अप्रत्याशित रूप से सुंदर थी। वह सोचने लगे- भोर तो जागने और कर्म की शुरूआत के लिये बनी है इसलिए ऊर्जस होती हैं पर रात... रात तो विस्मृति, विश्राम और नींद के लिये बनी है। फिर ईश्वर ने इसको इतना सुंदर और मोहक क्यों बनाया? रात्रि की इस सुंदरता के लिये उनके मन में 'मादक' शब्द सबसे उपयुक्त लग रहा था। परन्तु यह 'मादक' शब्द भी उनके लिये वर्जित था। वह मनन ही कर रहे थे कि एकाएक उन्हें वृक्षों के बीच एक स्त्री और पुरुष की मिलीजुली छाया दिखी। वह दोनों आमोद में एक दूसरे की कमर में हाथ डाले लिपटते, बिखरते फिर एक होते हुए टहल रहे थे। पादरी के घुटने ढीले होने लगे। कुछ अंतराल बाद उन्होंने देखा दोनों छाया दो जिस्म एक प्राण हो गई...। वह थोड़ी देर के लिये निस्तब्ध हो गये। जब होश में आकर वह किसी तरह अपने घर पहुँचे। तब तक उनकी समझ में आ चुका था कि ईश्वर ने रात्रि को इतना मादक क्यों बनाया है। रात्रि सृजन के लिये बनाई गई है। ईश्वर की इच्छा सृष्टि की निरंतरता है। इसी कारण ईश्वर ने हर योनि में नर और मादा का युगल

बनाया; सृजन हेतु रात्रि बनाई, चाँद को सूरज से भी सुंदर बनाया।

सोते समय उन्हें पवित्र बाइबिल की 'रूथ ओर बोएज' की कहानी याद आ रही थी। उनके अवचेतन मन में प्रश्न उठा कि क्या वह अभी तक ईश-इच्छा की अवज्ञा नहीं कर रहे थे?

कुछ दिनों बाद लोगों ने सुना कि पादरी ने ब्रदरहुड त्यागकर अपनी बचपन की मित्र से शादी कर ली।

एलीट छात्रों का एलीट मन यह कथा सुनकर विभोर हो उठा। करतल ध्वनि से पंडाल को गुंजायमान करते हुए वह बाहर आ गए।

इतनी सुंदरता से मोपासाँ ने एक शाश्वत सत्य का चित्रण किया। कितना सुंदर श्रृंगारिक चित्रण था। उनमें से कुछ में तो स्वयं पादरी की आत्मा घर कर गई थी। यदि उन्हें तत्काल ही कोई अपनी सहपाठिनी मिली होती तो वह अवश्य ही प्रणय निवेदन कर बैठते। ऐसा वह कर पाये कि नहीं यह इस कथा का विषय नहीं है। यह कथा मात्र ऐसे बुद्धिजीवियों की मानसिक दशा दर्शाती है।

देसी और विदेशी, दोनों पंडालों की कथावस्तु एक ही थी, संदेश भी समान थे। फिर भी उन्हें भारतीय पृष्ठभूमि की कथा रुचिकर नहीं प्रतीत हुई; वहीं सैकड़ों वर्ष बाद लिखी पाश्चात्य 'स्टोरी' उन्हें इसलिए पसंद आई क्योंकि वह विदेशी थी।

●

देवालय

तीन मित्र हिन्दू, मुस्लिम और सिक्ख ने अपनी मैत्री को भावनात्मक एकता का रूप देने के लिए अपने घरों के पास ही मंदिर, मस्जिद और गुरुद्वारा बनवाया। तीनों मित्र और तीनों देवालय धार्मिक और भावनात्मक एकता की मिसाल बन गए। हर रोज सबसे पहले शबद कीर्तन फिर अजान और मंदिर में आरती की घंटी सुनाई पड़ती थी। लोग अपनी दिनचर्या भी इन्हीं पवित्र धुनों से व्यवस्थित करते थे।

इनके बच्चे अपने बुजुर्गों को चाचा, चचा कहकर पैर भी छूते थे, आदाब भी कहते और सत श्री अकाल का भी नारा लगाते थे। एक पीढ़ी तक यह प्रेम व्यवहार चला। मगर फिर इनके यहाँ लाल टोपी पहने साइकिल पर, कुछ भगवा वस्त्रधारी और नीली पगड़ी वालों का आना बढ़ने लगा। जिस आदर्श मुहल्ले में आप बातचीत और पहनावे से किसी का धर्म नहीं पता लगा सकते थे वहीं अब पहनावे में परिवर्तन साफ-साफ दिखने लगा है। आमने-सामने पड़ने पर राम जुहार भी खत्म हो गई। नई पीढ़ी की निगाहों में क्रोध और नफरत आ गई...। और एक दिन पूरा मोहल्ला उजड़ गया। देवालय जला दिये गए। हिन्दू, मुसलमान और सिक्ख तीनों के लोग यहाँ कराह रहे थे। जो कराह नहीं रहे थे वह या तो बेहोश थे अथवा मर चुके थे। बलवे में बलवेकारी बच जाते हैं। मरते तो केवल निर्दोष और निरीह ही। वही इस आदर्श मोहल्ले में भी हुआ। बचे हुए लोगों में इतना धार्मिक जोश भरा था कि उन्होंने अपने दिवंगतों का क्रियाकर्म करने से पहले अपने-अपने देवालयों में अरदास, आरती या अजान देना ज्यादा उचित समझा।

जैसे वह अपने-अपने देवालय पहुंचे उन्हें अंदर से कुछ बातचीत करने की आवाजों का एहसास हुआ। वह अंदर गए, वहाँ कोई नहीं था। उन्हें लगा शायद उनके बुजुर्गों की रूहें आपस में बातें कर रही थीं।

राम की आवाज में दर्द था ''हम ही संस्कार देने में चूक गए, वरना हमारी संतानें इतनी नृशंस नहीं होती।''

रहीम गुस्से से बोला, ''नहीं राम! हमने इनको अच्छी तालीम दी पर क्या करें? इस नस्ल की आँख का पानी ही मर चुका है।''

''ओय रामे, रहीमे, क्यों मुंडो नूँ कोस रहे हो? यह पॉलिटिक्स है ही बड़ी कुत्ती चीज। इसी की वजह से यह मंदिर, मस्जिद एवं गुरुद्वारे बने वरना रब तो सबका एक ही है।''

●

प्राकृतिक संवेग और स्वच्छता अभियान

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी में जनमानस तक सीधे संवाद स्थापित करने की अद्‌भुत क्षमता है। उनके स्वच्छता अभियान व आह्वान का मुझ 70 वर्षीय वरिष्ठ नागरिक पर भी सीधा असर पड़ा। मैं भी इस अभियान में सक्रिय हो उठा। मेरी स्वयं की स्टडी-टेबल चाहे कितनी अस्त-व्यस्त क्यों न हो, पत्नी द्वारा भूल से भी छोड़ा गया सब्जी का छिलका उसी को दिखाते हुए उठाकर कूड़ेदान में डालने का नियम बना लिया। राह चलते भी किसी को गंदगी करते देखता तो रुककर टोकने और नागरिक दायित्व समझाने को अपना कर्तव्य बना लिया था। नाली या सुंदर मकान की बांउड्रीवाल पर जलत्याग करते हुए महानुभावों को क्रिया के मध्य ही टोकने का पुनीत नागरिक कर्तव्य निर्वहन करता था। हाँ, एक आध बार ऐसा भी हुआ कि किसी पहलवान छाप व्यक्ति के घूरने पर कई बार क्षमा याचना द्वारा आत्मरक्षा कर सका।

एक शाम घर से कॉफी पीकर एक जिगरी दोस्त के यहाँ गपशप करने पहुँचा। मित्र अकेला था फिर भी चाय-पानी से स्वागत हुआ। कुछ देर बाद तय हुआ कि हजरतगंज के सुंदरीकरण का जायजा भी ले लिया जाय। मित्र ने याद दिलाया कि जीवन की तरुणाई में हम लोग सुंदरी-दर्शन के लिए जाया करते थे। तय हुआ कि केवल उम्र के साथ नामावली में परिवर्तन हुआ है, मंतव्य तो आज भी वही है।

गाड़ी मल्टीलेवेल पार्किंग में पार्क कर हम लोग 'गॉजिंग' हेतु निकल पड़े। नये रंगरोगन से हजरतगंज सुंदर लग रहा था। लवलेन के नयनाभिराम दृश्यों ने याद दिलाया कि आज सैटरडे इवनिंग है। कॉलेज के दिन याद आ गये। शनिवार की शाम मेस बंद रहती थी, सो बाहर आना मजबूरी थी। कैसे हम घंटों हजरतगंज टहलते, मद्रास कैफे में चार आने में दोसा खाते फिर टहलते, परन्तु खाना किसी ढाबे में ही खाते (हजरतगंज में खाना जेब

पर भारी था)। रौनक देखकर फ्रूट-जूस पिया फिर कोल्ड कॉफी विद आइसक्रीम भी केवल यह सोचकर ली गई कि अब हम एफोर्ड कर सकते हैं।

मैं काफी प्रसन्न था। बहुत दिनों बाद शाम इतनी खुशगवार गुजर रही थी। एकाएक कुछ रंग में भंग होने का आभास होने लगा। पेट के निचले हिस्से में कुछ असुविधा सी होने लगी। समझ में आया कि चाय, कॉफी, फ्रूट आदि आत्मसात करने के बाद गुर्दे अपनी जिम्मेदारी पूरी तौर पर निबाह रहे थे। 'लघु-शंका' प्रारम्भ में ही लघु रहती है; फिर धीरे-धीरे उसका संवेग लघु से दीर्घ होने लगता है। मैं बेचैन होने लगा। एक दुकानदार से पूछा ''भाई, यहाँ वाशरूम कहाँ है?''

वह मुझे कुछ देर तक घूरने के बाद बोला, ''यहाँ की जमीन का रेट जानते हो?''

मैंने नकारात्मक भाव में सिर हिलाया।

''50,000 रुपये प्रति स्क्वायर फिट'' उसने अपने आप ही बताया।

मेरी समझ नहीं आ रहा था कि वाशरूम के बारे में मेरी जिज्ञासा का जमीन के रेट से क्या सम्बन्ध।

दुकानदार ने मुझे नासमझ मानकर समझाया, ''बाबू जी, वाशरूम बनाने के लिये कम से कम 100 स्क्वायर फिट जमीन की आवश्यकता तो पड़ेगी ही। सिर्फ आपके मू...ने, मेरा मतलब है एक वाशरूम के लिये, कोई 50 लाख की जमीन क्यों बरबाद करेगा? आप खुद ही सोचिए।''

X X X X X

काश, उसे पता होता कि मैं सोचने की स्थिति में नहीं हूँ। मैं बड़ी बेचैनी से दुकान के बाहर निकल आया। मेरा मित्र जो कि स्वस्थ चित्त था और सोच सकने की स्थिति में था। उसने दुकानदार से पूछा ''श्रीमान जी, जब आपको लगती है तो 50 लाख की बात सोचकर रुक जाती है क्या? आप भी तो कहीं न कहीं जाते ही होगे?''

अबकी नान्प्लस (निरुत्तर) की बारी दुकानदार की थी। वह तोते की तरह गर्दन टेढ़ी कर चश्मे के ऊपर से देखता हुआ बोला, ''वाशरूम मल्टीलेवेल पार्किंग में बने हैं।'' वह दौड़कर मेरे पास आया और

महत्त्वपूर्ण सूचना मुझे दी। हम दोनों लगभग भागते हुए पार्किंग पहुंचे... वाशरूम बंद था। निराश होने के पहले ही याद आया कि पार्किंग तो मल्टीलेवेल है। हम पहली मंजिल के लिए भागे। लिफ्ट का इंतजार करना व्यर्थ मान जीने से ऊपर गये...। वहाँ भी आला समाशोधन सुविधाओं पर ताला लगा था। दो और मंजिलों का साहसिक आरोहण किया गया। नतीजा वही। जिस्म थक गया, साँस फूल रही थी थकने से आवेग रोकने की क्षमता जवाब देती महसूस हो रही थी। क्या करूँ? विकट प्रश्न।

मित्र फिर एक बार सहाय हुआ। वह बोला ''बंधु, यहीं खड़े होकर निवृत्त हो लो। जब तक धार नीचे पहुँचेगी तुम्हारा समाधान हो चुकेगा। मैं दूसरे कोने से नीचे देख रहा हूँ।''

मैंने आश्वस्त होकर अभी प्रारम्भ ही किया कि नीचे से गरजती आवाज आई ''कौन है बे? कोई ऊपर से मूत रहा है क्या?''

तभी मित्र ने दौड़कर मुझे बाउंड्री से नीचे खींच लिया। मेरी बदकिस्मती से नीचे पुलिस वैन खड़ी थी। पुलिस का एक सिपाही ऊपर की ओर भागा। हम दोनों एक फ्लोर तेजी से उतरे फिर आराम से कारों के बीच निकलते हुए पार्किंग के बाहर आ गये। मुझसे ज्यादा मेरा मित्र डर गया था। मैं आश्वस्त था कि मेरा जो और जितना अंग पुलिस ने देखा था, उससे वे मुझे पहचान नहीं सकते। हम लोग सड़क पर आकर सिविल अस्पताल की ओर चल पड़े। चौराहा पार करने में थोड़ी देर लगी। उतनी देर में मेरी बेचैनी और बढ़ गई। जिस प्रकार बाढ़ को एक बार रास्ता मिल जाने से बहाव का दबाव और तीव्रता से बढ़ जाता है, वही हाल मेरा था। थोड़ा रिलीफ़ मिलने की जगह बेताबी और बढ़ गई थी। एक हाथ जेब में डालकर अपने को कंट्रोल करते हुए हम किसी तरह ट्रैफिक बूथ तक पहुँचे। ट्रैफिक बूथ के पीछे तीन चार फिट खाली जगह देख कर मुझसे रुका नहीं गया। 'जो होगा देखा जायेगा।' के आत्मघाती मूड में मैं वहीं शुरू हो गया। मेरा मित्र मुझे आड़ दे रहा था। तभी चौराहे की तरफ से एक पुलिस वाले ने ललकारा, ''हे... क्या कर रहा है, जेल जाना है क्या?''

न चाहते हुए भी मैं रुक गया और बाहर आ गया। सिपाही भी

आश्वस्त होकर अपनी ड्यूटी में लग गया।

X X X X X

मुझे रावण की वह कथा याद आई जब वह भी अपने संवेग को रोक नहीं पाया और भगवान शिव के विग्रह को जमीन पर रखना पड़ा। मैं इन दो वाकयों से बाल-बाल बचने पर कुछ ज्यादा बोल्ड हो चुका था। सो एक बार फिर शुरू हो गया। कितना समय व्यतीत हुआ मुझे खुद मालूम नहीं। एक भारी हाथ मेरे कंधे पर पड़ा और मुझे जोरों से झकझोरा। मैंने मुड़कर देखा वही सिपाही (जिसने मुझे टोका था) मुझे क्रोध से घूर रहा था। मेरे मित्र का अता-पता नहीं था। मैं समझ गया कि अब इज्जत खतरे में है। संवेग से निवृत्त होने के बाद अब मैं आश्वस्त था और मस्तिष्क सुचारु रूप से चेतन हो चुका था।

मुझे किसी मोटे से रुआबदार अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया गया। थोड़ी देर तक वह अधिकारी मुझे घूरता रहा। मैंने भी आँखें नीची नहीं कीं। वह बोला, ''सार्वजनिक स्थान पर आप पेशाब कर रहे थे?''

''जी हाँ, पर मजबूरी में'' मैंने दृढ़ता से उत्तर दिया।

संभवत: इस प्रश्न पर वह मिमियाती आवाज सुनने का आदी था। उसे गुस्सा तो आया पर उसे वह दबाते हुए बोला, ''मालूम है, इसके लिए आपको जेल भी हो सकती थी?''

मैं बोला, ''आप मुझे फाँसी दे दें, पर एक प्रश्न का उत्तर दे दें।''

अधिकारी मुझे घूर रहा था। मैंने पूछा, ''यदि आपको अभी लघु-शंका लगे तो आप कहाँ जाएंगे?''

अधिकारी इस प्रश्न के लिए तैयार नहीं था। वह दाहिने-बाएँ देखने लगा। सिपाही आश्चर्य से मुझे देख रहा था।

मैंने साधिकार उसकी टेबल पर हाथ रखकर कहा, ''श्रीमान जी, आप ही नहीं, आपके सिपाही भी इस प्रश्न का उत्तर नहीं जानते। इस सिपाही को बूथ के पीछे निवृत्त होते देखकर मैं भी चालू हो गया। यह पहले निपट लिया और उन्हीं अशुद्ध हाथों से मुझे पकड़ कर इसने मुझे आपके सामने पेश कर दिया। आप ही बताइये कि जब आपका सिपाही यह कर सकता है तो साधारण जनता, यदि लगी हो, तो कहाँ जाये?''

अधिकारी ने सिपाही को देखकर जोर से पूछा, ''तो तुम भी...।''

सिपाही कुछ प्रतिवाद करना चाहता था कि मैंने उसे चुप कराकर अधिकारी से कहा, ''सर, यह अपनी गलती कैसे मान सकता है? आप किसी को भेजकर दिखा लें वहाँ दो लोगों के मूत्र-विसर्जन के चिह्न होंगे।''

अफसर के कहने पर दूसरा सिपाही 'मौकाए मुआयना' पर गया और रिपोर्ट किया, ''श्रीमान जी, मौके पर दो जगह पर मूत्र-त्याग के चिह्न हैं।''

अफसर ने आग्नेय आँखो से सिपाही को देखा फिर अपने स्टेनो से बोला, ''मेयर साहब को एक पत्र लिखो कि सार्वजनिक स्थलों पर वाशरूम आदि की सुविधाओं का बहुत अभाव है, कृपया उचित व्यवस्था कराने की कृपा करें।'' मुझसे कहा, ''ठीक है, आप जा सकते हैं।''

जान बची तो लाखों पाये। राम राम करता मैं सबसे पहला आटो पकड़ कर घर आ गया। इस अंतिम वाकये के बाद तक मेरे मित्र का कोई अता-पता नहीं था।

●

मुझे पहचानो

उमस भरी गर्मी का दिन। कचहरी में ऐसा लगता था कि भारत की आधी जनसंख्या मुकदमेबाजी में लगी है और बाकी वकील बन गई है। गर्मी की वजह से पसीने से महकते हुए काले कोट, पान मसाले और तंबाकू की गंध, कोनों से उठती सार्वजनिक जल त्याग की भभक, लेट लतीफ न्याय व्यवस्था का एक हिस्सा लगने लगी थी। कुछ वकीलों ने अपने चैंबर में तो किसी प्रकार टेबल फैन की व्यवस्था कर रखी थी पर बाहर एक्का-दुक्का पेड़ों की छाँह में ही शीतलता सुलभ थी। ऐसे में वकील और वादीगण अदालत में कक्षों में बैठने का प्रयास करते। इसका कारण था कि अदालत में कम से कम सीलिंग फैन थे और बैठने की व्यवस्था थी। यह जरूरी नहीं था कि उस अदालत में उनका मुकदमा हो। ऐसी ही खचाखच भरी अदालत में न्याय कार्य चल रहा था। कई वकील पंखे के नीचे पड़ी बेंचों पर लंच करने के बाद ऊँघ रहे थे। कुछ तो वादियों का नाम पुकारते अर्दली की जोरदार आवाज की वजह से जगकर क्षण भर के लिए आँखें खोलकर देख लेते कि अधिकारी उन्हें सोते तो नहीं देख रहा है; वहीं अधिकतर बुजुर्ग अपने अनुभव की वजह से आश्वस्त थे कि अधिकारी इन दृश्यों के अभ्यस्त हो चुके हैं। उन्हें केस निपटारे के अतिरिक्त अदालत में क्या हो रहा है, इससे कोई मतलब नहीं। हाँ, यदि किसी वकील साहबान के खर्राटे ज्यादा लाउड होते तो पड़ोस के वकील को इशारा अवश्य कर देंगे। ऐसा खर्राटे मारने वालों का विश्वास था।

जगजाहिर पुलिसिया टेक्निक है कि यदि कहीं कोई वारदात हो तो जरूरी नहीं कि उसकी एफआईआर लिखी ही जाए। पुलिस वाले एफआईआर दर्ज करने में बहुत तकल्लुफ बरतते हैं। यदि हर वारदात का वह संज्ञान लेने लगे तो उनके थाने का क्राइम ग्राफ एकाएक ऊपर चला

जाएगा। उस हालत में थानेदार की ऊपर की देनदारी बढ़ जाएगी या फिर उसे थानेदारी से हाथ धोना पड़ेगा। अतः क्राइम रोकने का सबसे उत्तम तरीका था कि क्राइम दर्ज ही न किया जाय। इसके बावजूद जो क्राइम दर्ज करने वाले होते भी, वह तब तक नहीं लिखे जाते जब तक पीड़ित व्यक्ति सुविधा-शुल्क की व्यवस्था नहीं कर लेता अथवा कोई जोरदार 'पउवा' नहीं ठोक देता।

इतनी जद्दोजहद के बाद यदि कोई एफआईआर इंदराज भी हुई तो असली अपराधी इतनी देर में पकड़ के बाहर जा चुका होता है, अधिकतर सबूत खत्म हो चुके होते हैं। ऐसे में पुलिस इलाके के एक दो बेगुनाह लोगों का चालान कर, हिरासत में लेकर अदालत में पेश कर देती है। जो कुछ समय बाद अपने आप बरी हो जाते हैं। यह बरी हुए बेकसूर लोग भी ता-जिंदगी पुलिस का आभार मानते हैं कि दारोगा जी ने दया करके उन्हें जेल जाने से बचा लिया।

X X X X X

ऐसी पुलिसिया व्यवस्था और इतने दमघोटू वातावरण में अदालत में अधिकतर ऐसे ही केसों का निबटारा चल रहा था। पेशकार ने जज साहब को एक केस की फाइल दी, चपरासी ने ''...हाजिर हो'' की आवाज लगाई। सरकारी वकीने ने घिसे पिटे रूटीन शब्दों में अभियुक्त के आरोप पढ़े। अभियुक्त की तरफ से वकील नहीं था। जज साहब निर्णय सुनाने वाले ही थे कि एक जोरदार आवाज ने सोते हुए वकीलों को जगा दिया ''जज साहब, फैसला करने के पहले मेरी बात अवश्य सुन लें।''

जज साहब ने नजर उठाकर देखा। सोते वकीलों ने जागकर देखा। एक पठान किस्म का मजबूत जिस्म का आदमी तहबंद और कुर्ता पहने खड़ा था। जज साहब ने कहा, ''कहिए, आपको क्या कहना है?''

अभियुक्त ने उसी जोरदार आवाज में कहा, ''हुजूर, मैं मोहम्मद नसीरुद्दीन न होकर 'मुसम्मात नसरीन' हूँ।''

अदालत में सन्नाटा पसर गया। अभी तक बेलौस बैठे पेशकार के निर्विकार चेहरे पर भी जिज्ञासा का भाव आया। सभी लोग आश्चर्य कर रहे थे कि जो भी उन्होंने सुना, वह सच कैसे हो सकता है। लंबी चौड़ी

मजबूत गठन, चकला चौड़ा मजबूत सीना, छोटे-छोटे कटे बाल, दाढ़ी की जगह हल्की कालिमा। कुल मिलाकर मेहनती मजदूर का शरीर, रुआबदार आवाज। ऐसा मर्दाना आदमी कह रहा है कि वह औरत है। कुछ ने सोचा 'हार्डेन्ड क्रिमिनल' है बचाव का बहाना बना रहा है। कुछ ने सोचा कि हो सकता कि किन्नर हो, वहीं कुछ ने दिमाग पर बिलकुल जोर नहीं डाला, मात्र आश्चर्यचकित होकर रह गए।

जज साहब काफी देर तक उसके शरीर को देखते रहे फिर मानो अपने को आश्वस्त करते हुए बोले, ''श्रीमान् जी, आप समझ रहे हैं कि आप क्या कह रहे हैं?''

अभियुक्त बोला, ''हाँ हुजूर, मैं पूरी तरह होश में हूँ और समझ रहा हूँ कि मैं क्या कह रहा हूँ। वैसे मैं श्रीमान् नहीं 'मुसम्मात' हूँ।

इसके बाद अदालत या अदालत में उपस्थित लोगों को शक नहीं रह गया कि अभियुक्त का मतलब वही है जो वह कह रहा है।

अदालत में सन्नाटा छा गया जज साहब विचार की मुद्रा में आ गए, सब लोग इंतजार कर रहे थे कि 'मी लार्ड' का क्या आदेश होगा? केवल पेशकार अपनी पैनी निगाहों से अभियुक्त की ओर लगातार देख रहे थे; मानो उनकी अनुभवी आँखे कपड़े के अंदर जाकर सत्यता का परीक्षण कर लेंगी। परंतु वह अनुभवी आँखे भी कुछ भेद नहीं पा सकीं।

सरकारी वकील ने मसले को खत्म करते हुए कहा, ''कुछ नहीं सरकार यह इसके बचने का हथकंडा है। आप आदेश पारित करें।''

जज साहब ने सरकारी वकील की दलील अनसुनी करते हुए पेशकार से कहा, ''इसका मेडिकल कराने के लिए अस्पताल भेजो। डॉक्टर लोग ही तय करेंगे कि यह स्त्री है या पुरुष।''

X X X X X

पेशकार ने जिला अस्पताल के लिए मेडिकल कराने का पर्चा बनाया और साथ आए सिपाही को पकड़ा दिया। सिपाही अभियुक्त को लेकर मर्दाने अस्पताल में ले गया। वहाँ भी अभियुक्त ने स्वयं को स्त्री बताया तो डॉक्टर ने उसे जनाने अस्पताल रेफर कर दिया। जनाने अस्पताल में डॉक्टर ने सिपाही को डांट लगाई बोली, ''देखते नहीं यह

पुरुष है। क्या इसका मुआयना लेडी डॉक्टर करेगी? तुम्हारा और जिला अस्पताल के डॉक्टर दोनों का दिमाग फिर गया है।

गेंद फिर से मर्दाने अस्पताल के डॉक्टर के पाले में आ गई। उसने अपने मन में तर्क किया कि यदि जनानी डॉक्टर मर्द का सीना खुलवाकर देखती है तो कोई जुर्म नहीं बनता, वहीं अगर गफलत में भी मर्दाने डॉक्टर ने भी जनानी का सीना देखने की चेष्टा भी की तो पता नहीं कितनी धाराओं के तहत अपराधी हो जाएगा। सो वह डॉ. कागजात और अभियुक्त को लेकर सीएमओ के पास भागा।

सीएमओ साहब ने मामले की नजाकत देखते हुए एक जनानी और मरदाने डॉक्टर की टीम बनाये जाने का आदेश किया। पहले लेडी डॉक्टर अभियुक्त का सीना देखकर, प्रारम्भिक तौर से तय करेगी कि अभियुक्त स्त्री है या पुरुष। इतना तय हो जाने के बाद ही उसका मुआयना स्त्री या पुरुष डॉक्टर पूरा करेगा।

भुनभुनाती हुई लेडी डॉक्टर का 'पर्दे का ध्यान' रखते हुए लेडी कांस्टेबल की उपस्थिति में उसका कुर्ता उतरवाया 'नो क्ल्यु'। लेडी डॉक्टर ने निर्णय ले लिया कि अभियुक्त नर है। वह घूम कर जाने वाली ही थी कि अभियुक्त ने अपनी बनियान अपने आप ही उतार दी। लेडी डॉक्टर और महिला पुलिस की आँखें फटी की फटी रह गईं... बनियान के नीचे एलास्टिक शमीज के नीचे दबी हुई महिला की छाती स्पष्ट दिख रही थी। बंधे होने के कारण महिला की छाती पुरुष के चकले मजबूत सीने को धोखा दे रही थी।

लेडी डॉक्टर को आश्चर्य अधिक था या हमदर्दी यह तो वह संभवत: खुद भी नहीं समझ सकी होंगी। तत्काल ही अभियुक्त से परीक्षण की रजामंदी लेने के बाद शारीरिक परीक्षण पूरा किया। पुलिस पेपर पर लेडी डॉक्टर ने परीक्षण का निष्कर्ष लिखा ''अभियुक्त पूर्ण रूप से विकसित महिला है। उसका कौमार्य अक्षुण्ण है'' रिपोर्ट का पता चलते ही साथ आए कांस्टेबल तो क्या पूरे थाने में हड़बोंग मच गया। अदालत बंद हो चुकी थी। अभियुक्त अब महिला सिद्ध हो चुकी थी। उसे साधारण हवालात में अब रात भर कैसे रखा जाय। यहाँ एक बार हमेशा

की तरह डॉक्टर लोग ही पुलिस के सहाय हुए। पुलिसवालों की मिन्नतों पर लेडी डॉक्टर ने अपनी रिपोर्ट में आगे लिखा- ''अभियुक्त, जो कि वास्तव में एक स्त्री है, इस थाना कचहरी और अस्पताल के चक्कर में फँसकर इस मानसिक अवस्था में नहीं है कि उसे पुलिस को सौंपा जाय। अत: उसे रात भर के लिए पुलिस अभिरक्षा में अस्पताल में ही भर्ती किया जाता है। सुबह पुनर्परीक्षण के उपरांत ही उसे डिस्चार्ज करने का निर्णय लिया जाएगा।''

वहीं थाने के दरोगा को अपनी नौकरी जाती प्रतीत हुई। उसे मालूम था कि एक महिला को पुरुषों की हवालात में रात भर कैद करना कितना बड़ा अपराध है। यदि उसके आला अफसर इस बात का संज्ञान न भी लें तो महिला आयोग इस चूक का संज्ञान अवश्य लेगा।

वह तत्काल ही अपनी सबसे अच्छी वर्दी पहन कर जज साहब के बँगले पहुँचा। जज साहब को मेडिकल रिपोर्ट की सूचना मिल चुकी थी। उन्हें थानेदार के आसन्न मुसीबत का अंदाजा था। वह जान रहे थे कि थानेदार उनके पास अपनी बेगुनाही का पक्ष रखने अवश्य आ रहा होगा। आखिरी निर्णय तो उन्हें ही लेना था कि मुसम्मात नसरीन के हावभाव और वेशभूषा से किसी को भी मोहम्मद नसीरुद्दीन मानने का धोखा हो सकता है।

दारोगा जी ने सैल्यूट मारने के बाद बड़ी दयनीय मुद्रा में जज साहब को बताया, ''हुजूर, यकीन करें, जब मैंने इसको हिरासत में लिया तो वह सड़क किनारे चारपाई पर मात्र बनियान पहने लेटा या लेटी थी। छोटे-छोटे बच्चों की कसम हुजूर, यह किसी तरह से औरत नहीं लग रही थी। एक बार हुजूर यह मान भी लें कि मेरी आँखें धोखा खा सकती हैं; पर माई-बाप जिस जगह यह सालों से रह रही थी वहाँ के लोग भी इसे कड़क मर्द मानते थे। इसका उस मुहल्ले में बड़ा दबदबा था।''

जज साहब को दरोगा की स्थिति का अंदाजा था। उन्होंने दरोगा को सांत्वना देकर विदा किया।

उधर अगले दिन अदालत में मो. नसरुद्दीन उर्फ नसरीन जब पेश हुई तो उसे खुली अदालत के बजाय जज साहब ने चैंबर में लेडी पुलिस

के साथ बुलाकर पूछा ''मुसम्मात नसरीन, तुम्हें महिला होते हुए भी पुरुषों के साथ रात भर मर्दों के हवालात में रखा गया?''

नसरीन ने स्वीकृति में सिर हिलाया।

''इस भारी गलती के लिए दरोगा जी पर दंडात्मक कार्यवाही हो सकती है।''

नसरीन ने बड़े निस्पृह भाव से उत्तर दिया, ''हुजूर, इसमें पुलिस वालों की क्या गलती? मुझे पिछले दस सालों से गाँव के लोग मर्द के रूप में जानते थे। दारोगा जी ने अरेस्ट करते समय शायद मुझे गौर से देखा भी नहीं होगा। और तो और, मैंने जब तक बनियान नहीं उतारी तब तक डॉक्टरनी भी नहीं जान पाई। मैं महिला हूँ यह बात तो मैं स्वयं ही 'भूल' चुका था।''

जज साहब ने नोट किया कि वादी अब भी अपने को 'पुल्लिंग' में संबोधित कर रहा है। नसरीन का पक्ष रखने के लिए वकील नहीं था, अत: जज साहब ने नसरीन का पक्ष प्रस्तुत करने के लिए सरकारी खर्चे पर (एमिकस क्यूरी) एक महिला वकील नियुक्त किया।

महिला वकील, सरकारी वकील और दारोगा ने मशविरा करके एक तहरीर अलग से अदालत में प्रस्तुत की। ''विवेचना करने पर पुलिस की संज्ञान में आया कि अभियुक्त 'आइडेंटिटी कंफ्यूजन' (पहचान विभ्रम) की वजह से हिरासत में लिया गया। उक्त वारदात में इसकी कोई संलिप्तता नहीं पाई गई अत: इसके विरुद्ध लगाए गए अभियोग वापस लिए जाते हैं और पुलिस अपना 'दोष पत्र' (चार्ज शीट) वापस लेती है।''

इस प्रकार अदालत में 'आइडेंटिटी कन्फ्यूजन' शब्द द्वारा यह सारी घटना दबा दी गई, जिससे पुलिस वालों पर अदालत द्वारा प्रतिकूल टिप्पणी और विभागीय कार्यवाही हो सकती थी। दरोगा जी ने जज साहब को और खुद नसरीन को धन्यवाद देते हुए प्रस्थान किया।

महिला वकील के सामने जज साहब ने नसरीन से पूछा कि वह कौन सी मजबूरी है जिसकी वजह से महिला होते हुए तुम्हें पुरुष वेष धारण करना पड़ा।

अभी तक जो नसरीन हेकड़ मो. नसीरुद्दीन के रूप में खड़ी थी,

यह प्रश्न सुनते ही द्रवित हो गई। शायद सहानुभूति के शब्दों ने उसके अपने ही द्वारा बनाए गए भ्रम-जाल को भेद दिया। वह एक झटके में नारी रूप में आ गई। वह जमीन पर बैठ कर फूट-फूट कर रोने लगी।

X X X X X

महिला वकील ने जज साहब के कहने पर उसे जमीन से कुर्सी पर बिठाया, पीने को पानी दिया। थोड़ी देर बाद वह बोली,- ''हुजूर, आपके नरमदिल लफ्जों ने मेरे उन जख्मों को फिर से कुरेद दिया जिन्हें मैं अपने जेहन में ही दफन कर चुकी थी। मैं हरियाणा की रहने वाली हूँ। मैं भरे पूरे खानदान की बेटी हूँ। मेरे घर में मेरे माँ बाप के अलावा एक भाई और एक बहन थे। अपनी खेती थी जिसमें हम सब मेहनत करते थे। अमीरी तो नहीं पर घर में खुशहाली जरूर थी। मैं खुद मेहनतकश थी और दौड़ने-भागने में मेरा कोई सानी नहीं था, और वकील साहब, गाँव वालों का मानना था कि मैं काफी खूबसूरत भी दिखती थी।''

कहकर वह हल्के से शरमाई थी। वकील साहिबा और जज साहब दोनों ने नोट किया कि नसरीन बनते ही उसमें स्त्री सुलभ लज्जा की झलक भी दिखी।

''मगर हुजूर, शैतान की निगाहें खुशहाल परिवारों पर ज्यादा पड़ती हैं। मेरे यहाँ भी उसका कुछ ऐसा ही सितम हुआ। मेरी बड़ी बहन को किसी मनचले ने छेड़ दिया। बस इतनी सी बात से जो बखेड़ा शुरू हुआ जिसमें मेरे बाप और भाई की जान ले ली गई। उसके बाद मेरी बहन और माँ के साथ जो हैवानियत हुई, उसे मैं भंडारे में छुपकर देख रही थी। आज भी मैं सोच कर काँप जाती हूँ। बहुत रोकने पर भी मेरे मुंह से चीख निकल गई। उन लोगों को मेरी तलाश तो थी ही, उन्होंने मुझे भी ढूँढ़ निकाला... मेरी भी शायद वह वही हश्र करते पर... पर... खुदा के फजल से उनकी सारी बारूद मेरी माँ और बहन पर ही खत्म हो चुकी थी।

कुछ मुझे अपने साथ अगवा करके ले जाने वाले थे पर एक ने कहा ''यह जाएगी कहाँ। अब तो रोज इनके घर में ऐसी 'गोश्त पार्टी' होनी ही है। कल इसी से शुरू करेंगे।'' वह मुझे छोड़कर चले गए। उनके जाने के बाद मैंने देखा मेरी माँ तो बेहोश थी पर मेरी बहन मर चुकी थी। मैंने

उनके कपड़े ठीक किए और खुद को बचाने के लिए मैं वहाँ से भागी। मैंने यह भी नहीं सोचा कि माँ को डॉक्टर की सख्त जरूरत है। उस समय मुझे सिर्फ और सिर्फ अपनी फिक्र थी। अगर पकड़ी गई तो क्या होगा यह मैं देख चुकी थी।''

''भागकर मैं दूसरे गाँव जाकर एक बाग में छुप गई। सुबह थोड़ा उजाला होने पर अपना रंग कुछ गंदला करने के लिए मैंने तालाब का हल्का सा कीचड़ अपने चेहरे पर और खुले हुए हाथों पर मल लिया। उसके बाद दुपट्टे को मुँह पर डाल कर चलती गयी मैं अब शहर पहुँच गई थी, जहाँ मुझे जानने पहचानने वाला कोई नहीं था। वहीं मुझे पता चला कि मेरी माँ ने होश में आने के बाद फाँसी लगा ली। मुझे यह भी पता चला कि पुलिस मुझे खोज रही है, क्योंकि मैं ही एक चश्मदीद गवाह थी। एक बार मेरा मन किया कि मैं गाँव जाकर पुलिस को सब बता दूँ मगर ध्यान आया कि वह हैवान भी मुझे तलाश रहे होंगे। पुलिस का भी कोई ऐतबार नहीं।''

''इस डर से मुझे वह शहर भी छोड़ना पड़ा। चलती ट्रेन पर बगैर टिकट चढ़ी। अगले शहर में जब गाड़ी आउटर पर रुकी तो मैं उतर कर शहर की भीड़ में खो गई। शहर मे दरिंदगी से लपलपाती आँखें मेरे जिस्म को काटे दे रहीं थीं। मगर शहर में पेट के लिए कुछ काम तो करना ही था। घर के बाहर अपने सूख रहे मर्दाना कुर्ता, पैजामा उठा लिया। मर्दाना कुर्ता-पैजामा पहनकर अपने दुपट्टे की पगड़ी बनाकर मैं सिक्ख लड़का बन गई। ठेले पर सब्जी बेचने वाले अधेड़ ने मुझे ठेला खींचने और ऊँची आवाज में 'हरी ताजी सब्जी लो...' की आवाज लगाने को रख लिया। दिन भर के बाद पहली कमाई के पैसे से मैंने कई दिनों के बाद भरपेट खाना खाया। अगले दिन से फिर वही ठेला और सब्जी। शायद वहीं दिन गुजर जाते पर... हुजूर हसीन, कमसिन लड़के भी इस दुनिया में महफूज रह सकते हैं क्या? रात में सोते वक्त सब्जी वाले ने मुझ लड़के से हैवानियत करने की कोशिश की। मैं आधे किलो के बाट से उसका मुँह तोड़कर वहाँ से भाग निकली।''

''मुझे वह शहर भी छोड़ना पड़ा। इस बार मेरी जेब में पैसे थे।

सब्जी बेचने में जोर की आवाज लगाने से मेरा गला भारी हो चुका था, सो आवाज में भी मर्दानगी आ गई थी। खाल की चिकनाहट दूर करने के लिए मर्दों की तरह मैंने भी हजामत बनानी शुरू कर दी। इस तरह से हुजूर, मैं मेहनत करते-करते नसरीन से नसीरुद्दीन बनकर आज आप के सामने अपनी बर्बादी का किस्सा सुना रही हूँ।''

उसकी कहानी खत्म हो गई। वह चुप होकर सिर झुकाए कुर्सी पर बैठी रही। जज साहब और वकील साहिबा सोच रहे थे कि शहरी परिवार में लोग कितने सुरक्षित रहते हैं। हमें आभास भी नहीं होता कि घर के बाहर की दुनिया में कितने कष्ट हैं। मासूमों पर कितना अत्याचार हो रहा है।

महिला वकील ने ही मौन तोड़ा बोली, ''वाकई सर, आज कल लड़कियों का घर से बाहर निकलना भी एक समस्या है। शायद ही कोई लड़की घर से बाहर निकलने पर शारीरिक या शाब्दिक छेड़छाड़ का शिकार न होती हो। यह सब अपनी ही तरफ होता है। पिछले साल मैं गुजरात गई। वहाँ महिलाएँ बहुत सुरक्षित हैं। रात के बारह बजे भी पूरे गहने पहने अकेली लड़की भी आश्वस्त होकर घूम सकती है।''

फिर कुर्सी से उठते हुए ''भगवान जाने यहाँ इतनी शराफत कब आएगी।''

X X X X X

गुजरात की एक गाड़ी प्लेटफार्म पर लगती है। साधारण डिब्बे में एक खूबसूरत पठान युवक चढ़ता है। गाड़ी रात भर चलती रही, लोग सोते-ऊँघते रहे, पर पठान चुपचाप खिड़की के बाहर देखता हुआ बैठा रहा। रास्ते भर उसने मुँह से एक भी शब्द नहीं निकाला। सुबह होने तक जब वह बाथरूम से लौटा तो उसका चेहरा फूल की माफिक खिला निकल आया था। तपे हुए तांबाई रंग में वह बहुत आकर्षक लग रहा था। कम्पार्टमेंट में सभी महिलाएं उसी की ओर देखने लगीं, मगर वह निर्लिप्त भाव से बैठा रहा। एक स्टेशन से जब गाड़ी छूटी तो बहुत मोटी आवाज में उसने पूछा ''अहमदाबाद अभी कितनी दूर है?''

●

जीवन साथी

कुछ देर तक लता को गौर से देखने के बाद लता की पारसी पड़ोसन बोली, ''तुम अपना एक नया शादी क्यों नहीं बना लेता गर्ल।''

लता एकाएक चौंक गई बोली, ''क्या बात है प्रिंसी, आज सुबह से ही लगा ली क्या?''

''नहीं, मैं सूरज ढलने के पहले वाइन को हाथ भी नहीं लगाती। शाम को भी सिर्फ अकेलापन दूर करने को पीती हूँ।'' फिर जैसे सपनों में खोती हुई बोली, ''हमारा अगर वेलु भाई से सेटेलमेंट हो गया तो यह भी छूट जाएगा। मैं तो कहती हूँ तू भी शुरू कर दे। अकेलापन दूर करने के लिए बहुत मुफीद है यह चीज़, जिसे मुंबई में दारू बोलते हैं।''

''नहीं, मैं यह आदत नहीं पाल सकती। हमारे यहाँ मर्दों तक को दारू पीना अच्छा नहीं माना जाता।'' कह कर वह चाय बनाने चली गई।

प्रिंसी लता के पीछे-पीछे किचेन में आते हुए बोली, ''अई, तभी तो कह रही हूँ कि शादी बना ले। जानती हूँ कि तू दारू तो पीने से रही।''

प्रिंसी पड़ोस के फ्लैट में रहने वाली पारसी महिला थी, जो लता के साथ उसी बैंक में काम करती थी। लता से 5-6 वर्ष बड़ी होने की वजह से पहले रिटायर होकर इस फ्लैट में आई थी, उसी के कहने पर लता भी इसी सोसाइटी में दो रूम का फ्लैट लेकर रहने लगी। प्रिंसी का पहला पति बहुत कम उम्र में नहीं रहा। प्रिंसी उसे बहुत प्यार करती थी। उसे अभी भी भूल नहीं पाई थी। पति के मरने के दो साल के अंदर ही उसने अपने से 10 साल बड़े आदमी से शादी कर ली। प्रिंसी का दूसरा पति भी पिछले साल नहीं रहा। प्रिंसी लगभग 70 वर्ष की उम्र में दोबारा फिर से अकेली रह गई।

लता को मालूम था कि प्रिंसी से लगभग 7-8 साल छोटा एक पारसी व्यक्ति प्रिंसी के घर बहुत आ जा रहा है। इतनी उम्र हो जाने के

बाद भी वह आज तक कुँवारा ही है। वह प्रिंसी से शादी करने को बहुत उतावला है।

एक दिन प्रिंसी के प्रति उसका अनुराग देखकर लता ने कहा, ''प्रिंसी, तुम इससे शादी क्यों नहीं कर लेती। बेचारा कितने दिनों से तुम्हारे चक्कर काट रहा है?''

''ओय, तुमको मालूम नहीं विक्टर अभी तक वर्जिन है।''

लता बोली, ''तो क्या हुआ कम से कम सेकेड-हैंड तो नहीं है।''

''अरे, पता नहीं लड़कियों ने इससे शादी क्यों नहीं की। कहीं मर्दानगी में कोई कमी तो नहीं है।'' प्रिंसी स्वर को धीमा करते हुए बोली।

लता को चाय पीते-पीते हँसी आ गई बोली, ''अरे, इस उम्र में भी तुम्हें मर्दानगी की जरूरत है?''

प्रिंसी झेंपते हुए बोली, ''अरे नहीं, ऐसी बात नहीं है। मैं तो सिर्फ यह बता रही थी कि लड़कियों में ऐसी ही कुछ अफवाह थी।''

फिर हँसते हुए लता के गाल पर चुटकी लेते हुए बोली, ''वैसे, अगर लाइफ शेयरिंग के साथ 'यह' भी मिल सके तो बोनस की तरह नहीं होगा? कभी-कभी मोनोटनी भी दूर हो जायेगी।''

दोनों हँसने लगीं।

फिर एकाएक प्रिंसी चाय का प्याला नीचे रख और लता का लैपटाप खोलकर उसमें कुछ सर्च करने लगी। 5 मिनट के बाद ही वह लैपटाप लेकर लता को देखते हुए बोली, ''यह देखो, तुम्हारे लायक दो तीन रिश्ते इस साइट पर मिल ही गए। आखिर, मर्दों को भी तो जरूरत होती है।

X X X X X

प्रिंसी को सी-आफ करने के बाद लता खिड़की पर खड़ी हो गई। सामने-सी बीच दिख रही थी, हल्की-हल्की बारिश शुरू हो गई थी। कहते हैं, मुंबई में लड़कियों और बारिश का कोई भरोसा नहीं, पता नहीं कब बरसने लगें।

लता एकटक समुद्र को निहारती हुई सोच रही थी कि समुद्र में कितनी गहराई है। दुनिया की तमाम नदियाँ समुद्र में क्या-क्या डालती रहती हैं फिर भी समुद्र एकदम शांत रहता है। समुद्र की तरह स्त्रियाँ छोटी

उम्र से ही क्या-क्या झेलती हैं, फिर भी सागर की तरह शांत बनी रहती है। किसी से शिकायत नहीं करतीं।

एकाएक उसने सोचा कि अगर सागर शांत है तो उसमें लहरें, ज्वार क्यों...? शायद चन्द्रमा के आकर्षण से ही वह लहराता है और ऊपर उठने का प्रयास करता है। उसे जयशंकर प्रसाद की पंक्तियां याद आईं-

''देखा बौने सागर का शशि छूने को ललचाना,
वह हाहाकार मचाना फिर उठ-उठ कर गिर जाना।''

अकेलापन तो विशाल सागर को भी खलता है... उसे प्रिंसी का प्रपोजल याद आ गया, जिसे वह बलात् दिमाग से हटाकर किचेन में जाकर खाना बनाने लगी। मगर खाना बनाने में उसका मन नहीं लगा। किसी प्रकार उल्टा-सीधा बनाकर वह लॉबी में आ गई। उसकी दृष्टि लैपटाप पर पड़ी जिसे प्रिंसी बगैर बंद किए ही चली गई थी। लता ने देखा कि लैपटाप स्लीपिंग मोड में चला गया था। उसने लैपटाप को फिर से स्टार्ट किया। स्क्रीन पर वही मैट्रीमोनियल साइट खुली थी जिसे प्रिंसी सर्च कर रही थी। उत्सुकता में ही लता उसे देखने लगी। लता ने देखा साइट पर काफी सीनियर सिटीजन्स ने जीवन साथी के लिए अपनी प्रोफाइल अपलोड कर रखी थी। सभी एकाकी जीवन से बचने के लिए इस उम्र में भी पुनर्विवाह के उत्सुक थे। उसे लगा कि पुरुष एकाकी जीवन से अधिक त्रस्त रहते हैं। हो सकता है कि बाहर वह चाहें जितना काम कर लें पर घर पहुँच कर वह पत्नी पर आश्रित हो जाते हैं। जहाँ पति-पत्नी दोनों कामकाजी होते हैं वहाँ कुछ ही लोग पत्नी के कार्य में हाथ बटाते हैं। संभवत: यही कारण है कि वह अकेलेपन से ज्यादा पीड़ित होते हैं। हो सकता है कि इसी कारण से पुराने जमाने में पुरुषों का अधिक उम्र में भी पुनर्विवाह मान्य हुआ करता था।

लता को पुरानी कहावत याद आई ''जब पचपन के घर-घाट भयेन तब देखुवा आए बड़े-बड़े।'' वहीं शायद महिलाएं अपनी नारी-सुलभ लज्जा के चलते वैवाहिक विज्ञापन नहीं दे पातीं।

यह भी हो सकता है कि भारतीय परिवेश में महिलाओं का पुनर्विवाह और खासकर बड़ी उम्र में ठीक नहीं माना जाता। बड़ी उम्र की

एकाकी महिलाओं से समाज को यही अपेक्षा रहती है कि उसे अपना जीवन नाती-पोतों के पोतड़े धोने में ही गुजार देना चाहिए। यह सोच कर लता को हँसी आ गई कि नारी से समाज को मात्र सेवा की ही अपेक्षा होती है; उसकी अपनी इच्छा का कोई महत्त्व ही नहीं। इस विचारधारा के विरोध में अथवा अनजाने में ही उसने एक विज्ञापन में अपना बायोडाटा अपलोड करके भेज दिया।

X X X X X

कर्नल गायत्री फौज से 'फुल कर्नल' के पद से रिटायर हुए थे। अच्छा स्वास्थ्य, प्रभावशाली व्यक्तित्त्व, खुशमिजाज जिंदादिल इन्सान थे कर्नल गायत्री। जब वह रेगुलर सर्विस में थे उनकी रंगीनियत के किस्से काफी मशहूर थे। सेवा-निवृत्त होने के बाद कर्नल साहब कैंट के पास ही एक कालोनी में एक फ्लैट में रहने लगे। उनके साथ उनकी निहायत शरीफ पत्नी भी थीं, जो कर्नल साहब की आशिकी कैसे बर्दाश्त करती हैं? यह तथ्य भी उतना ही चर्चित था जितना कर्नल साहब की रंगीनियत। संभवत: उन्होंने कर्नल साहब के इस दुर्गुण को चन्द्रमा में कलंक की अनिवार्यता मानकर समझौता कर लिया था।

उस भली महिला ने कर्नल साहब की सेवानिवृत्ति के बाद लगभग सात-आठ साल साथ निभाया; और फिर एक दिन वह कर्नल साहब को नितांत अकेला छोड़कर परलोक सिधार गईं। खुशमिजाज कर्नल साहब जो दूसरों का अकेलापन दूर करते थे वह स्वयं अकेले रह गए।

कर्नल साहब के एक ही बेटा प्रतीक था। प्रतीक भी सेना में ही था और इस समय वह भी कर्नल था तथा उसकी पदोन्नति कभी भी हो सकती थी। अकेलेपन से आजिज आकर कर्नल साहब अपने फ्लैट पर 'फॉर सेल' की तख्ती लगाकर अपने बेटे के साथ रहने आ गए। बेटा तथा बहू संस्कारी थे। दोनों उनका बहुत ध्यान रखते थे। बेटे के एक बेटी थी। वह भी दादा के आने पर खिल उठी। वह हमेशा उनके चारो ओर घूमती रहती। ''दादा, यह कहानी सुनाओ, वह कहानी सुनाओ, दादा इस बार तुमने कहानी एकदम शार्ट कर दी ठीक तरह से सुनाओ न।'' आदि-आदि।

क्लब लाइफ के शौकीन कर्नल साहब कभी-कभी अपने बेटे के

साथ मेस जाते। पर वह महसूस करते कि उनकी उपस्थिति से मेस का हमेशा उन्मुक्त रहने वाला वातावरण बोझिल हो उठता। कारण- कर्नल के पिता के रूप में सब उनको सहज भाव से नहीं लेते थे। उनके दरम्यान जेनरेशन गैप आड़े आ जाता था। इसलिए कुछ दिनों बाद उन्होंने मेस जाना बंद कर दिया। कुछ दिन आराम से गुजारने के उपरांत कर्नल साहब बेटे के यहाँ असहज महसूस करने लगे। स्कूल खुल गया। पोती सुबह स्कूल और शाम को होम वर्क में व्यस्त हो गई। बहू भी बेटी के स्कूल में पढ़ाती थी। सुबह और शाम के बीच के समय में कर्नल साहब नितांत अकेले रह जाते।

अकेलापन! इसी अकेलेपन से बचने के लिए ही तो वह बेटे के यहाँ रहने आये थे; पर बच्चों की अपनी व्यस्ततायें थीं। उन्हें लगा कि अब वह परिवार के मुखिया न होकर दीवार में लगी फोटो की भांति हो गये हैं, जिस पर सिर्फ माला पड़नी शेष थी। उन्होंने यह भी महसूस किया कि व्यक्ति को अपने हमउम्र लोगों के बीच ही रहना चाहिए। यह सोचकर कर्नल साहब बेटे-बहू के लाख रोकने पर भी अपने फ्लैट में वापस चले आए। फ्लैट के दरवाजे पर लगी 'फार सेल' की तख्ती को निकाल कर फेंक दिया।

X X X X X

'अपने' घर पहुँच कर ही कर्नल साहब सामान्य हो पाये। उनका नित्य का मार्निंग-वाक, लाफ्टर क्लब, नियमित व्यायाम और प्राणायाम एक बार फिर प्रारम्भ हो गया। फ्लैट के पड़ोसी, उनके सर्विस-काल के मित्र जो रिटायर होकर उसी शहर में रह रहे थे, का आना-जाना लगा रहता। घर की सफाई के लिए एक बाई भी लगा ली थी। जिंदगी पटरी पर आ गई, मगर...।

कर्नल साहब की सुबह शाम तो कट जाती पर दोपहर, और फिर रात में वही अकेलापन किसी के साथ की अपेक्षा होती। सोचा एक डॉगी ही पाल लिया जाये। परन्तु फ्लैट में रहने के कारण वह भी संभव नहीं था। रात के सुनसान में वे अपनी पत्नी के साथ गुजारे दिन याद कर भावुक हो जाते। जितनी अच्छी पत्नी थी, वह स्वयं उतने अच्छे पति

शायद साबित नहीं हुए। बीते हुए दिन याद कर उनकी आँखों में आँसू आ जाते। जब उनका बेटा छोटा था, उसकी किलकारियों से घर गूँज उठता था। पर अब बेटे की वे शैतानियाँ जिस पर उन्हें क्रोध आता था, मन उन्हें फिर से पाना चाहता था। घर की नीरवता उन्हें काटने दौड़ती थी। पवित्र बाइबिल में कहानी है अकेलेपन से दु:खी मानव को प्रसन्न करने के लिए ही ईश्वर ने मानवी की सृष्टि की। मानवी के बिना आदि-मानव कितना अकेला रहा होगा, यह कर्नल साहब को अब समझ में आया।

सत्य है, आदमी सहज उपलब्ध चीजों को तब तक महत्त्व नहीं देता, जब तक वह उससे छिन नहीं जातीं। वहीं शायद यह भी उतना ही सच है कि जिन चीजों की प्रबल कामना हो, उसके किसी न किसी प्रकार से फलीभूत होने की संभावनायें भी स्वत: बनने लगती हैं। और फिर..।

एक दिन अमरीका से उनका एनआरआई भांजा अपने भारत प्रवास के दौरान उनके घर पर भी रुका। दस वर्षों तक अमरीका में रहने के कारण भांजा पाश्चात्य संस्कृति में ढल चुका था। उसको समझ में नहीं आ रहा था कि मामा जी क्यों वियोगियों सा जीवन बिता रहे हैं। उसने अपने मामा को बताया कि अमरीका में जहाँ दाम्पत्य बंधन अति-भंगुर होते हैं, कभी-कभी शादी के फौरन बाद ही तलाक हो जाता है; वहीं 60 वर्ष की उम्र के बाद की गई शादियों में दाम्पत्य सम्बन्ध अधिक प्रगाढ़ और स्थायी होते हैं। वहाँ उस उम्र में ही पति-पत्नी एक दूसरे के पूरक हो पाते हैं। उसने कर्नल साहब को पुनर्विवाह करने के लिए प्रेरित व उत्साहित किया।

कर्नल साहब ने पूछा, ''इस उम्र में मुझसे कौन शादी करने को राजी होगा?''

भांजा बोला, ''आपको उम्र के इस पड़ाव पर कोई कुँवारी कन्या तो मिलेगी नहीं। यदि मिली भी तो उसकी निगाह आपकी दौलत पर ही होगी। उसके अंदर जल्दी से जल्दी मालदार विधवा बनने की तमन्ना होगी। इसलिए आपको अपने समवयस्क महिला की अपेक्षा करनी चाहिये। अकेली महिलाएँ भी पुरुषों की तरह एकाकी हो जाती हैं।''

यह कहकर भांजे ने अपने लैपटॉप पर तत्काल ही अपने सत्तर

वर्षीय मामा का वैवाहिक विज्ञापन डाल दिया। मामा ने दबा हुआ प्रतिरोध किया, जो इतना कमजोर था कि इनकार से अधिक इकरार मालूम पड़ रहा था। भांजे ने मुस्कराते हुए लैपटाप बंद किया बोला, ''मामा जी, इस विज्ञापन का प्रति-उत्तर अगले हफ्ते तक ही मिल पाएगा। मुझे विश्वास है कि इस अंतराल में आप अपने नए और सार्थक जीवन की शुरुआत के लिए मन पक्का कर लेंगे।''

फिर उसने मामा के दोनों हाथ पकड़ कर कहा, ''मामाजी, शादी के बाद अमेरिका में हनीमून मनाने के लिए मेरा एडवांस निमंत्रण है। याद रखियेगा।''

कहकर वह जिस हवा के झोंके की तरह आया था उसी तरह चला गया। परंतु जाते समय मामा की जिंदगी में एक मधुर सुगंध छोड़ गया था।

मामा जी (कर्नल साहब) उस रात बगैर ड्रिंक के ही सो गये। रात भर उनके अपने एकाकी जीवन और एक साथी की चाहत में दिनकर की 'उर्वशी' की यह पंक्तियाँ घूमती रहीं-

''शब्दगुण गगन रोकता रव का नहीं गमन है,
निश्चय, विरहाकुल पुकार से कभी स्वर्ग डोलेगा;
और नीलिमापुंज हमारा मिलन मार्ग खोलेगा।''

...और वास्तव में सुबह उठकर जब अपने कंप्यूटर पर 'शब्दगुण गगन' (इन्टरनेट) खोला तो स्क्रीन पर उनका 'ड्रीम कम्स ट्रू' पेज ही खुला। कर्नल साहब की बिरहाकुल पुकार एक नहीं तीन बालाओं तक पहुंची थी। जिसके उत्तर में तीनों ने अपने 'जीवन-वृत्त' (बायोडाटा) भेजे थे। इनमे से दो विधवा और एक अभी तक कुँवारी थी।

कर्नल साहब ने धड़कते दिल से तीनों बायोडाटा का अध्ययन किया। सबसे पहले वाले को तो उन्होंने तत्काल ही रिजेक्ट कर दिया जो कि एक सत्तर वर्षीय महिला का था। सोचा यह साथी, कम लायबिलिटी अधिक होगी। दूसरा बायोडाटा में 50 वर्षीय अविवाहित बाला आकर्षक मुद्रा में मुस्करा रही थी। जिसे देखकर उनकी पहली से बढ़ी धड़कन और बढ़ गई। इसके पहले कि कर्नल साहब जवाब देते उनको मिलिटरी का काशन याद आया ''हर आकर्षण के पीछे एक ट्रैप हो सकता हैं।'' उन्होंने

उस बायोडाटा को यह सोच कर हटा दिया कि इस महिला के मन में कहीं शायद 'धनवान विधवा' बनने की महत्त्वाकांक्षा न हो। जीवन में- जो जितना अंतरंग होता है वह उतना ही घातक भी हो सकता है। 'मनमीत ही अगन लगाये उसे कौन बचाये... उसे कौन बचाये।'

तीसरे बायोडाटा को देखकर उन्हें कुछ संतोष हुआ। यह जीवनवृत्त एक साठ वर्षीय महिला का था जो बैंक के अधिकारी पद से रिटायर होकर मुंबई के एक खुद के फ्लैट में रह रही थी। उसकी एकलौती बेटी शादी करके अपने पति और बच्चों के साथ कनाडा में रह रही थी। बेटी के भारत वापस आने की सम्भावना नगण्य थी। महिला ने बायोडाटा में ही यह स्पष्ट उल्लेख किया था, सम्बन्ध होने के पहले ही वह फ्लैट समेत अपनी सारी संपत्ति अपनी बेटी के नाम कर देगी। होने वाले जीवन साथी का उस पर कोई अधिकार नहीं होगा।

कर्नल साहब को यह व्यावहारिक बुद्धि वाली और समझदार नारी लगी। साठ वर्ष की उम्र में वह अभी तक वह पूर्ण रूप से स्वस्थ थी और आवश्यकता पड़ने पर स्वयं की और उनकी सेवा सुश्रुषा भी करने में सक्षम होगी। उम्र के साठवें पड़ाव पर वह 'वृद्धस्य तरुणी विषम' भी साबित नहीं होगी।

सत्तर वर्ष की उम्र में पुनर्विवाह के खयाली पुलाव बनाना तो सरल होता है पर जब निर्णय की बेला आती है तो 'कर्तव्यं वा न कर्तव्यम्' (करूँ या न करूँ) की दुविधा आन पड़ती है। अकेले इतना महत्त्वपूर्ण निर्णय लेने में मन घबराता है। बेटे से यह बात करने में उन्हें संकोच हो रहा था। ऐसी मानसिक दशा में उन्हें अपने सेना के पूर्व अभिन्न मित्र, जो उसी शहर में रह रहे थे, उनकी याद आई। उन्होंने तत्काल ही अपने अभिन्न मित्र को 'इवनिंग ड्रिंक्स' के लिए आमंत्रित किया।

X X X X X

शाम को दो ड्रिंक्स गले में उतरने के बाद मदिरा की मादकता के असर में कर्नल साहब ने अपने मित्र से अपने अकेलेपन और उसके उपचार के रूप में पुनर्विवाह का विकल्प बताया। मित्र ने पहले तो इसे कर्नल साहब का विनोद ही माना ''इस उम्र में तुझे दूसरी शादी करने की

क्या जरूरत? अब तेरे अंदर कुछ बचा भी है?''

कर्नल साहब गंभीर मुद्रा में बोले, ''बात अंदर की गर्मी की नहीं है। मेरी मजबूरी है। बच्चों के घर में मैं नहीं रह सकता, बच्चे नौकरी छोड़कर मेरे साथ नहीं रह सकते। दोपहर से रात तक अकेलापन बहुत व्यथित करता है। और फिर इस उम्र में भी मेरे अंदर 'बहुत कुछ बचा' है।''

बात गंभीर थी दोनों का नशा गायब हो चुका था। मित्र ने पूछा कि उपयुक्त महिला मिलेगी कैसे? कर्नल साहब ने वैवाहिक विज्ञापन देने और उसके प्रति उत्तर में आए तीनों महिलाओं के बायोडाटा दिखाकर प्रत्येक के बारे में अपना विस्तृत आकलन भी बताया।

तय हुआ कि आगे निर्णय साठ वर्षीया महिला से मिलने के बाद ही लिया जाय।

X X X X X

उधर लता अपने द्वारा भेजे गए बायोडाटा के बारे में भूल ही गई थी कि एक दिन कर्नल साहब का ई-मेल मिला, जिसमें कर्नल साहब ने भविष्य के जीवन की विस्तृत विवेचना करते हुए मिलने का प्रस्ताव रखा था। उन्होंने सुझाव दिया था कि यदि लता चाहे तो मुंबई से लखनऊ तक हवाई यात्रा का प्रबंध कर्नल साहब स्वयं कर सकते हैं, अथवा वह स्वयं भी मुंबई उससे मिलने आ सकते हैं।

बहुत सोच विचार के बाद लता ने निश्चय किया कि एक बार मिलने में कोई हर्ज नहीं।

वह अपने खुद के खर्चे से कर्नल साहब से मिलने लखनऊ आई। इस यात्रा के पीछे होने वाले साथी को जानने के अलावा उसके आसपास के माहौल को भी वह समझना चाहती थी।

मिलने पर दोनों को लगा कि वह 'मेड फार ईच अदर' हैं। तय हुआ कि अंतिम निर्णय बच्चों से विमर्श के बाद ही होगा।

लता की बेटी ने कहा, ''माँ, अब मैं भारत तो आने से रही। इसलिए तुम नितांत अकेली ही रहोगी। मुझे तुम्हारे इस निर्णय से कोई असर नहीं पड़ेगा। विदेश में रहने के बाद मेरे पति और बच्चों का भी नजरिया काफी बदल चुका है। यहाँ (कनाडा में) तो यह आम बात है।''

वहीं कर्नल साहब के बेटे और बहू के लिए यह सूचना बम विस्फोट से कम नहीं थी। दोनों ने पूरा विरोध किया, रोये-चिल्लाये भी कि बुढ़ौती में बाप की शादी की खबर सुनकर लोग क्या कहेंगे। दो तीन दिन झकझक के बाद प्रतीक ने अल्टिमेटम देकर बहस बन्द कर दी। उसने साफ-साफ कह दिया कि यदि कर्नल साहब विवाह करते हैं तो वह उनके साथ कोई सम्बन्ध नहीं रखेगा। ''नो फूल इज वर्स्ट दैन ओल्ड फूल (बूढ़े मूर्ख से अधिक कोई मूर्ख नहीं होता)।''

बेटे का विरोध कर्नल साहब को इस सम्बन्ध में आगे बढ़ने से रोक रहा था। परन्तु बेटे के अंतिम वाक्य ने उन्हें अपने मन के अनुसार निर्णय करने के संकल्प पर और दृढ़ कर दिया।

उन्होंने लता को अपना अंतिम निर्णय सुना दिया।

लता ने छह महीने के बाद ही अंतिम निर्णय करने का फैसला किया। उसने कर्नल साहब से इस दौरान एक दूसरे को समझने के अभिप्राय से एक दो बार और मिलने की सलाह दी। इन छह महीनों में लता लखनऊ आई और कर्नल साहब मुंबई भी गए। इन मुलाकातों ने उन दोनों के बीच का संकोच मिटा दिया। कर्नल साहब ने शादी करने का दिन 14 फरवरी 'वैलेंटाइन डे' का सुझाव दिया। लता ने कर्नल साहब की इस जिंदादिली पर फिदा होते सहर्ष 'हाँ' कह दी।

धूमधाम से शादी हुई। कर्नल साहब तो घोड़ी पर चढ़ना चाहते थे। डॉक्टर के मना करने पर ही माने। शादी में उनके पड़ोसी कुछ उन्मुक्त भाव से और कुछ चुहल के लिए शामिल हुए।

शादी के बाद पड़ोसियों को तीन दिन तक कर्नल साहब के दरवाजे 'डोंट डिस्टर्ब' का बोर्ड लगा देख उत्सुकता और हैरानी हुई। उनके अधेड़ पड़ोसियों की पत्नियों ने उलाहने भरे भाव से अपने पतियों को इस बोर्ड की तरफ इंगित किया।

इन सकारात्मक घटनाओं के अलावा कुछ नकारात्मक प्रतिक्रिया भी हुई। कर्नल साहब के बेटे का फोन आया। बेटा बहुत गुस्से में था। उसने बहुत कुछ कहा जिसका सारांश था ''इस महिला ने उनके धन की वजह से शादी की है, कुछ दिनों के अन्दर उन्हें मारकर पूरी संपत्ति लेकर चंपत

हो जाएगी।''

इस पर कर्नल साहब ने अप्रत्याशित रूप से शांत रहकर बेटे की बात सुनते रहे। जब बेटा भड़ास निकाल चुका तो उन्होंने शांति से कहा, ''बेटा, मैंने दुनिया देखी है। इतने लंबे जीवन ने आदमी पहचानने की काफी क्षमता दे दी है। परामर्श के लिए धन्यवाद, और तुम सबको आशीर्वाद। फिर कुछ रुककर कहा, ''और हाँ, एक और बात -नो फूल कैन बी वर्स्ट दैन ए यंग फूल (युवा मूर्ख से बढ़कर कोई मूर्ख नहीं होता)'' कहकर वह शांति के साथ फोन आफ करके लेट गए। उनकी पत्नी लता इस वार्तालाप में एक ही तरफ की बात सुन पा रही थी, फिर भी बात का मजमून वह समझ रही थी।

कर्नल साहब ने लता को बताया कि बेटे का फोन था। लता ने कहा, ''जानती हूँ।''

असल में प्रतीक ने पहले लता को ही फोन किया। उसकी तमाम अनर्गल बातें और धमकियों के उत्तर में लता ने कहा, ''बेटे यह मेरा अपना व्यक्तिगत फैसला है जिसमें मेरी बेटी पूरी तौर पर शामिल है। यदि तुम्हें कोई शिकायत हो तो, तुम्हें अपने पिता से बात करनी चाहिये। जहाँ तक मेरा सवाल है कर्नल साहब के रिश्ते से तुम मेरे पुत्रवत नहीं पुत्र ही हो।''

प्रतीक बोला, ''देवी जी, मेरी माँ मर चुकी है। अब मेरी कोई माँ नहीं है।'' कहकर उसने फोन काट दिया।

दूसरी नकारात्मक प्रतिक्रिया कर्नल साहब के मित्रों की पत्नियों की थी। अधिकतर पत्नियों ने अपने पतियों को कर्नल साहब के घर जाने पर प्रतिबंध लगा दिया था। कहीं उनके पति भी हाथ से बे-हाथ न हो जाएँ।

मगर कर्नल साहब अपनी नई दुनिया से संतुष्ट थे। लता उनके जीवन में एक बार फिर से बहार बनकर आई थी। उसने लगी हुई बाई का काम नहीं छुड़ाया, पर अपने और कर्नल साहब के लिए खाना और नाश्ता दोनों वह स्वयं बनाती थी। दोनों कभी लखनऊ कभी मुंबई के आवास में रहते। लता ने अपना फ्लैट और सारी संपत्ति अपनी बेटी के नाम कर दी थी। वहीं कर्नल साहब ने अपने बेटे को अपनी संपत्ति से

बेदखल कर दिया था।

X X X X X

आगे पाँच साल के सुखमय जीवन में कर्नल साहब के बेटे ने एकबार भी अपने पिता से न कोई संपर्क किया और न ही उनसे मिलने आया। वह ब्रिगेडियर के पद पर प्रमोट हुआ, पर कर्नल साहब को यह खबर अन्य लोगों के माध्यम से मिली। वह प्रसन्न तो हुए पर बेटे से संपर्क करने का कोई प्रयास नहीं किया। वहीं लता की बेटी हर साल भारत आती तो इन लोगों से अवश्य मिलती। बेटी और उसके पति ने कर्नल साहब को पूर्ण रूप से स्वीकार कर लिया था।

फिर एक रोज लखनऊ में लोगों ने सुबह के अखबार में पढ़ा 'कर्नल... का रात सोते में ही स्वर्ग सिधार गए।' इसके बाद समाचार पत्र यह लिखना नहीं भूले कि उक्त स्वर्गीय कर्नल साहब कुछ सालों पहले सत्तर वर्ष की भरपूर उम्र में नई शादी करने की वजह से सुर्खियों में आ गए थे।

कर्नल साहब के बेटे को यह सूचना समाचार पत्रों के माध्यम से मिली। पर उसने कोई प्रतिक्रिया नहीं की। लता की बेटी का सांत्वना फोन आया। उसने माँ की आगे की जिंदगी के बारे में जानना चाहा था।

कुछ दिन के बाद स्वर्गीय कर्नल साहब के ब्रिगेडियर बेटे प्रतीक को वकील का नोटिस मिला। नोटिस में सूचना थी कि कर्नल साहब उसे अपनी संपत्ति से बेदखल करके सारी संपत्ति अपनी नई पत्नी के नाम कर गए हैं।

यह नोटिस ब्रिगेडियर साहब के सब्र के लिए 'लास्ट स्ट्रा' (सब्र की सीमा तोड़ने वाला) साबित हुआ। वह एकाएक फट पड़ा। अपने घर के अंदर खूब चीख-पुकार करने के बाद, उसने अपने स्वर्गीय पिता की विध वा पर मुकदमा दायर करने का निश्चय किया। प्रतीक के वकील ने उसे लता के ऊपर दीवानी और फौजदारी मुकदमा दायर करने की सलाह दी। वकील ने एक नोटिस तैयार की जिसमें लिखा था कि यदि लता कर्नल साहब की धोखे से हड़पी गई संपत्ति कर्नल साहब के प्राकृतिक वारिस प्रतीक को एक निश्चित अवधि के अंदर वापस नहीं करती है, तो लता

के ऊपर कर्नल साहब, जिनका मानसिक संतुलन बुढ़ापे की वजह से ठीक नहीं रह गया था, की संपत्ति धोखे से अपने नाम कराने के आरोप में दीवानी और फौजदारी दोनों मुकदमें दायर किए जाएंगे।

कुछ दिनों के बाद बसंत ऋतु की सुबह की धूप में गरम चाय की चुस्की लेते हुए प्रतीक लान में बैठा, लता को भेजे जाने वाले लीगल नोटिस का ड्राफ्ट देख रहा था। उसकी पत्नी पास में बैठी निटिंग कर रही थी। तभी कूरियर वाला एक बड़ा सा लिफाफा दे गया। केवल पत्र के हिसाब से लिफाफा भारी था। भेजने वाले की जगह लता के वकील का नाम था। प्रतीक ने सोचा लता ने उसके पिता की वसीयत लागू करने हेतु उसे दूसरा लीगल नोटिस भेजा है। उसे जोरों का गुस्सा आया। उसने उस लिफाफे को बगैर खोले ही जोर से दूर फेंक दिया। लिफाफा बरामदे में दीवार से टकरा कर गिर गया। उसी गुस्से की रौं में उसने अपने वकील को लता की दीवानी और फौजदारी का नोटिस तत्काल भेजने को कहने हेतु फोन मिलाया।

प्रतीक की पत्नी कुछ देर तक लिफाफे को आश्चर्य से देखती रही, फिर बरामदे में जाकर उसने वह लिफाफा उठाकर खोला। लिफाफे में एक चाभी थी, जो संभवत: किसी घर की थी; साथ में एक डॉक्यूमेंट और हाथ से लिखा एक लंबा पत्र था। पत्र लता ने लिखा था-

पत्र की कुछ पंक्तियाँ पढ़ते ही बहू की आँखों में आँसू आ गए। वह आगे पढ़ नहीं सकी। बगैर कुछ बोले उसने अपने पति की हाथों से मोबाइल लेकर बंद कर दिया। मोबाइल एकाएक ले लिए जाने से प्रतीक ने क्रोध से पत्नी को घूरा। मगर पत्नी के एक हाथ में कूरियर से भेजा पत्र और आँखों में आँसू देख कर उसका गुस्सा गायब हो गया। किसी अनहोनी की आशंका से घबरा कर उसने पत्नी के हाथ से पत्र लेकर पढ़ना शुरू किया। पत्र का वैसा ही असर उस पर भी हुआ जैसा उसकी पत्नी पर हुआ था।

X X X X X

...पत्र लता के द्वारा लिखा गया था। लता ने लिखा था-

प्यारे बेटे,

सही है कि तुमने मुझे कभी अपनी माँ का दर्जा नहीं दिया। कोई बात नहीं हमारे यहाँ अपने से छोटों को भी बेटा पुकारने की परंपरा है। उसी परंपरा से मेरा बेटे का सम्बोधन स्वीकार करो...।

पत्र काफी भाव भरा था जिसका सारांश था... मैंने और तुम्हारे पिता ने मात्र जीवन एकाकीपन दूर करने के लिए शादी की थी। यकीन मानो, इसके अलावा हम दोनों का कोई स्वार्थ नहीं था। मेरे एक बेटी थी। मैंने सोचा था इस विवाह से मुझे एक बेटे का भी सुख मिल जाएगा। पर शायद वह मेरे भाग्य में नहीं था। कर्नल साहब ने मेरी बेटी को अपनी बेटी, और मेरी बेटी ने उन्हें अपना पिता स्वीकार कर लिया था।

मैंने शादी के तुरंत बाद अपनी वसीयत अपनी बेटी के नाम कर दी थी। अपने पिता की संपत्ति के असली हकदार तुम्हीं हो। मैं कर्नल साहब द्वारा दी गई सारी संपत्ति स्वेच्छा से तुम्हारे नाम कर रही हूँ। इसमें कहीं कोई विकार या अपराधबोध नहीं है। कर्नल साहब के फ्लैट की चाभी इस पत्र और वसीयत के साथ तुम्हें भेज रही हूँ। चाहना तो इनकी प्राप्ति कर्नल साहब के वकील को भेज देना। वैसे यह उतना आवश्यक भी नहीं है।

मैं हमेशा के लिए फिर से एकाकी जीवन बिताने के लिए वापस मुंबई अपने फ्लैट में जा रही हूँ।

हाँ, एक बात और... तुम्हारे पापा अंत तक तुम्हें बहुत प्यार करते रहे। उस प्यार को उन्होंने अपने फौजी अक्खड़पन के चलते अंतिम समय तक छुपा कर रखा था। फिर भी... कभी न कभी वह उनकी आँखों से झलक और छलक ही जाता था।

सभी को स्नेह एवं आशीर्वाद।

तुम्हारी माँ... नहीं-नहीं जो भी तुम समझना चाहो- लता।

अब प्रतीक की आँखें भी डबडबा गईं थीं।

●

गुलमोहर

जब वह पैदा हुई तो रोई नहीं। दाई की बहुत कोशिशों के बाद जब रोई, तो लोग खुशी से हँसने लगे। तब से वह जब हँसती तो हँसाती, रोती तो हँसाती। ऐसे हँसी-हँसी में वह बड़ी हो गई। उस पर नजर पड़ते ही लोगों के चेहरे पर मुस्कान छा जाती। शायद ही ऐसा कोई महामनहूस हो जो उसके आने पर भी मुँह लटकाये रहे। वह जहाँ भी जाती एक खुशबू सी बिखर जाती। यही वजह थी कि लोग उसे बहार कहकर पुकारते।

उसे देखकर लोगों को पता चला कि गरीब के घर में भी बहार आती है। उसका पिता मेहनतकश इंसान था। घर से निकलने के बाद मेहनत के सिवाय उसे कुछ भी याद न रहता। पर माँ, वह तो घर में ही रहती थी और बहार को बढ़ते देख रही थी। वह ऐसे ही चिंतित होती जैसे एक भला माली अपनी बगिया में खिले सबसे सुंदर और खुशबूदार फूल को देखकर चिंता करता है। कहीं वह फूल असमय ही सूख न जाये। कोई उसे गुलदस्ते में सजाने के लिए न तोड़ ले। इसी चिंता में घुलती रहती पर बहार के घर आते ही उसकी चिंता काफूर हो जाती।

ऐसा भी कभी हुआ है कि बगिया में फूल खिला हो और भँवरे को खबर न हुई हो। खुशबू फैली भँवरा भी आया। भोली बहार को कली और भँवरे के रिश्ते का भान नहीं था। फिर भी उसको भँवरा अच्छा लगा। भँवरा मँडराता, गीत सुनाता, कली खुश होकर इठलाती।

लोगों को भी भंवर-गीत और कली के इठलाने की खबर लग गई। माँ की परेशानी बढ़ गई। उसे याद आया कि किसी नजूमी ने बताया था कि बहार को चाहने वाला कोई बहुत ही धनवान होगा। मधुवा एक व्यापारी का बेटा था। व्यापार उसके तन-मन में बसा था। वह भी बहुत बड़ा व्यापारी बनना चाहता था। इसके लिए उसे गाँव छोड़कर देश-विदेश जाना चाहिए। इसके लिए वह तैयार था। बस एक ही कसक थी-बहार।

मधुवा ने उसे बताया कि अपने सपने पूरे करने के लिए बाहर जाना होगा। बहार ने मासूमियत से पूछा कि बाहर जाने से क्या होगा? वह गाँव में ही बड़ा आदमी क्यों नहीं बन सकता? मधुवा ने बताया कि गाँव के 'बड़े' सिर्फ गाँव में ही बड़े है। असलियत में उनकी वकत एक ठीकरे के बराबर भी नहीं है। बहार सुनती रही, मधुवा को मंत्र- मुग्ध एकटक देखती रही। उसकी समझ में कुछ नहीं आया।

मधुवा के बाहर जाने का दिन भी आ गया। मधुवा बहार से मिलने आया। दोनों बड़ी देर तक एक दूसरे का हाथ पकड़े बैठे रहे। अभी तक यही उनकी आत्मीयता की सीमा थी। चलते समय मधुवा ने पहली बार बहार को लिपटा लिया। बहार भी लता की तरह लिपट गई। मधुवा ने उसके होठों को चूमना चाहा पर बहार ने मुँह घुमा लिया। स्त्री-सुलभ चेतना से वह जानती थी कि यह सब शादी के पहले नहीं होता है। मधुवा के होठ उसके गाल को छूकर ही तृप्त हो गए।

चलते समय बहार ने पूछा, ''कब आओगे?''

''बहुत जल्दी। तुमको भूल नहीं सकता। सिर्फ तुम्हारे लिए ही आना पड़ेगा।'' मधुवा ने कहा।

चलते समय बहार ने मधुवा को एक छोटा सा लाल रंग का लिफाफा पकड़ा कर बोली, ''जब तुम्हें लगे कि तुम मेरे पास नहीं आ सकते। तभी इस लिफाफे को खोलना, वरना वापस आकर मुझे सौंप देना।'' फिर व्यग्रता से उसका हाथ पकड़ कर बोली, ''इतना तो याद रहेगा न तुम्हें?''

''क्यों नहीं'' कहकर मधुवा चला गया। अपने साथ वह बहार की खुशबू भी ले गया। जो उसे हमेशा उत्साहित करती रहती। विदेश जाकर मधुवा ने व्यापार में बहुत तरक्की की। व्यापारी का बेटा था। खूब सफल हुआ। व्यापार में ही उसकी शादी भी हो गई। इससे उसके व्यापार को और भी फायदा हुआ।

धंधे के बीच उसे बहार की याद एक बार भी नहीं आई। उसका लाल रंग का लिफाफा तिजोरी की अंधेरियों में ही पड़ा रहा।

वहीं बहार उसे भुला नहीं पाई। वह रोज उसी जगह आकर घंटों

बैठती जहाँ से मधुवा जुदा हुआ था। बहार का पिता मेहनत मजदूरी में पिसकर मर चुका था। ढिबरी की रोशनी और चूल्हें के धुएँ से माँ की निगाह भी कमजोर हो गई। बहार ने कई रिश्तों को 'न' कर दी। धीरे-धीरे रिश्ते आने भी बंद हो गये। माँ का सारा काम अब बहार ही करती, पर नियत समय पर वह उसी नियत स्थान पर आकर मधुवा का इंतजार करती।

व्यापारी घराने में शादी से मधुवा का व्यापार तो बढ़ा, पर मन की शांति खत्म हो गई। बड़े बाप की बेटी यह जानती थी कि मधुवा को इस ऊँचाई तक लाने में उसके पिता का कितना योगदान है वह मधुवा को जरा भी भाव नहीं देती। विदेश की लड़कियाँ हिन्दुस्तानी बेटियों की तरह शौहर को ही किस्मत नहीं मानतीं। घर आते ही यह काँटा मधुवा को ही चुभने लगता। ऐसा तो है नहीं कि काँटों में फूल नहीं खिलते। मधुवा के भी बच्चे हुए। वह प्यार नहीं, व्यापार की फसल थी।

एक दिन जब रोज की किचकिच से मधुवा का मन त्रस्त हो उठा तो उसे बहार के उस लाल लिफाफे की याद आई। अपनी परेशानी भूल वह बहार के लिए व्यग्र हो गया। उसे मालूम था कि अब वह वापस अपने देश नहीं जा सकता। बहार से भी नहीं मिल सकता। उसने तिजोरी से वह लिफाफा निकाल कर पढ़ा। पढ़ते ही सबकुछ भूल गया।

व्यापार, परिवार सबकुछ भूलकर वह तेजी से अपने वतन की ओर भागा।

गाँव काफी बदल गया था। फिर भी उसको पहचानने वाले कुछ लोग मिल ही गये। उनसे मधुवा ने बहार के बारे में जानना चाहा। उन लोगों ने आँखों में आँसू भर कर बताया कि मधुवा के जाने के बाद बहार रोज एक निश्चित जगह जाकर बैठती थी। लगता था किसी का इंतजार कर रही है। फिर लोगों ने देखा एक दिन वह वहीं बैठे-बैठे मर गई।

मधुवा को धक्का लगा। लोग उसे उस जगह ले गये जहाँ बहार उसका इंतजार करती थी। यह वही जगह थी जहाँ मधुवा अंतिम बार बहार से मिला था।

वहाँ बहार तो नहीं थी पर उस जगह बड़ा सुंदर एक गुलमोहर का

पेड़ उग आया था। लोगों ने बताया कि इस पेड़ में आज तक फूल नहीं आये।

मधुवा के पैर लड़खड़ा गये लोगों ने सहारा दिया।

लाल लिफाफे में बहार ने लिखा था, कि मधुवा जब तक तुम इस खत को पढ़ोगे, बहुत देर हो चुकी होगी। मैं एक पेड़ बन गई होऊँगी। पर, जब तक तुम मुझसे लिपटोगे नहीं पेड़ में फूल नहीं आएंगे। क्या तुम मुझे पुष्पित करोगे?

खत इस इसरार पर खत्म हुआ था।

वह पागलों की तरह भागकर गुलमोहर के तने से लिपट गया।

लोगों ने देखा गुलमोहर में फूल खिलने लगे। मधुवा पेड़ से लिपटा रहा, फूल खिलते रहे। लोग सुखद आश्चर्य से कभी मधुवा को, कभी पेड़ को व उसके खिलते हुए फूलों को देखते रहे।

जब और फूल खिलना बंद हो गये तो लोगों ने मधुवा को वापस चलने के लिए उसका कंधा थपथपाया।

पर मधुवा तो अब बहार में लीन हो चुका था।

●

नेतागिरी

एक बार कॅरियर एडवाइजर से युवाओं ने पूछा कि सबसे कम समय में अरबपति कैसे बना जा सकता है। एडवाइजर ने मुस्कराते हुए कहा– ''भगवान की कृपा से। आपने सुना ही होगा कि भगवान देता है तो छप्पर फाड़ के।''

लड़कों ने कहा ''श्रीमान्, यह तो केवल कहावत है।''

एडवाइजर ''अरे भाई, ऐसा तो है नहीं कि आप यदि छप्पर वाले मकान में नहीं रहते तो आपको भगवान देगा ही नहीं। वह आपको नेता बना सकता है, और आप कुछ वर्षों में ही मालामाल हो जाएंगे।''

उन्होंने बताया कि एक अंग्रेजी उपन्यास की कथा कुछ इस प्रकार है

उन्नीसवीं सदी के अंत में अमरीका बहुत तेजी से आर्थिक उन्नति कर रहा था। एक बहुत ही साधारण परिवार का युवक अपनी उद्यमशीलता और परिश्रम से उद्योगपति हो जाता है। पैसे वालों के पास राजनीति स्वयं चलकर आती है। उसके पास भी आई। लक्ष्मी गतिमान हुई, विनिमय हुआ और उसे एक पार्टी का टिकट मिल गया। उद्योगपति अपने व्यवहार, सफलता एवं सामाजिक कार्यों में योगदान के कारण पहले से ही जनप्रिय था। राष्ट्रीय स्तर की पार्टी के सहयोग ने उसे आसानी से चुनाव में विजयी बना दिया। इस प्रकार उसने अनमने भाव से, सकुचाते हुए राजनीति में प्रवेश किया। उसने पाया कि उसकी कंपनी के उत्पाद एकाएक ज्यादा बिकने लगे, उसे निर्यात करने की परमीशन बगैर माँगे मिलने लगी। संक्षेप में जितना उसने सारी उम्र कड़ी मेहनत कर के अर्जित किया था उसका कई गुना उसने कुछ वर्षों में ही कमा लिया। यह बात दीगर है कि यह सारी कमाई उसकी त्वचा के रंग की तरह सफेद नहीं थी।

ज्यादातर कमाई ब्लैकमनी थी।

इसके बाद उस एडवाइजर ने एक कहानी और सुनाई जिससे सभा में एकत्र अधिकांश छात्रों का जीवन सुखमय हो गया।

यदि आप भी सफल और धनी होना चाहते हैं तो ऐसे महत्त्वाकांक्षी लोगों को यह कहानी समर्पित है

एक तपोवन में वट वृक्ष के नीचे एक गुरू अपने शिष्यों को बड़ी देर से ज्ञान दे रहे थे।

गुरू का प्रवचन चल रहा था ''जिज्ञासुओं, शास्त्रों में कहा गया है कि विद्या से विनय, विनय से पात्रता और पात्रता से धन प्राप्त होता है। धन ही सभी सुखों का मूल है।''

उस समूह के सबसे अधीर शिष्य ने सोचा... कितना लंबा रास्ता बता रहे हैं गुरूदेव। यह सोचते ही उसका दम घुटने लगा...। इतना विलंब। वह बिलबिला उठ खड़ा हुआ और एकाएक 'फिजिकल' हो गया। कुछ अड़ोसी-पड़ोसियों को धक्का दिया कुछ पर पाद-प्रहार। उसके चेले-चापड़ भी सक्रिय हो उठे। उन्होंने भी किसी को मुक्का मारा, किसी के केश-कर्षण किये। इन शार्ट- सारी सभा तितर-बितर हो गई...। पर गुरू महाराज जरा भी विचलित नहीं हुए। वह वैसे ही शांत बैठे रहे।

भगदड़ के बाद गुरू के अलावा मात्र अधीर शिष्य एंड कंपनी ही बाकी बची।

गुरू ने बड़ी प्रसन्नता से कहा ''हाँ, अब ठीक है। अब केवल जिज्ञासु पात्र ही बाकी बचे हैं।''

''गुरू महाराज, यह रात तो कोलंबस की पहली यात्रा से भी अधिक लंबी और अनिश्चित है। कोई लघु उपाय (शार्ट-कट) हो तो बतायें।'' अधीर शिष्य अधीरता से बोला।

ज्ञान का ऐसा पात्र पाकर गुरू गलगल हो गए। प्रसन्नता से उनकी आँखें मुँद गईं। सबको लगा कि गुरू समाधिग्रस्त हो गये हैं। इसके पहले कि जिज्ञासु शिष्य का धैर्य एक बार फिर समाप्त हो, गुरू के नेत्र उन्मीलित हुए (खुल गये)। उनके मुख पर संतोष की मुस्कान थी।

गुरू उवाच ''वत्स, हमारे यहाँ लघ्वीकरण (शार्टकट) की सतत, परंपरा है। चलताऊ भाषा में इसे 'जुगाड़' नाम से जाना जाता है।'' शिष्य

का जिज्ञासु मन सुन रहा था।

गुरू वाणी की सुरभि फिर उठी ''वत्स, मेरे कोष में अति-लघु (अल्ट्रा-शार्ट) व लघु (शार्ट) सभी जुगाड़ हैं। तुम पर क्या फिट होगा तुम स्वयं निश्चित करो।''

शिष्य अंजलिबद्ध, विनत-वदन खड़ा रहा।

गुरू शिष्य पर निहाल होते हुए बोले, ''ठीक है, मैं दोनों विधाओं का तुमसे परिचय कराता हूँ।

''यदि तुम्हारे इरादे तुम्हारे शरीर की तरह मजबूत हैं तो तुम्हें मात्र 10-12 मित्रों (लफंगों) की आवश्यकता पड़ेगी।''

शिष्य ने सोचा भारत में लफंगों की क्या कमी। पर वह चुप रहा।

''ऐसी सेना को लेकर तुम सबसे 'पाश' इलाके की बाजार की ओर निकल जाओ। नि:संकोच काउंटर पर बैठे मालिक से चंदा माँगो। दुकानदार पहले अवश्य मना करेगा पर तुम हतोत्साहित न होना।'' गुरू ने कहा।

''कुछ हठी लोग बगैर दंड के नहीं मानते, सो उसके मना करते ही दंड (डंडे) को पहले तो उसके शीशे के काउंटर पर पटकना, और फौरन 180 डिग्री पर घूम कर पीछे लगे शीशे के शो केस पर प्रहार करना। टूटते हुए कीमती शीशे की खनक व्यापारियों की व्यापारिक बुद्धि जगा देती है। इससे पहले कि तुम उसका और नुकसान करो वह तुम्हें चंदा दे देगा। ऐसा वह इसलिए करेगा क्योंकि थाना पुलिस करने में उसका बहुत समय नष्ट होगा और पुलिस भी बगैर चंदे के रिपोर्ट थोड़े ही लिखने वाली।''

''फिर यही प्रक्रिया अगली दुकान में दुहराना, परंतु वहाँ शायद तुम्हें दंड की आवश्यकता नहीं पड़ेगी क्योंकि टूटते शीशे की आवाज दूर तक जाती है। इस प्रकार एक प्रहार में ही तुम पूरी बाजार से चन्दा वसूल लोगे।

'प्वाइंट नोटेड गुरूदेव' शिष्य उत्फुल्लित होकर बोला।''

''एक बात और नोट कर लो वत्स, इस आय का एक हिस्सा तुम्हें थाने में भी अर्पित करना होगा। पुलिस की आँख बहुत पैनी होती है। उसे जघन्यतम अपराध दिखे न दिखे, पर मार्केट में कौन, कितना और कैसे कमा रहा है यह उनकी नजरों से छिप नहीं सकता।''

इसके बाद गुरू बड़े कांफिडेंशियल स्वर में फुसफुसाते हुए बोले ''अपने कैरियर के प्रारम्भ में पुलिस को पैसा देने में जरा भी कोताही मत बरतना; यह एक इनवेस्टमेंट होगा। तुम जब शीर्ष पर पहुँचोगे तो यही पुलिस वाले तुम्हारे द्वार पर ब्रीफकेस लिए खड़े दिखेंगे।''

गुरूदेव ने अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से चेतावनी देते हुए कहा ''पर ध्यान रहे इस धंधे की उम्र 5-6 वर्ष से अधिक नहीं होती है। क्योंकि इसके बाद मेरा कोई नया शिष्य तुम्हारी जगह लेने पहुँच जाएगा।'' यह कहने के उपरान्त गुरू के नेत्र पुनः निमीलित हो गये। ''इतने लफंगई की कमाई की आयु 5-6 वर्ष की ही होती है। इसके बाद ऐशो आराम कैसे चलेंगे। गुरूदेव?'' इस बार गुरू के मुँह से संस्कृत में ज्ञानधारा बही ''उद्योगिमुपैति लक्ष्मी'' फिर शिष्यों की बुद्धि पर तरस खाते हुए गुरूजी ने अनुवाद सुनाया, ''लक्ष्मी उद्योग एवं सतत परिश्रम करने वाले के पीछे-पीछे चलती है। यदि इन संघर्ष पूर्ण वर्षों में तुम इतना धन और लफंगे समेट सके। मार्केट की पार्किंग का ठेका प्राप्त कर सको तो तुम्हारे पास पर्याप्त धन और बाहुबल अवश्य एकत्र हो जाएगा कि तुम महापालिका के पार्षदी का चुनाव जीत सको। एक बार तुम इस कुर्सी पर आसीन हो गए तो उगाही के लिये तुम्हें मार्केट में घूमना नहीं पड़ेगा। लोग खुद तुम्हें चंदा दे जाएंगे। अब केवल दुकानदार ही नहीं वरन् टोले-मोहल्ले के निवासी भी अपनी उन जनसुविधाओं हेतु चंदा देने स्वयं तुम्हारे द्वार पर खड़े रहेंगे। आखिर तुम जन-प्रतिनिधि जो ठहरे। यह राह पहले पार्षद और फिर तुम्हें मेयर की कुर्सी तक तो पहुँचा ही देगी।''

शिष्य घुटनों के बल बैठता हुआ बोला, ''परंतु गुरू जी, यह राह प्रारम्भ में तो अवश्य शीघ्र फलदायी पर बाद में बहुत सुस्त हो जाती है। फिर इसमें स्त्री शक्ति का कोई रोल ही नहीं। इतना ब्रह्मचर्य कैसे सधेगा गुरूदेव?''

गुरूदेव प्रसन्न होते हुए बोले, ''वत्स वास्तव में तू तो 'अति लघु राह' (अल्ट्रा शार्ट-कट) के लिए ही जन्मा है। इसके लिए तुम्हें समाज के 'रागदरबारी' से परिचित होना होगा।'' शिष्य की प्रश्नवाचक मुद्रा देख वे फिर बोले ''रागदरबारी ग्रंथ एक प्रशासनिक अधिकारी द्वारा विरचित

है। उस दृष्टा को सेवाकाल के प्रारम्भ में ही इस राग के आरोह-अवरोह, स्वर तथा लय का भान हो गया था। वह स्वयं तो सेवानिवृत्ति तक इससे उसी प्रकार निर्लिप्त रहा जैसे 'काम-सूत्र' के रचयिता महर्षि वात्सायन आजन्म ब्रह्मचारी रहे।''

कुछ रुक कर पुनः गुरूदेव उवाच, ''परंतु तुम्हारी राह इस दृष्टा से विपरीत होगी, क्योंकि तुमको तो इसमें संलिप्त होना है। इस ग्रंथ के पाठन से तुम्हारे ज्ञान-चक्षु खुल जायेंगे। तुम समाजसेवा के उपयुक्त हो जाओगे। इस योग्यता के बाद तुम्हें राजधानी की किसी यूनिवर्सिटी में मेरिट, आरक्षण अथवा जुगाड़ से दाखिला लेना होगा। इसके बाद तुम्हारी राह किसी एक्सप्रेस-वे की भांति फास्ट-ट्रैक और आसान हो जाएगी।''

गुरू पुनः बोले, ''अब, यहाँ तुम्हारे चेलों का दायित्व हो जाता है कि एडमिशन के बाद ही वह तुम्हारे झंडे तले छात्रों और विशेषकर छात्राओं की कठिन भीड़ में फीस जमा करने में सहायक हों। स्वयं तुम उन सुन्दरियों की जरूरत न होने पर भी फीस माफी के लिए प्राक्टर से झगड़ा करो। यदि आवश्यकता हो तो उसे धमकाओ भी। मान लो कभी प्राक्टर तगड़ा निकला और स्वयं उसने तुम्हें 'धमक' दिया तो तुम्हें शिक्षकों के अत्याचार के विरुद्ध हड़ताल करने का स्वर्णिम अवसर अपने आप ही उपलब्ध हो जाएगा।''

सहायकों की भीड़ जो अभी तक केवल श्रोता बनी थी, अपने लिए भी 'एक्शन' और माल-पानी के प्रबंध की खुशबू पाकर आंदोलित हो उठे, परंतु नेता की एक ही गुर्राहट भरी 'हूँ' से अधीर से धीर हो गये।

''हड़ताल से क्या उपलब्धि होगी गुरूदेव'' शिष्य ने पौराणिक परंपरा में ज्ञान के विस्तार हेतु प्रश्न किया।

''हड़ताल से कैम्पस में पहले पुलिस और बाद में पीएसी बुलाई जायेगी। यहाँ ध्यान देने की बात है कि पीएसी वाले बड़े ही सरल स्वभाव के होते हैं। वह सिविल पुलिस की भाँति दुनियादार नहीं होते। वह बेचारे एक तमाचा खाकर लाठी-चार्ज को उद्यत हो उठते हैं। स्मरण रहे कि छात्र-नेता होने के कारण तमाचा तुम्हें ही मारना होगा। यह तुम्हारी चतुरता पर निर्भर करता है कि तुम कैसे एक निरीह पीएसी के जवान को तमाचा

मार कर चपलता से भीड़ में गुम हो सकते हो।'' गुरू ने बताया।

''पर इस तमाचे से क्या प्राप्त होगा गुरूदेव?'' शिष्य ने पूछा।

''इस तमाचे की गूँज तुम्हारे नेता पद पर स्थापित होने की दुंदुभी होगी। सरल बुद्धि पीएसी वाले तमाचा खाकर लाठी-चार्ज करेंगे। पर तब तक तुम 'गदर्भ शृंग' (गधे के सिर में सींग) की भाँति लुप्त हो चुके होगे। मार खाना भोली जनता का काम है। लीडर को लीड करने हेतु सदैव तत्पर रहना परम आवश्यक है।'' गुरू ने कहा।

''लाठी चार्ज में घायल छात्र-छात्राओं के साथ फोटो खिंचाते हुए इस पिटाई को नादिरशाही जैसी बर्बरता जब तुम बताओगे तो यह छात्र-संघर्ष पूरा प्रदेशव्यापी हो उठेगा। प्रशासन तुम्हें मनाएगा, प्रलोभन देगा और साथ ही विश्वविद्यालय की फैकल्टी को तुम्हारे सम्मुख नतमस्तक होने को विवश करेगा। तब तुम अपने शिक्षकों का मान रखते हुए उनके आग्रह पर स्ट्राइक वापस लेकर उनके भी कृपा-पात्र बन जाओगे। तुम्हारे शिक्षक समझ जायेंगे कि बगैर तुम्हारी सहायता के शिक्षा-सत्र पूर्ण नहीं हो सकता।''

''इस प्रकार तुम एक शक्तिशाली नेता के रूप में उभरोगे। संगठन शक्ति आते ही स्त्री-शक्ति भी तुम्हारे साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने लगेगी। तुम्हें स्वयं मार्केट में छात्र-संघ चुनाव हेतु चंदा वसूली करने नहीं जाना पड़ेगा। यह वसूली का कार्य तुम्हारे साथी (चमचे) बारहों महीने निष्ठापूर्वक तुम्हारे लिए लक्ष्मी-संग्रह करने लगेंगे। तुम्हारे सहायतार्थ कई राजनीतिक पार्टियाँ तुम्हें अपने पाले में लेने को प्रस्तुत होंगी। तुम बगैर किसी भेदभाव के सभी से अनुदान प्राप्त करते रहना।''

''...और वत्स, छात्र-संघ की अध्यक्षी के बाद विधायकी, लालबत्ती या मंत्री पद कुछ भी तुमको दुर्लभ नहीं रहेगा। परंतु यह सभी उपलब्धियाँ तुम्हारी लगन और परिश्रम पर निर्भर करेगा।'' कहकर गुरूदेव के नेत्र फिर मुँद गये... गुरूदेव समाधिस्थ हो चुके थे।

गुरू से परमज्ञान की प्राप्ति के बाद शिष्य इतना ऊर्जित हो उठा जितना गीता-ज्ञान पाने के बाद अर्जुन भी नहीं हुआ होगा। उसने उच्च स्वर में गुरूदेव का जैकारा लगाया। उसके सहयोगियों के समवेत स्वर से

एक बड़ी गर्जना सी ध्वनि उत्पन्न हुई। उपवन के वृक्षों पर बैठे पक्षी अचानक पंख फड़फड़ा कर उड़ गये। परंतु गुरूदेव की मुद्रा पर किंचित मात्र भी प्रभाव नहीं पड़ा। वह वैसे ही समाधिस्थ बने रहे। सभी शिष्यों ने गुरू को साष्टांग प्रणाम किया, और तीन परिक्रमा करके नायक को आगे कर उपवन से प्रस्थान कर गये।

शिष्यों के प्रस्थान के बाद ही लंबी सांस लेकर गुरूदेव ने आँखें खोली। वह बेचैन हो रहे थे। उनकी दूसरी खुराक का समय हो चुका था; सो उन्होंने आसन के नीचे से ठर्रे की बोतल निकाल कर एक दीर्घ घूँट लिया। हल्की सी खाँसी भी आई। नीट लेने में ऐसा तो होता ही है। गुरू ने दूसरा घूँट भरकर बोतल की आँखों के सम्मुख रख बोले ''ऐ ठर्रे, यदि मेरा यह शिष्य सफल हो गया तो मैं भी तेरी जगह विलायती का प्रयोग करने लगूँगा। देखो विधि ने क्या रचना रच रखी है।''

X X X X X

गुरू ने तीसरे घूँट के लिए बोतल को होंठो से लगाया ही था कि एकाएक विघ्न उपस्थित हो गया। उनके सामने सुदामा छाप एक युवक खड़ा था।

गुरूदेव बोले, ''तुम कहाँ से कुसमय प्रकट हो उठे?''

''मैं गया ही कहाँ था गुरूदेव?'' फिर गुरू को सुरा प्रेम उद्घाटन के अपराधबोध से मुक्त करता हुआ बोला ''गुरूदेव, आप सोमरस पान करते रहें। इसमें कोई दोष नहीं। सागर-मंथन के बाद जिन्होंने सुरा-पान किया वही देवता (सुर) कहलाये। यदि कृपा हो तो एक-दो बूँद का प्रसाद मुझे भी प्रदान करें।''

गुरूदेव ने इस सुदामा के ज्ञान और तार्किकता से प्रभावित होकर ठर्रे की एक धारा उस पर भी प्रवाहित कर दी, जिसे शिष्य ने बड़ी भक्ति के साथ चुल्लू में ग्रहण किया। ठर्रा-पान के बाद हाथ में शेष बूँदों से बड़ी भक्ति के साथ अपने सिर के चारो ओर आचमन कर, पुनः गुरू के समक्ष अंजलिबद्ध खड़ा हो गया।

गुरू ने बोतल को यथास्थान छिपाने के बाद शिष्य से पूछा, ''मेरा प्रश्न अभी भी अन्उत्तरित है वत्स, तुम कहाँ से प्रकट हो गये?''

''मैं गया ही कब था गुरूदेव?'' गुरू की आँखों में विस्मय देख उसने पुनः एक्सप्लेन किया। बोला, ''दरअसल मुझे अपनी काया बहुत प्यारी है गुरूदेव। जब आपके व्यग्र शिष्य एकाएक हिंसक हो उठे तो मैं शीघ्रता से आपके आसन के पीछे बने निरापद स्थान में छुप गया था। उनके जाने के बाद ही मैं बाहर निकलने का साहस कर सका।''

''तुम क्या चाहते हो मुझसे?'' गुरू की गंभीर वाणी गूँजी। सुरा के प्रभाव ने गुरू को औघड़दानी बना दिया था। अब वह कुछ भी वरदान दे सकते थे।

''गुरूदेव, मैं सारी सुख-सुविधाओं का आकांक्षी हूँ। मेरी कामना है कि मैं अपने स्थान पर बैठा रहूँ और बड़े-बड़े धनकुबेर, अधिकारी और नेता मेरे सम्मुख नतमस्तक रहें। सुरा-सुंदरी, लक्ष्मी मेरे चारा ओर उपस्थित रहें। पर स्वयं मुझे कोई कार्य न करना पड़े।'' शिष्य ने अपनी सारी मनोकामनायें गुरू के सम्मुख निःसंकोच वमन कर दीं।

गुरू दुलकी में थे, फिर भी निश्चिेष्ट नहीं थे, प्रश्न किया ''तुम्हारी कामनाएँ यथार्थ से परे नहीं हैं बगैर परिश्रम के भला ऐसा कोई जीवन संभव है क्या? शास्त्रों में भी ऐसा कहा गया है।''

''आप चाह लें तो सबकुछ हो सकता है, गुरूदेव।''

''गुरोर्ब्रह्मा: गुरोर्विष्णु: गुरोर्देवोमहेश्वरः, गुरु: साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः।'' एकाएक पाठशाला में पढ़े श्लोक का यहाँ 'टेक्निकल यूज' कर वह गुरू के सामने दंडवत् हो गया।

गुरूदेव का हाथ आशीष मुद्रा में ऊपर उठा ''एवमस्तु, **तब तू बाबा हो जा।**''

●

'र'

कमांडो रामू फौजी वर्दी में जब ट्रेन से उतरा तो बहुत ही रोबीला लग रहा था। अपना सामान खुद ही उठाए वह स्टेशन से बाहर बस स्टैंड पर आया। अपने गाँव को जाने वाली प्राइवेट बस पर बैठ गया। कंडक्टर के आने पर जब उसने टिकट माँगा तो कंडक्टर ने इन्कार कर दिया, ''हम लोग फौजियों से किराया नहीं लेते। आप यूँ ही चलिए।'' बहुत समझाने पर वह आधा किराया लेने को राजी हुआ। गाँव पहुँच कर जब वह बस से उतरने लगा तो कंडक्टर ने 'जय हिन्द' कहकर उसका सम्मान किया।

पगडंडी से अपने गाँव को जाते समय वह मन ही मन मुस्करा रहा था। फौजी होने के कारण रास्ते में मिले सम्मान से उसका दिल तो दूना था ही, साथ में अम्मा-बाबू को दीवाली के त्योहार में घर पहुँच कर चौंका देना चाहता था। खुशी जब आकस्मिक हो तो ज्यादा सुख देती है। बाबू तो भगत थे, उन्हें चीजों से अधिक लगाव नहीं था, फिर भी उनके लिए एक गरम ऊनी शाल और अम्मा के लिए ढेर सारे सामान लेकर आया था। माँ-बाप से मिलने की उत्सुकता में उसने ध्यान ही नहीं दिया की कुछ लोग गाँव की ओर से भाग कर आ रहे थे। वह अपनी धुन में चला जा रहा था, कि एक बुजुर्ग ने उसे पहचान कर पूछा ''का तुम परधान भगत क बेटवा रामू हो।''

उसके 'हाँ' कहकर सिर हिलाने पर वह बुजुर्ग उससे लिपट कर रोते-रोते बोला, ''बेटवा, तोहरे महतारी-बाप का उई सबै मार-मार के ढेर कई दिहिन। अबहुन बखत है, बनि सकै तो बचाव लेव।'' कहकर वह बुजुर्ग बस अड्डे की ओर भागता चला गया। रामू थोड़ी देर तो हतप्रभ रहकर सोचता रहा कि उसके भगत पिता और हमेशा मृदुभाषी माँ को कोई क्यों कर सताएगा?

फिर एकाएक बुजुर्ग के शब्द याद आए ''बनि सकै तो बचाय लेव।''

वह बेतहाशा अपने घर की ओर दौड़ पड़ा। फौजी को क्रुद्ध मुद्रा में तेजी से दौड़ते देख सामने से आने वाले सहम कर उसे रास्ता देने लगे। चौपाल पर पहुँच कर जो दृश्य सामने दिखा तो एक क्षण के लिये उसकी आँखें मुँद गईं। उसके पिता का सर, दाढ़ी, मूँछ यहाँ तक कि भौंहे तक मूड़ दी गई थीं और मुँह पर कालिख पोत दी गई थी। कुछ दूर पर दो युवक उसकी माँ को निर्वस्त्र कर चौपाल पर घूमा रहे थे। कमांडो के मस्तिष्क ने आदेश दिया कमांडो, चार्ज।

वह तेजी से चौपाल पर चढ़ गया, कमांडो ने चाकू से एक ही वार में उसकी माँ को पकड़े एक युवक की गर्दन हलाल कर दी। यह देख दूसरे युवक ने उस पर तलवार से हमला करना चाहा। इसके पहले कि उसकी तलवार कमांडो तक पहुंचे, कमांडो ने फुर्ती से उसका भी गला सामने से काट दिया। दो-तीन असलहाधारी उसकी ओर लपके। मगर रास्ते में ही उन दो युवकों को बिना आवाज किए गिरते देख उनकी हिम्मत पस्त हो गई। वह असलहा छोड़कर भाग खड़े हुए।

माँ को पकड़े युवक वहाँ के जमींदार के बेटे थे, और जमींदार खड़े होकर उन्हें ललकार रहा था। एक दम से दो बेटों को गिरते देख जमींदार अपनी जान बचाकर भागा। रामू ने उसका पीछा किया। जमींदार ने घर में घुस कर बड़ा सा दरवाजा बंद करने की कोशिश की, मगर रामू के एक ही धक्के से दरवाजा खुल गया और जमींदार के सर में लगा। जमींदार जमीन पर गिर गया। रामू ने एक ही वार में जमींदार का भी काम तमाम कर दिया। अपने मुँह पर छिटक कर लगे खून को हाथ से पोंछने के बाद उसने नजर ऊपर उठाई तो सामने जमींदारिन आती हुई दिखाई दी। रामू ने उसे मारने के लिए हाथ उठाया कि जमींदारिन रामू के हाथ पर 'र' गुदा देख कर चीखी, ''हे भगवान, यह तो मेरी बहन का बेटा रामू है।'' फिर गिड़गिड़ाती हुई रामू से बोली ''बेटा, हम तुम्हारी मौसी हैं। तुम भगत परधान के बेटे नहीं हो।'' फिर हाथ के गुदने की ओर इशारा करके बोली ''यह तुम्हारे हाथ का गुदना मैंने ही मेले में कराया था।''

जमींदारिन हाथ जोड़कर घुटने के बल बैठकर अपने भांजे से जीवन की भीख माँग रही थी।

क्षण भर के लिये रामू का हाथ थमा; जमींदारिन को आशा बँधी।

रामू बोला, ''मौसी नहीं, अगर तुम मेरी माँ भी होती और मेरा परिवार तुम्हारे साथ वही करता जो तुम लोगों ने मेरी माँ के साथ किया है। तब मैं उनके साथ भी यही करता।'' रामू का हाथ तेजी से नीचे आया फर्श पर खून की धार बह निकली।

जमींदार के यहाँ से लौट कर अपने माँ-बाप को सहारा देकर घर पहुँचाने के बाद वह सीधे थाने गया और अपना अपराध कबूल कर आत्मसमर्पण कर दिया।

थानेदार जब तफ्तीश के लिए मौका-ए-वारदात पर पहुँचा तो भगत को रमुआ की हिरासत का पता चला। वह दोनों अपना अपमान भूल गए और बेटे पर आने वाले संकट को सोचकर बिलखने लगे।

भगत और उसकी पत्नी को लोगों ने थाने पहुंचाया। ड्यूटी सिपाही ने दोनों को हवालात के अंदर जाकर रामू से मिलने की इजाजत दे दी। गाँव में भगत प्रधान का बड़ा सम्मान था।

माँ-बाप बेटे से लिपट कर रोने लगे। रामू भी उन दोनों को लिपटा कर खड़ा था। उसकी आँखों में भी आँसू थे, परंतु हताशा या अपराध बोध नाममात्र का भी नहीं था।

संयत होने के बाद भगत ने बेटे से कहा, ''बेटवा, इतना बड़ा कांड काहे कई डारेव। हम पंचन के लिए य कौनौ नई बात तो आय न। य तो हम लोग रोजै भुगतित है। अब तो आदत सि पड़ि गय है।''

''बाबू, तुम तो भगत हो और इसलिए संतोषी हो। मैं क्या, कोई भी अपने माँ-बाप का इतना अपमान बर्दाश्त कर सकता है?''

माँ-बाप रोते रहे।

रामू कुछ याद करते हुए, ''बाबू, जमींदारिन मेरे हाथ के गुदने को देखकर बोली थी कि मैं उसके बहन-बहनोई का बेटा हूँ। ऐसा उसने क्यों कहा? क्या उसने यह झूठ सिर्फ जान बचाने के लिए बोला?''

एकाएक भगत ने भगतिन की ओर देखा। दोनों की आँखों के आँसू सूख गए। बड़े कातर स्वर में भगत की आवाज निकली बोला, 'बेटवा, हम सिर्फ कहै क बदे ही भगत हन। आज समझ म आवा कि सच छुपाना भी झूठ का साथ देना होता है। हम सब कुछ तो सच बोलत रहेन मुदा एक सच छुपउतौ रहेन। वही का पाप आज हमरे सामने फूटा है। अगर सच्ची बोल दिये होइत तो जीवन भर निपूता रहित मुदा तुमते यह अपराध तो न होत।''

X X X X X

भगवान की बनाई दुनिया बड़ी संतुलित है। यहाँ रात-दिन, पाप-पुण्य, सुख-दु:ख सभी पाये जाते हैं। संभवत: इसीलिए सब सुख होने के बाद भी अमृत को निस्सन्तान होने का दु:ख बहुत दिनों तक भोगना पड़ा। अधेड़ अवस्था में एक संतान हुई, वह भी पुत्र। अमृत निहाल हो गया। उसकी पत्नी रमा को तो सबकुछ मिल गया। पर इतनी खुशी के बाद अब दु:ख की बारी थी सो तीन महीने के अंदर ही अमृत को फेफड़े का कैंसर हो गया। काफी एडवान्स्ड था। डॉक्टर ने मात्र तीन माह की ही आयु शेष बताई।

घर में तिल-तिल कर मरने की अपेक्षा उन्होंने तीर्थ स्थल जाकर रहने की सोची। दंपति अपने तीन माह के शिशु के साथ प्रयाग माघ-मेला में सत्संग और गंगा सेवन के लिए त्रिवेणी तट पर टेंट लगाकर रहने लगे। सुबह से शाम तक धर्म चर्चा, धार्मिक अनुष्ठान, यही उनका जीवन हो गया। ज्ञान की बातों से आसन्न मृत्यु का भय भी कुछ कम हुआ या कहिए उसकी ओर से ध्यान बँट गया।

माघ की सर्दी ऊपर से गंगा नदी का खुला तट। रमा को खाँसी और ज्वर आने लगा। मेले के सरकारी डॉक्टर को दिखाया, उसने डबल निमोनिया बताकर मेडिकल कॉलेज में भर्ती करने की सलाह दी। अगले दिन जब तक वह मेडिकल कॉलेज पहुँचे, रमा को साँस लेने में कष्ट होने लगा। पहले इमरजेंसी और फिर आईसीयू में इलाज चला, पर जैसे जाने की होड़ में रमा जीतना चाहती थी और वह जीत भी गई। अब केवल कैंसर ग्रस्त अमृत और 4 महीने का अबोध शिशु राम ही बचे।

अमृत और रमा ने बालक के दीर्घायु होने के लिए गाँवों में प्रचलित टोटका भी किया था। पैदा होते ही उसे एक मुसलमान दंपति को दे दिया गया, जिसने नवजात का नाम 'रहमान' रखा दिया गया। शिशु की बाँह पर नाम का पहल अक्षर 'र' गुदवा दिया गया था। अब उस मुसलमान दंपत्ति से रहमान को पुन: अमृत दंपत्ति ने मोल देकर खरीद लिया। इस प्रकार वह अपने मन में नियति को धोखा देकर बालक की दीर्घ आयु के लिए आश्वस्त हो गये। पर ब्राह्मण परिवार में रहमान कैसे चलेगा?

बीच का रास्ता निकाला गया कि राशि का नाम तो 'रहमान' ही रहेगा पर पुकारने का नाम 'राम' रखा जाएगा। सभी संतुष्ट हो गये।

अब राम और रहमान एक थे।

पत्नी की मृत्यु व उसके क्रिया-कर्म के बाद अमृत को राम की याद आई। उसके जीवन के कुछ ही दिन शेष थे। अबोध राम का क्या होगा? इस चिंता ने उसके पत्नी वियोग को लगभग विस्मृत कर दिया। गरीब का बेटा हो तो उसे कोई भी पाल लेता, पर अमीर के बेटे की जान तो हमेशा खतरे में होती है। एकलौते वारिस को मिटाने के लिए अपने ही निकट संबंधी तत्पर हो जाते हैं।

उस रात अमृत सोता जागता रहा। हम अपनी नींद में भी अपनी चिंता और खुशियाँ लेकर जाते हैं। वही भाव हमे सपने के रूप में दिखते हैं, और कभी-कभी समाधान भी करते है। यह समाधान सही था या गलत यह समय ही निश्चित करता है।

अमृत के सपने में रमा आई। वह 'सुहागिन' मरने से बहत खुश थी। उसने अमृत को बताया कि आदमी का चाहा नहीं होता है। जो ईश्वर चाहता है वही होता है।

एकाएक अमृत को बड़े जोरों की खाँसी आई, उसकी आँख खुल गई। उसे अपने कपड़ों पर कुछ गीला-गीला लगा। उठकर देखा सारा कुर्ता खून से भीग चुका था। डॉक्टर ने कहा था कि खून आने के बाद वह एक दो दिन का ही मेहमान रह जायेगा।

अमृत को अपनी आसन्न मृत्यु से भय नहीं लगा परंतु वह राम को लेकर नए सिरे से चिंतित हो उठा। उसे कल परसों में ही राम का भविष्य

तय करना है। उसने संतो के शिविरों में जाकर जानने का प्रयास किया और कि कोई नि:संतान दंपत्ति राम को गोद ले ले पर ऐसा कोई नहीं मिला। हताश होकर उसने सबकुछ भगवान पर छोड़ने का निश्चय कर लिया और निष्काम भाव से संतो का प्रवचन सुनने लगा। संत महाभारत में कर्ण के जन्म और उसकी माँ द्वारा उसे गंगा को समर्पित करने की घटना सुनाकर समझा रहे थे कि जन्म, मृत्यु निश्चित है। उस अबोध शिशु जिसे बाद में कर्ण का नाम मिला, वह जीवित हस्तिनापुर की राधा को मिला और संसार में अमर हो गया।

X X X X X

इतना बताने के बाद भगत और भगतिन फिर से रोने लगे। रामू के आश्वस्त करने के बाद भगत बोला ''बचवा यहि के बाद हमरे मन मा पाप आयगा। हमरेव कौनौ संतान न रहे। तो हम दोनों तुमका लैके चुपचाप निकरि गयेन। मेले म सबै एक दूसरे ते अंजान रहैं तो कोहू क सेठ के बेटवा अैर चाकरन का ध्यान न आवा। हम लोग तुमका लै के हियाँ हुआँ फिरत रहेन। फिर कंठी पहिन के भगत होई गेन। भगत बनै के बाद तुम जब पाँच साल के हुई गैव तब हम तुमको लै के गाँव म दुबारा लौटेन। हमका सब लोग भगत जानि के सम्मान दिहिन मुदा, बाल्मीकि की तरह हमार पापकर्म कोऊ न जानै पावा। वहै पाप आज फूटा है जहिका फल तुमका भुगतै का परि रहा है। कहकर भगत फूट-फूट कर रोने लगा।

रामू नि:स्तब्ध अपने इतिहास की वास्तविकता सुनता रहा... तो जमींदारनी ने मुझे सही पहचाना था। मैं ही उसकी मृत बहन रमा को बेटा हूँ...। पर दूसरे ही क्षण वह इतिहास को त्याग वर्तमान की वास्तविकता में आ गया। उसने उठकर अपने पिता को स्नेह से गले लगाया और बोला, ''बापू, अब उन राक्षसों की औलाद बताकर मुझे शर्मिंदा मत करो। मैं तुम्हारा और अम्मा का बेटा हूँ। मेरे लिए मात्र यही सत्य है और अब तुम इसी सत्य का साथ दो।'' कहता हुआ वह उन दोनों को लिपटा कर हवालात के बाहर तक छोड़कर वापस फिर से हवालात में आ गया। चौकीदार ने हवालात में ताला लगा दिया।

रामू ने अदालत में भी जज के सामने अपना अपराध स्वीकार कर

लिया। भगत ने अपनी सारी पूँजी बेचकर रामू के बचाव में अच्छा वकील ढूँढ़ कर खड़ा किया था। वह वकील कोर्ट में इस घटना को 'मर्डर अंडर ग्रेव प्रोवोकेशन' (क्षणिक उत्तेजना में हुआ अनियोजित अपराध) सिद्ध कर कम से कम सजा दिलवाना चाहता था। वहीं, जमींदार का वकील इस कांड को 'ट्रेण्ड कमांडो' द्वारा सोचा समझा 'मानव वध' बताकर रामू को मृत्यु-दंड दिलाने को तत्पर था।

वकील ने पूछा ''हवलदार रामू, सेना में सिखाये गुर को तुमने गाँव में अपनी जातिगत घृणा के चलते जमींदार के पूरे परिवार का खात्मा कर दिया?''

रामू बोला, ''घृणा और दुश्मनी की बात गलत है।'' वकील बोला, ''एकाएक गुस्से में मर्डर, तात्कालिक होता है। तुमने जमींदार के बेटों की हत्या करने के बाद जमींदार को दौड़ाकर उसके घर में मार डाला उसके बाद उसकी निर्दोष पत्नी का भी बेरहमी से कत्ल कर दिया। क्या तुमको सेना में यही सिखाया गया है।''

''जी हाँ, सेना का उसूल है कि आततायी अगर तुम पर आक्रमण करता है तो तुम सिर्फ अपनी पोजिशन की रक्षा ही मत करो, बल्कि आगे बढ़कर उसके ठिकानों को भी नष्ट कर दो, जिससे वह तुम पर दोबारा हमला न करने पाये।''

''नोट किया जाय मी लार्ड, सेना कमाण्डो रामू ने सोची समझी साजिश के तहत ही जमींदार के परिवार को समूल नष्ट किया है। इसलिए मैं इसके लिए फाँसी की दरख्वास्त करता हूँ- 'टू बी हैंग्ड टिल डेथ।''

रामू का वकील नाटकीय अंदाज में ताली बजाता हुआ उठ खड़ा हुआ बोला, ''मी लार्ड, बेहतर हो कि आप अभियोजन पक्ष के वकील को अपनी कुर्सी सौंप दें और वह मनमाना फैसला स्वयं लिख लें। इससे अदालत का समय बचेगा और त्वरित न्याय भी हो जायेगा।''

अदालत में बैठे लोग इस कटाक्ष पर हँसने लगे। जज साहब भी हौले से मुस्करा कर बोले ''वकीले सफाई, कृपया आप अपनी बहस जारी रखें।

''सर, आर्मी वाले बहुत साफ दिल के होते हैं। यही कारण है कि

आवेश में दुर्घटना हो जाने के बाद कमाण्डो रामू ने तत्काल ही थाने जाकर अपना गुनाह स्वीकार कर लिया। आप जानते हैं कि थाने में स्वीकार करने वाले अपराधी भी न्यायालय आते-आते अपने थाने वाले इकबालिया बयान से मुकर जाते हैं। कोर्ट भी मानती है कि संभवत: थाने में पुलिसिया डर से आरोपी ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया होगा। इस संभावना को ध्यान में रखते हुए ही आगे की कार्यवाही कोर्ट अभियोजन के द्वारा प्रस्तुत किये साक्ष्यों और बयानों की विवेचना करके अपना निर्णय सुनाती है।''

पर यह केस तो एकदम अनोखा है। अभियोजन पक्ष के पास मात्र अभियुक्त के बयानों के सिवा और कोई सबूत नहीं है। जमींदार के अत्याचारों से त्रस्त गाँव में कोई भी व्यक्ति मेरे विरुद्ध गवाही देने को तैयार नहीं है। हाँ, एक ही सबूत जो मेरे विरुद्ध जा सकता है वह है 'असलहे वारदात' पर फिंगर-प्रिंट की रिपोर्ट। परन्तु वह रिपोर्ट भी अभियोजन पक्ष ने प्रस्तुत नहीं की। अगर मैं अपने बयान से मुकर जाऊँ तो कोई अदालत मुझे दोषी नहीं ठहरा सकती। माफ कीजिएगा मी लार्ड, मैं भी अपने काबिल दोस्त की तरह जजमेंटल हो गया हूँ। यह आप को प्रिरोगेटिव (परमाधिकार) है कि इस 'दलित युवक को फिर भी' सजा दे सकते हैं।''

कोर्ट में बैठे जानकार स्तब्ध थे। जज साहब का मुँह कडुवाहट से भर गया। किस प्रकार वकील दलित आरोपी और सवर्ण जज पर व्यंग भरा आक्षेप कर गया।

जज साहब की मुद्रा सामान्य रही।

सफाई का वकील बोला, ''यह मैं मानता हूँ कि आरोपी सेना में कमांडो है। यह भी सत्य है कि कमांडो ट्रेनिंग होने के कारण ही वह इतना बड़ा कदम उठा सका। वरना यह भी सदियों से चले आ रहे अत्याचार को सहन कर लेता और सभ्य समाज का इस नृशंस एवं पाशविक घटना की ओर ध्यान ही नहीं जाता। आज मेरे मुवक्किल की वजह से ही इन मसले कुचले वर्ग की ओर समाज का ध्यान गया है। हुजूर, गीता में भी कहा गया कि ''आततायी को मृत्यु-दंड देना गलत नहीं है।''

वकील संयत आवाज में बोला ''मै ध्वंस के बदले ध्वंस का पक्षकार नहीं हूँ। अभियोजन पक्ष ही नहीं, मैं और कमांडो रामू भी यह मानते हैं कि अपराध हुआ है। वह उसी को सजा के रूप में प्रायश्चित करने आज अदालत में आपके सम्मुख खड़े हैं।''

नाटकीय ढंग से थोड़ा रुककर बोला ''मीलार्ड, यह आपका दायित्व है कि निर्णय करें कि कमाण्डो ने एक सोची समझी साजिश के तहत यह कृत्य किया है...? गाँव का एक युवक दीपावली मनाने घर आता है। वह देखता है कि उसके माँ-बाप का अपमान किया जा रहा है, उसकी माँ को सरेआम निर्वस्त्र कर घुमाया जा रहा है। देखकर, उसका मस्तिष्क 'कमांडो' मोड में चला जाता है। फिर एक ऐसा कांड हो जाता है जिसे की आदर्श परिस्थितियों में नहीं होना चाहिए। पर ऐसा उसने सोच-समझकर नहीं किया। जो भी उससे हो गया वह 'अंडर ग्रेवेस्ट प्रोवोकेशन' हुआ। न्याय अपराध नहीं, अपराध के पीछे की भावना को देखता है। मैं भी मानता हूँ कि मानव-वध हुआ है और उसकी सजा मिलनी भी चाहिए फिर भी परिस्थितियों को संज्ञान में लेते हुए तथा इस तथ्य को मद्देनजर रखते हुए कि, आरोपी ने स्वयं न्यायिक प्रक्रिया में मदद की है, उसके दंड की मात्रा कम से कम होनी चाहिए; वरना हुजूर भविष्य में कोई भी आरोपित अपना अपराध स्वीकार नहीं करेगा। आगे से कोई भी वकील वास्तविक आरोपित को अपराध स्वीकार करने को नहीं कहेगा।''

X X X X X

निर्णय के दिन कोर्ट खचाखच भरी थी, पत्रकार भी मौजूद थे।

जज साहब ने अपना फैसला सुनाया ''कमाण्डो रामू की स्वीकारोक्ति के बाद जिसका बचाव पक्ष ने प्रतिकार नहीं किया, से आरोप सिद्ध होता है। आरोपी सेना में कमांडो है इसलिए इस भर्त्सनीय घटना में चार मर्डर भी हुए। हो सकता है कि यदि आरोपी सेना की ट्रेनिंग पाया कुशल कमांडो न होता तो कांड इतना वीभत्स न हो पाता। वहीं यह भी सत्य है कि आरोपी एक साधारण दबे कुचले दलित की तरह कोई प्रतिकार न करता व सदियों से चली आ रही इस क्रूर व्यवस्था को अबाध चलते रहने को बल मिलता। फिर भी जो कुछ हुआ वह निंदनीय है। कोई भी

सभ्य समाज इसे सही नहीं मानेगा। अत: कमाण्डो रामू को यह अदालत दोषी करार देती है।'' कहकर जज साहब ने वकीले सफाई की ओर देखा।

वकील साहब कुछ विचलित दिखे।

''इसलिये मैं आरोपित को मुजरिम मानते हुए चार साल के कारावास का दंड प्रदान करता हूँ। यह सजा रात और दिन चलेगी। जेल के अधिकारियों को भी इस बात के निर्देश दिये जाते हैं कि वह कमाण्डो रामू को साधारण मुजरिम न समझे। वह हमारी सेना का बहादुर सिपाही है। इसके अलावा जेल में मुजरिम का आचरण यदि अच्छा रहता है तो यह सजा नियमानुसार कम भी की जा सकती है।

उपस्थित लोगों ने निर्णय पर प्रसन्नता से तालियाँ बजाईं। भगत खुश होकर भगवान को धन्यवाद देने लगे;

वहीं रामू अपने हाथ पर गुदे 'र' को देखकर धीरे-धीरे सिसक रहा था।

●

उर्मिला

वह आंगन में बैठ कर बर्तन माँज रही थी कि सुशीला की आवाज उसके कानों में पड़ी ''अरे कलमुँही माँ-बाप को खाकर अब तू मेरे घर को आग लगा रही है।'' सुनकर उर्मिला का पहले से ही दु:खी मन फट गया। वह राख से बर्तन माँजते हाथों से अपना मुँह ढाँप कर रोने लगी। मन हल्का होने पर चेहरे से हाथ हटाकर उसने अपने काले हाथों को देखा। उसे अपना चेहरा काला होने का भान ही नहीं हुआ। कालिख भरे हाथों में ही उसे अपनी जिंदगी की सारी घटनायें चलचित्र के समान दिखने लगीं।

माँ बाप की मृत्यु के बाद कोई और सहारा न होने की वजह से एक अदद इकलौते आवारा भाई के साथ उर्मिला अपनी बड़ी बहन सुशीला के यहाँ चली आई। बहन भी कोई बड़े अमीर घराने में नहीं ब्याही थी पर रोज दो जून की रोटी की व्यवस्था अवश्य थी। खाने को दो मुँह थे। और दो मुँह के आ जाने से घर की अर्थव्यवस्था चरमराने लगी थी। नालायक भाई की आवारगी के किस्से, जो कि पहले दूर होने से कभी-कभी ही सुनाई पड़ते थे, अब रोज पता चलने लगे। पति जो पहले प्राय: आँखों से ही नाराजगी जताते थे, मुखर होकर सुशीला को ताने भी सुनाने लगे थे।

लड़कियाँ हमेशा ही अभिशाप मानी जाती हैं। गरीब के घर, वह भी सुन्दरता से लदी बेटी पैदा होते ही चर्चा का विषय बन जाती है। नाउन सारे गाँव में बताती फिरी कि फलाँ पंडित के यहाँ गोरी बिटिया हुई है। इतनी गोरी कि लागे मालिश के लिये हाथ लगाने पर मैली हो जाय। महिलाएँ चुहुल करतीं, ''का नाउन भउजी, पंडिताइन यही मारे तुमते मालिश नहीं कराती?'' नाउन मुँह बनाकर कहती ''करावैं तौ उई दौर के पर नेग औ मजदूरी देय क टेंट म रकमऔ तो होय क चही। पंडितन म खाय के चाहे न जुरै पर रूप भगवान जरूर देत है।''

जैसे बेटियाँ बड़ी होती हुई यह चर्चा आम होने लगीं। छिछोरी निगाहें पीछा करतीं जिन्हें बच्चियाँ पहले तो नहीं जान पाती पर फिर सजग होने

लगतीं। ग्राम्य जीवन में सुंदर बेटी गरीबी से भी बड़ा अभिशाप है।

सुशीला और उर्मिला के साथ भी यही त्रासदी थी। गरीब ब्राह्मण के घर रूपवान बेटी!

सुशीला का ब्याह तो किसी तरह पड़ोस के गाँव में हो गया। इसमें दोनों बहनों की सुंदरता और सुगढ़ता की तारीफ का बड़ा योगदान था। सस्ती से सस्ती शादी में भी कर्ज तो लेना ही पड़ता है। कर्ज और नालायक बेटे की करतूतों से माँ बाप पीड़ित थे। गरीबी, कर्ज और कुपूत के त्रिशूल ने थोड़े दिनों में ही उर्मिला के माँ बाप को इहलोक से मुक्ति दिला दी। मुर्दनी में आये रिश्तेदारों की आवभगत व कर्मकांड के टंटों में घर भी बिक गया। अब सवाल था कि उर्मिला अपने आवारा भाई व अपनी सुंदरता के 'कलंक' को लेकर कहाँ जाये? ऐसे में पखवारे से पहुनाई कर रहे बड़े बूढ़ों ने व्यवस्था दी। ''बड़े बहन और बहनोई तो माँ बाप के समान होते हैं। इसलिये सुशीला को अपने छोटे भाई बहन को अपने साथ ले जाना चाहिये।''

हालाँकि, सभी पुरुषों के मन में सुन्दर उर्मिला को अपने साथ ले जाने की हसरत थी। पर वह पत्नी की वर्जनात्मक दृष्टि के सामने विवश थे।

नतीजतन सुशीला के साथ ही उसके भाई और बहन भी उसके घर पहुँच गए।

उर्मिला ने बहन के घर का चौका बरतन व अन्य ऊपर के काम संभाल लिये। सुशीला अब अपने बच्चे और पति को ज्यादा समय दे पाने की वजह से थोड़ा आश्वस्त थी। पर भाई? वह गाँव के शोहदों की टीम का कैप्टन बन गया। शोहदों में उसकी खासी साख हो गई। सिर्फ खाने और रात सोने के लिए ही उसकी शक्ल घर में दिखती थी। बहनों के लिए यह व्यवस्था भी सुखद थी। कम से कम घर में शांति तो थी। शनैः शनैः भाई की आवारागिरी की शिकायतें बाकायदा घर व राह चलते होने लगीं। धन की जरूरत केवल गृहस्थी में ही नहीं आवारागिरी में भी होती है। धन के कोई अन्य स्रोत के सुलभ न होने की वजह से उसको मजबूरी में कभी-कभी राहजनी भी करनी पड़ जाती है। इतना साधारण अर्थशास्त्र गाँव वाले तो चलो गैर हैं, खुद उसके बहन, बहनोई नहीं समझ पाते, इस बात से उर्मिला के भाई को बड़ा कष्ट होता।

एक रोज उसके बहनोई ने अपने साले को समझाया कि उसे अपनी

बहन उर्मिला के विवाह के लिये वर खोजने में उसको भी कुछ सहयोग करना चाहिए। वह बहनोई को बहुत आदर करता था अतः इस कार्य के लिये उसने हाँ कर दी। उसकी अर्थशास्त्री बुद्धि ने तत्काल ही राह सुझाई। पड़ोस के गाँव में ही उसे खाता पीता वर मिल गया। घर का अकेला था। उससे उर्मिला की शादी होने पर उर्मिला को खाने और पहनने की कोई तंगी नहीं होगी। क्या हुआ यदि वर की उम्र 55 या 60 वर्ष की थी। मर्द तो मर्द होता है। शादी में उसकी उम्र देखने का क्या औचित्य? उर्मिला को जिंदगी भर ठाठ से रखेगा। गाँव का जाना माना घराना है। क्या हुआ यदि एक हाथ से लूला है? वह तत्काल ही इस लूले वर के यहाँ पहुँचा और अपनी बहन की शादी का प्रस्ताव रखा। लूले तक भी उर्मिला के सौंदर्य व सुगढ़ता की चर्चा पहुँच चुकी थी। वह गलगल हो गया। कहाँ उसके लूलेपन की वजह से उसे कोई बदसूरत कन्या भी अब तक नहीं नसीब हुई, और कहाँ साक्षात मेनका का भाई देवदूत बन वैवाहिक प्रस्ताव ले कर उसके घर आया। उसने सावधानी से अपना लूला हाथ भावी साले को दिखाते हुए सेवक को नाश्ता पानी लाने को बोला। साले साहब ने नाश्ता पानी लेने के बाद भी उसके लूलेपन का कोई नोटिस न लेते हुए शादी में लेन देन की बात जारी रखी।

रात में ही खाने के समय उसने अपनी दीदी और जीजा के सामने उर्मिला की शादी के बारे में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी। लूला वर अपने कुँवारेपन के लिये अड़ोस पड़ोस के गाँव में कुख्यात था। सुशीला ने पहले एतराज किया तो उसके पति ने घुड़क दिया। किन्तु यह सुनकर कि शादी का सारा खर्च वर ही करेगा, सुशीला का भी प्रतिवाद शान्त हो गया। दहेज रहित आदर्श विवाह! यह बात दीगर है कि दहेज लड़की वाले न देकर वर ही पांच सौ रुपये (घूस में) अपने साले को दे रहा था। साला भी इसी दूरदृष्टि से शादी का प्रस्ताव ऐसे सुयोग्य वर के घर से ले कर आया था। साला तो सौ रुपये में ही मान जाता पर जीजा ने तो दिया उसका पाँच गुना! सभी संतुष्ट थे, सिवाय उर्मिला के जिसको विकलांग पति से शादी करनी थी। परन्तु उसकी राय जानने की किसी ने भी जरूरत नहीं समझी। आज शायद यह बात बड़ा अत्याचार लगे परन्तु 50 के दशक के ग्रामीण भारत में लड़की से राय लेने की परिपाटी बिल्कुल नहीं थी। (रमई काका की

कविता ''जब पचपन के घरघाट भयेन तब देखुआ आये बड़े बड़े।'' शायद आज वरिष्ठ नागरिक हो चुके पाठकों को याद होगा।)

उर्मिला उस जमाने की 'गऊ' लड़कियों की भाँति लूले पति को भी शायद पौराणिक सतियों की भाँति स्वीकार कर लेती परन्तु आज सुशीला के नाराज होने की वजह ने उसका दिल ही तोड़ दिया।

सुशीला की नाराजगी भी काफी 'जेनुइन' थी। भारतीय नारी सारी विपदायें हँसते-हँसते झेल सकती हैं। परन्तु सौत की परछाई उसे सपने में भी सहन नहीं। हुआ यों कि एक दिन काम करने में उर्मिला आँगन में फिसल कर गिर पड़ी। अभी वह सोच ही रही थी कि उसे चोट कहाँ लगी, कि उसका बहनोई आ गया। उसने उर्मिला को हाथ पकड़ कर उठाया ही था कि सुशीला वहाँ आ गई। उसे कुछ गलत फहमी हो गई। उस समय तो बगैर कुछ बोले ही वह दोनों को आग्नेय दृष्टि से देखते हुए वहाँ से तमक कर चली गई। उर्मिला इस मौन ज्वालामुखी को नहीं भाँप सकी। वह उठकर बर्तन माँजने लगी। परन्तु पति के जाते ही सुशीला अपनी ही लाचार बहन पर बरस पड़ी। यह आरोप उर्मिला के लिये अप्रत्याशित और हृदयविदारक था। महिलाओं में कष्ट में सबसे पहले आँसू निकल पड़ते हैं। रोने से उनका कष्ट कुछ कम हो जाता है, पर आँसुओं से भी जब आत्मिक कष्ट कम नहीं हो पाता तो वह कुछ भी कर सकती हैं... ''का न करे अबला प्रबल।'' पर भारत में नारी का कष्ट जब बर्दास्त के बाहर हो जाता है तब वह किसी और पर घात न करके आत्मघात की ओर प्रवृत्त हो जाती है। यही मानसिकता इस समय उर्मिला के मन पर भी छा रहा थी। गरीबी, सुन्दरता, माँ बाप की असमय मृत्यु, बहन बहनोई पर आश्रित होना और तो और शरीर तोड़ परिश्रम के बाद भी सम्मान की कमी, नालायक भाई और उसके द्वारा ढूँढ़ा गया विकलांग बूढ़ा पति। कहाँ तक अपने कष्ट गिने और सहे? और अन्त में बहन द्वारा घिनौना लांछन। इसके बाद वह अपने बहनोई के सामने कैसे पड़ेगी। बड़ी बहन का छोटी बहन पर इतना अविश्वास।

उसकी आँख के आँसू सूख गये। निश्चय ने उसके सभी कष्टों को समाप्त कर दिया था।

वह धीरे से उठी कमरे में जाकर बड़ी बहन के सोते बच्चे को प्यार किया। रसोई में बड़ी बहन कुछ काम कर रही थी। उर्मिला धीरे से घर के बाहर निकली और चल पड़ी। घर से आधे कोस पर ही बड़ी नहर थी। संयत

पगों से वह उधर ही चल पड़ी। नहर का पानी पूरे वेग से हरहरा कर बह रहा था। पुल पर खड़ी उर्मिला कुछ देर तक खड़ी देखती रही। फिर उसने धीरे से अपना पल्ला बाँधा...। धमाके के साथ नहर में कूद गयी।

गाँव से दो कोस दूर बड़ी नहर में किसी महिला का शव उतराया है। खबर पूरे गाँव में फैल गई। पुलिस के पहले ही तमाशबीन वहाँ पहुँचने लगे। ऐसी घटना या दुर्घटना की सूचना सबसे पहले ठेलुहा युवकों को ही मिलती है। कोई काम न होने से वह ग्रुप ही सबसे पहले घटना स्थल पर पहुँचता है। ठेलुहा का कप्तान होने की वजह से और ऊपर से बीती दोपहर से उर्मिला की घर पर अनुपस्थिति से उर्मिला का भाई और भी तेजी से नहर पर पहुँच गया। रास्ते में उसकी बाई आँख भी बुरी तरह फड़क रही थी। नहर पर लाश के कपड़े देखकर ही वह जान गया कि मृतका उसकी अपनी बहन उर्मिला ही थी। वह तुरंत वापस लौट पड़ा। खेत पर अपने जीजा को बताने के बाद वह बड़ी बहन सुशीला को बताने भागा। सुशीला अपनी छाती पीट-पीट कर रोने लगी पर अपने दुधमुँहे बच्चे की वजह से नहर तक नहीं जा सकी। पुलिस पहुँची पंचनामा हुआ और डेड बॉडी रिश्तेदारों को सौंप दी गई।

उर्मिला का पार्थिव शरीर सुशीला के घर के आँगन में रखा गया। महिलायें अन्तिम संस्कार के लिये एकत्र थीं। सभी के मुँह पर उर्मिला की शील, सुन्दरता तथा सुगढ़ता की तारीफें थीं। उसके चरित्र की भी प्रशंसा हो रही थी। यह चर्चा सुशीला के दिल को अपराध बोध से और भी साल रहा था। महिलायें बतिया रही थीं, देखो मरते समय भी उर्मिला ने नहर की धारा में शरीर के उघड़ने से बचाने के लिए अपने आँचल से शरीर के ऊपरी हिस्से को सावधानी से बाँध लिया था और साड़ी के निचले हिस्से को लांग बाँध कर उघड़ने से बचा लिया था। इस तरह मृत्यु के बाद भी बेपर्दा होने से अपने को बचाने का उसने प्रयास किया था, जिसमें वह पूर्ण रूप से सफल रही थी।

भीड़ में सबसे ज्यादा रोने वाला उर्मिला का नालायक भाई ही था। लोग समझ नहीं पा रहे थे कि वह बहन की मृत्यु से ज्यादा दुःखी था या उसके 'लुल्ले' से मिलने वाले पाँच सौ रुपये के नुकसान से ज्यादा पीड़ित था।

●

डॉ. पं. मुबारक प्रसाद

(एक अविस्मरणीय संस्मरण पर आधारित)

सन् 1958 में हम लोग गाजीपुर में थे। मैं ग्यारह प्लस का था और आठवीं कक्षा में पढ़ता था। पिता डिस्ट्रिक्ट प्लानिंग आफिसर थे। मई के महीने में माँ को कैंसर डाइग्नोज किया गया। तब कैंसर के बारे में इतना ज्ञान नहीं था। ज्ञानी लोगों ने कहा है कि 'कैंसर धूम्रपान करने से होता। आजकल डॉक्टर भी जाने किसी को क्या बता दें।' बात हँसी में टल गई। हम लोग गर्मी की छुट्टियों में अपनी ननिहाल उन्नाव आये। मगर माँ फिर वापस गाजीपुर नहीं जा पाईं। लखनऊ की डॉक्टर ने तय कर दिया कि माँ को कैंसर है। उस समय कैंसर के इलाज के लिये आगरा मेडिकल कॉलेज के डॉ0 नवल किशोर का बहुत नाम था (डॉ0 नवल किशोर व डॉ0 टी0पी0 वाही का नाम कैंसर की मेडिकल की किताबों में भी आ गया था)। वहाँ बड़े चाचा सिविल जज थे। भगवान की बड़ी कृपा थी। हम लोग इलाज के लिए आगरा आ गये। परन्तु आगरा में एक हकीम साहब ने बगैर ऑपरेशन के ठीक करने का दावा किया सो दो महीने उसमें खराब हुए। जब मेडिकल कॉलेज पहुँचे तो डॉक्टरों ने बताया कि अब बहुत देर हो चुकी है ऑपरेशन होना अब सम्भव नही है। शायद मुम्बई (तब बंबई) टाटा अस्पताल में कुछ हो सके। सब टाटा अस्पताल मुम्बई भागे। पर वहाँ भी वही जवाब। दो महीने में उन्होंने पैलिएटिव रेडियोथेरैपी (हल्की काम चलाऊ बिजली की सिकाई जो एडवान्स्ड कैन्सर में मन बहलाने भर का फायदा करती हैं) देकर इसके बाद 'औषधं मात्र गंगोदकम्' (अब मात्र गंगा जल ही औषधि है)। समझा कर टाटा अस्पताल से वापस कर दिया गया। माँ चलती फिरतीं बात करतीं। सब प्रकार से सामान्य दिखती थीं। केवल कमजोर होती जा रही थीं। समझ नहीं आ रहा था या हम समझना नहीं चाह रहे थे कि ऐसे कैसे वे ठीक नहीं होंगी। सुना मेडिकल कॉलेज पटना में एक डॉक्टर इस मर्ज के माहिर हैं। हम सब माँ को लेकर पटना पहुँचे। वह सर्जन ऑपरेशन करने को तैयार

हो गये। परन्तु पूर्ण रूप से ठीक होने के लिए ईश्वरीय चमत्कार चाहिये। हमारे सामने कोई चारा नहीं था।

ऐसी कठिन परिस्थितियों में हमारी कहानी के नायक डॉक्टर पं. मुबारक प्रसाद की एन्ट्री होती है। वह मूलतः बहराइच के रहने वाले थे और पटना मेडिकल कॉलेज में फाइनल इयर में एमबीबीएस में पढ़ रहे थे। फाइनल इयर में काफी कुछ डॉक्टरी आ जाती है। डॉक्टरों और नर्सों से भी अच्छी जान पहचान हो जाती है। इसलिये इस अनजान देश में डॉ0 मुबारक हमारे लिये देवदूत से कम नहीं थे। सुन्दर, गोरे चेहरे पर गोल्डेन फ्रेम का चश्मा। कुल मिलाकर आकर्षक व्यक्तित्व। जब माँ की तबीयत खराब होती तो वही दौड़भाग करते (होपलेस केसेज में डॉक्टर और नर्सें भी अधिक तत्पर नहीं रह पाते)। माँ प्राइवेट रूम में थीं। मेरे एक चाचा, मौसी तथा नानी जी माँ की देखभाल के लिये साथ थीं। मेरे पिता के विशेष आग्रह पर डॉ0 मुबारक सुबह का नाश्ता व दोपहर का खाना कभी-कभी हमारे साथ ही खाते थे। नानी ही बर्तन माँजती थीं। पहले नाम सुन कर नानी ने पिताजी से पूछा, ''कै भइया! ई डॉक्टर तौ मुसलमान हैं?'' पिताजी ने फौरन नानी को आश्वस्त करते हुए कहा, ''नहीं अम्मा, यह डॉक्टर मुबारक प्रसाद हैं। ये गुजराती ब्राह्मण हैं। वहाँ हिन्दुओं के नाम भी मुसलमानी लगते हैं। डॉक्टर साहब बड़े ऊँचे गुजराती ब्राह्मण हैं।'' नानी ने, जो अपनी बेटी की बीमारी व आसन्न मृत्यु से दुःखी रहती थीं, बड़ी सरलता से उच्च कुलीन गुजराती ब्राह्मण, जो अकेला विदेश में पड़ा था, को अपना लिया।

ज्योतिषी ने माँ का चन्द्रमा 'वीक' बताया। हर पूरनमासी को ब्राह्मण जिमाना बताया। सो भगवान् ने कुलीन गुजराती ब्राह्मण भेज दिया था। भगवान् की बड़ी कृपा थी। डॉक्टर मुबारक को पूर्णिमा को जिमाया गया। चलते समय जब नानी ने दक्षिणा के बीस आने दिये तो पं. मुबारक ने बड़ी मासूमियत से पूछा-''का अम्मा यू पी म बहुत गरीबी है? हमरे गुजरात म तो पंडित क पाँच रुपिया से कम देब असगुन माना जात है।'' ब्राह्मण नाराज न हो इसलिये नानी ने तत्काल 5 रुपये का नोट पं. मुबारक को दिया। पंडित जी पाँच रुपया लेकर नानी के पाँव छूकर चले गये। बाद में पता चला कि उस पैसे से उन्होंने चाचा के साथ पिक्चर देखी (सन् 1958 में 2 रु0 में बालकनी का टिकट मिल जाता था)।

वे बड़े ही कठिन दिन थे। माँ को खून की कमी हो गई थी। हर हफ्ते खून चढ़ता था। नानी बूढ़ी थी हम दोनों भाई बच्चे थे। चाचा और पिताजी खून दे चुके थे। और खून की जरूरत कैसे पूरी हो। उस समय आज की तरह वालेन्ट्री डोनर या एन.जी.ओ. नहीं होते थे और न ही प्रोफेशनल डोनर्स का ही चलन था। किसी जरूरतमंद को पैसे देकर ही खून मिल पाता था। चाचा और पिताजी की तनख्वाह भी लम्बी छुट्टी की वजह से बन्द थी। ऐसे में डॉ0 मुबारक से परिचय दैवी कृपा से कम नहीं थी। मेडिकल कॉलेज के ब्लड बैंक से एक दो बोतल खून की व्यवस्था हो गई। परन्तु बाहर का दिया खून अपने शरीर के बने खून की तरह प्रभावी नहीं हो सकता। ब्लड देने के दौरान कई बार माँ की तबियत रिएक्शन की वजह से बिगड़ी। क्रिसमस की छुट्टियों की वजह से डॉक्टरों और नर्सों की कमी हो गई। तब डॉ0 मुबारक ही सहाय हुए। खुद उन्होंने ने ही माँ को आक्सीजन लगाई व कोरामीन का इन्जेक्शन देकर स्थिति को काबू में किया। खून चढ़ाते वक़्त वे नर्स को ताकीद करते कि एनीमिया के मरीज को खून बहुत धीमे चढ़ाना वरना दिल पर लोड पड़ेगा... आदि आदि।

डॉ0 मुबारक हमारे परिवार के महत्त्वपूर्ण सदस्य बन गये थे। हम सभी को उनकी आदत सी पड़ गई थी। शायद इसलिए कि उनके आने से माहौल कुछ हल्का हो जाता था। डॉक्टर साहब की उपस्थिति से हम लोग कॉन्फीडेंट महसूस करते थे। जिस रोज वह नहीं आ पाते तो मेरा भाई, जो कि मुझसे बड़ा था, डॉक्टर साहब को हॉस्टल से बुलाने भेजा जाता। एक रोज मुझे उन्हें बुलाने भेजा गया। बताए गए हास्टल के कमरा नम्बर में जब मैं पहुँचा तो उस कमरे में नेम प्लेट पर बड़ा बड़ा लिखा था 'डॉ0 मुबारक अली'। फाइनल ईयर एमबीबीएस। बाल बुद्धि ने तर्क किया। एकदम अलग नाम होने से शायद नाम गलत लिख गया हो। दरवाजा खोल कर अन्दर दाखिल हुआ। डॉ0 मुबारक गोल टोपी पहने नमाज पढ़ रहे थे। नमाज खत्म करके वे मुझसे बोले, ''दुर्गा, तुम चलो मेरा आज टेस्ट है मैं शाम को आऊँगा।'' मैं चुपचाप लौट आया। पिताजी को डॉक्टर साहब के इम्तिहान की बात बताई। पिता जी से यह राज शेयर करने की हिम्मत नहीं थी। बाद में चाचा से अकेले में बताया। चाचा ने कहा, ''हाँ, वह डॉक्टर मुबारक अली ही हैं। केवल नानी को समझाने के लिए तुम्हारे पिता जी ने यह नाटक किया

है। इसे ऐसे ही चलने दो किसी और से मत कहना।'' फिर वह दद्दा से बोले, ''तुम भी तो डॉक्टर साहब के हास्टल गये थे। पर तुमने यह नोटिस क्यों नहीं किया। देखो, छोटा कितना तेज है।'' दद्दा बोले, ''नोटिस मैंने भी किया था और समझ गया कि ऐसा क्यों किया गया। इसीलिये मैंने किसी से इसका जिक्र करना ठीक नहीं समझा।'' अब चाचा ने दद्दा की तारीफ करते मुझसे कहा देखो, ''यह कितना समझदार है।'' मैं तो दद्दा की समझदारी का पहले से ही कायल था। शायद इसी समझदारी की वजह से ही भगवान् ने ही मुझसे बड़ा बनाकर भेजा था पर, दद्दा ने इतनी सेंशेसनल खबर मुझसे शेयर नहीं की इस पर झुंझलाहट अवश्य हुई।

मेरे पास करने को कुछ भी नहीं था। इकोनमी की वजह से अखबार भी नहीं मँगाया जाता था। बहाना था कि पटना की लोकल न्यूज में कोई इन्ट्रेस्ट नहीं आता। मैं खाली बैठ नहीं सकता था। इसलिए कभी कभी नानी के साथ बैठकर किचेन में बातें करता। उनके खाना बनाने में हाथ बँटाता। कभी मैं माँ के पास बैठकर उनका दिल बहलाने की कोशिश करता। मेरी बातों से जब उन्हें ज्यादा हँसी आ जाती तो हँसते-हँसते एक दम से कराह उठती थीं और कहती, ''बेटा हँसाया मत करो। दर्द होने लगता है।'' उस समय तो नहीं पर कुछ साल बाद कुछ समझदार होने पर रात में कभी-कभी मुझे सपना आता रहा कि माँ अस्पताल की चारपाई पर दोनों हथेलियों पर अधलेटी हैं और पीड़ा भरे स्वर में कह रहीं है बेटा बहुत दर्द हो रहा है। मेरी नींद खुल जाती और उसके बाद सोना मुश्किल हो जाता।

सर्जन ने छुट्टी के बाद आकर ऑपरेशन करने को कहा था। परन्तु टाइम और डेथ किसी का इन्तजार नहीं करते। उन्हें जब आना होता है तब ही आते हैं। माँ के केस में यह समय 31 दिसम्बर 1958, की शाम 6 बजे का मुकर्रर था। ब्लड चढ़ रहा था। शायद तेज चल गया। माँ की साँसें उखड़ने लगीं। मैं मौजूद था परन्तु मैं 'डेथ रैटैल' (आसन्न मृत्यु के समय साँस की खड़खड़ाहट जिससे डॉक्टर बनने पर काफी परिचित हो गया) से उस समय परिचित नहीं था। अतः मैं स्थिति की नजाकत नहीं जान सका। पर नानी की घबराई आवाज ने मुझे नर्सेज रूम की ओर भागने को विवश कर दिया। नर्स आराम से आई, पर माँ की हालत देख वह भी भागी। कोरामीन व आक्सीजन लगाई। पूरी कोशिश की गई डॉक्टर भी आ

गया पर 'वैद्यं श्रीहरिः विष्णुः औषधं गंगोदकम्'। (इस परिस्थिति में वैद्य भगवान विष्णु और गंगाजल ही औषधि है अर्थात् अंत समय है) माँ के मुँह में गंगाजल डाला गया। उन्हीं के गले का मंगलसूत्र जिसे वह हमेशा पहने रहती थीं, को तोड़ कर तुलसीदल के साथ स्वर्ण कण डालने की परम्परा पूरी करी गई (चिता स्थान को स्वच्छ करने के निमित्त अन्तिम दान)।

डॉक्टर मुबारक उस समय कहीं बाहर थे। आने पर उन्हें बहुत अफसोस हुआ। फिर भी हम लोगों को समझाते हुए बोले, ''मेरे होने से भी कुछ न होता। मैं केवल आप लोगों को सन्तोष ही दे सकता था।'' मेरी नानी को जीवनपर्यन्त कसक रही। वह कभी-कभी रोकर कहतीं, ''अगर डॉक्टर मुबारक प्रसाद होते तो हमारी विद्या उस रोज तो बच ही जाती।''

मुझे और मेरे भाई को वहाँ से हटाकर मेरे फूफा जी के एक रिश्तेदार के यहाँ कर दिया गया था। उस रात हम लोग वहीं रुके। सुबह पहली जनवरी थी। उस परिवार में सब नये साल के मूड में थे किसी छोटी बच्ची ने हम दोनों की ओर इंगित कर के पूछा, ''क्या इन्हीं बच्चों की माँ मर गई है।'' सबने उसे जल्दी से चुप कराया। हमें एकदम से एहसास हुआ कि अब हम ''मातृ विहीन'' हो चुके थे।

पटना में गंगा उपलब्ध थी अतएव माँ का संस्कार वहीं कर दिया गया। हम सब लोग तो जान ही रहे थे पर नानी नहीं समझ पा रही थी कि कहने के बाद भी पं. मुबारक प्रसाद ने माँ की अर्थी को कन्धा क्यों नहीं दिया। शायद जीवित नानी को पंडित बन कर बहलाने में थोड़ी चुहल विनोद के साथ ही हमारे परिवार का भला ही था, पर मृतका के साथ वह कोई छल नहीं करना चाहते थे। किसने देखा है अल्ला जाने हिन्दुओं की मान्यता कहीं सच न हो कि तुर्क के कन्धा देने से ब्राह्मणी की सद्गति में बाधा आ जाये। उदारमना डॉ0 मुबारक अली को यह कभी मंजूर न था। यह डॉ0 साहब के व्यक्तित्व का स्वर्णिम पहलू था।

ऐसे ही उदारमना मुस्लिम बंधुओं के लिए लिखा है- अइसे तुरकन पै कोटिन हिन्दू वारिये।

''यही हमारी, गंगा जमुनी संस्कृति है।''

●